ISSN : 2278-6066
Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक और अंतरीप

मानव मुक्ति को समर्पित

❖ वर्ष : 20 ❖ अंक : 10 ❖ अक्टूबर-दिसम्बर, 2013

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

....सामने फैले हैं
तरह-तरह के काम
खिले हों जैसे तरह-तरह के फूल बगीचे में
मैं कुछ फूल चुनती हूँ
रखती हूँ अपनी टोकरी में
समय के तार में पिरोती हूँ इक-इक फूल
इस तरह गूँथती हूँ
सुबह से शाम
मेरे हाथ महक रहे हैं
मेरी नींद भी महकती है
इन्हीं फूलों से..... ।

अमिता प्रजापति

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

❖ त्रैमासिक/द्विभाषी ❖ वर्ष : 20 ❖ अंक : 10 ❖ अक्टूबर-दिसम्बर, 2013

G.M. College of Education Bantalab Jammu
Acc. No. 4707 13.12.2023

प्रधान सम्पादक
प्रेम कृष्ण शर्मा, 09414055811

सम्पादक
डॉ. अजय अनुरागी, 09468791896
डॉ. रजनीश, 09460762293

संपादकीय कार्यालय
1, न्यू कॉलोनी, झोटवाड़ा, पंखा, जयपुर-302012
ई-मेल : anuragiajay11@gmail.com

प्रबंधकीय कार्यालय
49, विवेक नगर, सिंधी कैम्प
स्टेशन रोड, जयपुर-302006

अग्निशेखर और क्षमा कौल द्वारा यह पुस्तक सप्रेम भेंट

मूल्य
एक प्रति : 25/-, वार्षिक : 100/-, आजीवन 1000/-

आवरण एवं रेखाचित्र : जहाँगीर कुरैशी

'एक और अंतरीप' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादक तथा प्रकाशक की वैचारिक सहमति आवश्यक नहीं है। संपादन, संचालन पूर्णतः अवैतनिक एवं अव्यावसायिक है। समस्त विवादों का केन्द्र जयपुर होगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनुक्रम

सम्पादकीय

उठाने होंगे खतरे — प्रेमकृष्ण शर्मा — 3

विशेष

जनवादी कहानीकार : अशोक सक्सेना — अजय अनुरागी — 5

प्रेत — अशोक सक्सेना — 15

स्मृति

राजेन्द्र यादव देवता नहीं थे — हेतु भारद्वाज — 26

बिज्ञी का लोक — नन्द भारद्वाज — 30

दस्तावेज

जहाँ लक्ष्मी कैद है — राजेन्द्र यादव — 33

लेख

बंगला लोक शिशु साहित्य में श्रीकृष्ण तथा ग्राम्य... — हरिश्चन्द्र मिश्र — 53

रचनाकार और चिन्तक डा. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय — डा. राममूर्ति त्रिपाठी — 75

साहित्यिक पत्रकारिता और मुख्यधारा की ... — डा. शिव शरण कौशिक — 80

कहानियाँ

एक नया सफर — डॉ. दया दीक्षित — 84

दूसरा सूरज — शीरीं नियाजी — 94

लघुकथा

छुट्टना — कृष्ण कुमार यादव 'कनक' — 100

A Short Novel

Tormented Petals (4th instalment) — Prem Krishna Sharma — 101

कविताएँ

पराधीनता मुक्ति का दिन — नंद चतुर्वेदी — 114

बड़ा आदमी — राजीव कुमार स्वामी — 116

सीख — राजीव कुमार स्वामी — 117

ज़िद्दी अहंकार — सतीश गुप्ता — 118

संडे मार्केट — हरदान हर्ष — 119

पुस्तक समीक्षा

संवादधर्मिता साक्षात्कार का सौन्दर्य है — डॉ. सुशील सिद्धार्थ — 120

स्त्री समस्याओं की कहानियाँ : समकालीन... — नीतू शर्मा — 122

पत्रकारिता के अछूते प्रसंग — डॉ. रेखा गुप्ता — 124

जीवन की बहुविध रंगतों का कोलाज — सवाईसिंह शेखावत — 126

पहाड़ी लोक संवेदना की कविताएँ — डॉ. एकता गोस्वामी — 130

पत्र-संवाद — 132

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

॥ सम्पादकीय ॥

उठाने होंगे खतरे

समय की क्रूरता की तीव्रता इतनी प्रबल है कि उसके सामने किसी तरह की मर्यादाएँ टिक नहीं पा रही हैं। कांग्रेस के उपाध्यक्ष राहुल गाँधी ने चार विधान सभाओं में हो रहे चुनावों से पूर्व प्रत्याशियों को टिकिट देने के लिए कुछ अर्हताएँ तय की थीं। बार-बार उनकी घोषणाएँ भी वे करते रहे। कांग्रेस में उनकी जो हैसियत है उससे लगा यही था कि इस बार कुछ अच्छे लोग चुनाव में उतारे जाएँगे। पर जब कांग्रेस प्रत्याशियों के नाम घोषित हुए तो स्पष्ट हो गया कि राजनीति की मूल्यहीनता के समक्ष राहुल गाँधी के वादे टिक नहीं पाये। जैसे उन्होंने घोषणा की थी कि किसी अपराधी या दागी को टिकिट नहीं दिया जाएगा, पर हुआ इस घोषणा के विपरीत। बाबूलाल नागर की जगह उसके भाई हजारीलाल नागर को, महिपाल मदेरणा की पत्नी लीला मदेरणा को, मलखान विश्नोई के स्थान पर अमरी विश्नोई को एवं स्वयं आंजना को प्रत्याशी बनाया गया। अमरी बाई की उम्र सिर्फ 82 वर्ष है जबकि संकल्प था कि यथासम्भव 65 वर्ष से अधिक के व्यक्ति को टिकिट नहीं दी जाएगी। इसी तरह और भी सारी मर्यादाएँ टूटी हैं पर किसे चिन्ता है? सभी वर्ग राजनीति करने और उससे मिलने वाले लाभों की चिंता में व्यस्त हैं।

मैं यह कहकर संतोष भले ही कर लूँ कि इस घोर अंधकार में भी साहित्यकार वर्ग मशाल बनकर उजाला कर रहा है। पर यह पूरा सच नहीं है- समय का प्रभाव इस वर्ग पर भी है। हम देख रहे हैं कि बहसें अब जीवन के सवालों पर नहीं हो रहीं बल्कि व्यक्तियों के कारनामों पर हो रही हैं। स्त्री विमर्श का प्रदूषण इतना फैला है कि सारी चिन्ता यौन संबंधों तथा देह स्वातंत्र्य तक सिमट गयी है। दलित विमर्श का आधार जाति आधारित घृणा बन गया है, आदिवासी विमर्श वाले गर्व कर रहे हैं कि देश में सबसे अधिक संघर्ष आदिवासियों ने ही किया है। भारतीय समाज की बात कोई नहीं कर रहा है। साम्प्रदायिकता पर एकांगी विचार हो रहे हैं। हर दृष्टि से समाज विभाजित होता जा रहा है। साहित्यकार भी जातिवाद का शिकार हो रहे हैं। हर पुरस्कार, हर सम्मान अब विवाद की वस्तु बनकर रह गया है। गत दिनों 'लमही सम्मान' को लेकर जो विवाद हुआ और मनीषा कुलश्रेष्ठ ने यह सम्मान लौटा दिया, वह दुर्भाग्यपूर्ण था। इसलिए भी कि इस विवाद को उठाने वालों में प्रेमचंद परिवार के व्यक्ति थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वस्तुतः सारे सम्मान-पुरस्कार अप्रासंगिक होते जा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा कारण यह भी है कि इनके निर्णय केवल 'कुछ बड़े लोगों' के हाथ में सिमट कर रह गये हैं। दिल्ली में रह रहे कुछ बड़े (महान नहीं) लेखक हैं जो हर निर्णय को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं। इसलिए हर मुद्दे पर उन्हीं से राय माँगी जाती है। ये लोग पदों के पीछे किस तरह उठापटक कर रहे हैं यह म.गां.अं.हि. विश्वविद्यालय वर्धा के कुलपति के चयन की प्रक्रिया से समझा जा सकता है। न किसी को अपनी असफलताओं पर शर्म आ रही है, न कोई मर्यादाओं का पालन करने की कोशिश कर रहा है। इस वि.वि. के नाम में दो तत्व महत्त्वपूर्ण हैं- गाँधी और हिन्दी। अब तक जो भी कुलपति बने हैं न गाँधीवादी रहे न हिन्दी के प्रति पूर्णतः समर्पित। पर निर्णय तो उन 'कुछ बड़े लोगों' के हाथ में है। पूरे हिन्दी समुदाय तथा साहित्य की नियति ये लोग ही तय कर रहे हैं। हर लेखक के पास अपने लिए मशाल है दूसरे उससे प्रकाश नहीं ले सकते। यदि ये प्रकाश देंगे भी तो कुछ मेहनताना वसूल करेंगे। इसलिए हमारा वर्तमान साहित्यिक परिदृश्य बहुत निराशाजनक है।

पर क्या करें- उम्मीद तो हमें इसी वर्ग से है। बुरी से बुरी स्थिति में भी यही वर्ग सबसे समझौते कर रहा है। अगर ये पुरस्कार, सम्मान, संस्थानों के पद आदि कुछ काल के लिए बंद कर दिये जाएँ तो शायद लेखक को अपने मुख्य कर्म के बाबत सोचने की फुर्सत मिले। मैं तो यही कामना कर सकता हूँ कि रचनाकार/कलाकार वर्ग ही है जो सारे खतरे उठा सकता है, जो समाज का हरावल दस्ता बन सकता है, समाज की शक्ति बनकर उसे गर्मी दिखा सकता है। पर यह तभी होगा जब उसे अपने हथियारों पर भरोसा होगा। वह छोटे प्रलोभनों से दूर रहेगा। समाज के किसी एक वर्ग की नहीं पूरे समाज के विकास की चिन्ता करेगा।

पिछले अंक में हमने कुलदीप शर्मा की प्रथम कहानी छापी थी। हम प्रयास करेंगे कि 'नयी कलम' स्तम्भ में नये लेखकों की रचनाएँ छापें। युवा लेखक इस स्तम्भ के लिए रचनाएँ भेजें। स्वागत है।

इस बीच बहुत सारे रचनाकार हमें छोड़कर चले गये- वरिष्ठ साहित्यकार हंस के सम्पादक राजेन्द्र यादव, अप्रतिम लोक कथाकार विजयदान देथा उर्फ बिज्जी, बाल साहित्य के पुरोधा हरिकृष्ण देवसरे, वरिष्ठ तथा वर्तमान आलोचना के स्तम्भ परमानन्द श्रीवास्तव, दलित रचनाकार और चिंतक ओमप्रकाश वाल्मीकि, राजस्थान के अग्रणी रचनाकार औंकारश्री तथा विश्वम्भर व्यास। इन सभी के प्रति अंतरीप परिवार अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

प्रेमकृष्ण शर्मा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जनवादी कहानीकार : अशोक सक्सेना

अजय अनुरागी

अभावग्रस्त जिंदगी के खटराग को स्वाभाविक ढंग से कहानियों में रचने वाले अशोक सक्सेना मध्यवर्ग एवं निम्न-मध्य वर्ग की चिंताओं एवं बेचैनियों को अपनी कहानियों में समेटते रहे हैं।

यद्यपि उन्होंने बहुत कम कहानियाँ लिखी हैं। तथापि जो भी कहानियाँ लिखी हैं उनमें लेखकीय उद्देश्य स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। फुर्सत से कहानियाँ लिखने वाले अशोक सक्सेना में लेखकीय जल्दबाजी नहीं है। ऐसा लगता है कि वे कहानियाँ लिखने के लिए नहीं बने हैं अपितु कहानियाँ उनके लिखने को बनी हैं। तभी तो वे जिस शहर में जाते हैं कहानी उनके साथ जाती है। वे जहाँ रहने लगते हैं कहानी उनके साथ रहने लगती है। उनके व्यक्तिगत अनुभव भी कहानी का हिस्सा बन गये हैं। कहानियों को ढूँढ़ने के लिए उन्हें परिवेश को खँगालने की जरुरत नहीं पड़ी है बल्कि स्वयं से जुड़ी घटनाएँ ही इतनी प्रभावशाली रही हैं कि वे सशक्त कहानी के रूप में आकार पा सकी हैं।

23 दिसम्बर 1953 को जन्मे अशोक सक्सेना ने 1977 में एम.ए. करने के बाद आजीविका के लिए राष्ट्रदूत, अणिमा, सांध्य ज्योति दैनिक आदि समाचार पत्रों में काम किया। कुछ समय शिक्षण संस्था में भी कार्य किया। सन् 1980-85 के मध्य रंगमंच से जुड़ाव रहा तथा जन नाट्य मंच के कई नाटकों का निर्देशन एवं अभिनय किया। 1985 में नव भारत टाइम्स में उनकी पहली कहानी ''ओवर एज'' प्रकाशित हुई। सन् 1994 में पहला कहानी संग्रह ''उसका मरना'' प्रकाशित हुआ, रचना प्रकाशन, जयपुर से।

अशोक सक्सेना को लिखने की भी जल्दबाजी नहीं रही है तो छपने की भी जल्दबाजी नहीं रही है। इन दिनों उनका एक कहानी संग्रह, एक उपन्यास और अस्तित्ववाद पर आलोचनात्मक पुस्तक प्रकाशनाधीन है। सन् 2003 में पुत्र शोक संतप्तता के कारण उनका लिखना-छपना बंद पड़ा था। अब 2013 में दस साल बाद पुनः लेखन आरम्भ हुआ है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहानीकार अशोक सक्सेना की कहानियाँ प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं, हंस, कथादेश, अक्सर आदि में प्रकाशित होती रही हैं। ''प्रेत'' आदि कुछ कहानियों का मराठी में अनुवाद भी हुआ है।

घर और परिवार के भीतर उत्पन्न द्वन्द्व और तनाव का धुआँ किस तरह फैलकर आँखों में जलन और साँसों में घुटन पैदा करता है और उससे त्रस्त प्रत्येक पारिवारिक सदस्य छटपटाहट और पीड़ा का अनुभव करता रहता है, यह सब अशोक सक्सेना की कहानियों में मौजूद है। पिता-पुत्र, पति पत्नी, पड़ौसी-मित्र, मालिक-मजदूर, कर्मचारी-अधिकारी आदि के मध्य रिश्तों की ऊब, खीझ, टीस, खिंचाव को स्वाभाविक रूप में देखा जा सकता है।

अशोक सक्सेना की कहानियाँ घर के भीतर की मनोदशा का चित्रण करती हैं, जहाँ आपसी बातचीत में मन के भीतर उबल रही, खदक रही भावनाएँ आकार पाती हैं। अशोक अपनी कहानियों में लम्बी दूरी तय नहीं करते हैं बल्कि घर, परिवार, पड़ौस या कार्यस्थल तक ही सीमित रहते हैं मगर यह सीमितता उस स्थल का पूरा विश्लेषण करती चलती है। जो कहानी को सशक्त बनाती है।

वर्तमान में गरीबी की दशा को झेलते हुए तथा भविष्य में अस्थायित्व की आशंका के भय से एक पिता अपने दो जवान बेरोजगार बेटों के प्रति झुंझलाहट और गुस्से को अपनी पत्नी पर उतारता है। यह झुँझलाहट और गुस्सा मध्यवर्गीय, निम्न-मध्य वर्गीय परिवारों की आम घटना है। जहाँ चौबीस घंटे पारिवारिक सदस्यों के बीच घुटन भरा वातावरण बना रहता है। ''ओवर एज'' कहानी में एक पति गुस्से, झल्लाहट को अपनी पत्नी पर उतारते हुए दोनों बेटों की हरामखोरी पर खीझता रहता है और पत्नी बेहद ठंडी होकर अपने खोटे नसीब को कोस कर रह जाती है। कहानीकार इस पूरे दृष्य को जीवंत बनाने में जुट जाता है। ''अम्मा चौके में बर्तन माँज रही थी। पिताजी हम दोनों भाइयों के निकम्मेपन को झींकते रहे और अम्मा जैसी कि उसने आदत बना ली थी। चुपचाप सुनती रही। प्रतिवाद करने की ताकत वह कब की खो चुकी थी। पिताजी जब दस बार पूछते तब वह किसी बात का एक बार जवाब देती। मैंने कभी अम्मा को बहुत खुश नहीं देखा। वह बहुत किफायत से चलती। कम से कम खर्च में पति और बच्चों को अच्छा खिला-पहना सके, उसके लिए इससे बड़े सुख की कोई बात न थी। काफी कतर ब्यौंत करने के बाद महीने के अंत में वह थोड़े बहुत रूपये बचा पाती, लेकिन उसका यह संतोष सुख कुछ दिनों ही रहता। वह शायद हमेशा सोच विचार में ही डूबी रहती और जो सोचती, वह कभी पूरा नहीं होता था। इसी मृगतृष्णा में उसकी उम्र कट रही थी।''

भारतीय परिवारों में बेटों की हरामखोरी हो या पति की नशाखोरी, सबका ठीकरा स्त्री के सिर फूटता है। उसी से उम्मीद की जाती है कि विषम एवं विपन्न

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परिस्थितियों में वह सबकी देखभाल करे, सबको सहारा दे, सबकी इच्छाओं की पूर्ति करे। सबके क्रोध को सहन करे, सहन भी चुपचाप करे। ये ही वे परिस्थितियाँ हैं जिनमें रहते हुए एक स्त्री ठंडेपन की शिकार होकर उम्र को काटने लगती है। वह परिवार के सदस्यों में संतुलन बनाते-बनाते खुद असंतुलित होकर बीमार और बेकार हो जाती है। एक स्त्री का परिवार में यह अस्वाभाविक विलयीकरण है जिसे स्वीकारना उसकी नियती बन जाती है। बेरोजगारी की पीड़ा को बयान करती ''ओवर एज'' कहानी में बेटा, अपने पिता की सेवानिवृत्ति से पहले मृत्यु के बारे में सोचने लगता है। जिसमें मृतक कर्मचारी की एवज में उसे नौकरी मिल सके। मजबूरियाँ व्यक्ति को धीरे-2 खोटा बना देती हैं। ''पलोथन'' कहानी की मालती भी उसी दर्जे की स्त्री है। जिसमें खींचतान कर गृहस्थी को चलाया जाता है। मध्यम दर्जे में घर को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने के लिए बहुत से खर्चों में से कटौती करनी पड़ती है। लल्लन बाबू एल.टी.सी. से पन्द्रह दिन की छुट्टियाँ लेकर सपरिवार जम्मू कश्मीर की यात्रा पर जाने के लिए ट्रेन के फर्स्ट क्लास के सात टिकिट ले आते हैं। मालती को फर्स्टक्लास का किराया लगाकर जाने पर एतराज है तथा शीनू और बॉबी के पूरे-पूरे टिकिट लेने पर उसे आपत्ति होती है। वह यहाँ भी रुपयों को बचाना चाहती है।

श्रीनगर पहुँचकर खुशगवार मौसम देखकर लल्लन की सफर में हुई बोरियत और खर्च की चिंता दूर हो जाती है। आज पहली बार उन्हें सुख का अहसास होने लगता है। उन्हें जिन्दगी में आम आदमी की तरह सुख कम ही मिल पाये थे। उन्होंने गाँव में तंगी का अनुभव किया था। यहाँ श्रीनगर में होटल के कमरे का किराया और खाने की रकम उनकी हैसियत से ज्यादा थी इसलिए उन्हें एक रात वहाँ गुजार कर दूसरे दिन सामान्य धर्मशाला में ठहरना पड़ा। खर्चे के कारण अप्रसन्न एवं अव्यवस्थित मालती को कश्मीर आकर भी अच्छा नहीं लग रहा था। लल्लन बाबू मालती पर खींझते हैं किन्तु वे यह भी जानते हैं - ''मालती के सोचने का अपना तरीका है जो शायद हर स्त्री का होता है। पुरुषों की वनिस्पत स्त्रियाँ अधिक व्यावहारिक होती हैं। प्रायः पुरुष हवाई किले बनाने में माहिर होते हैं। वे वैसा आचरण भी कर बैठते हैं और परिणाम सारे परिवार को ही भुगतना पड़ता है। इसके विपरीत स्त्रियाँ जीवन की मूल समस्याओं से सीधे-सीधे जुड़ी रहती हैं। इसलिए उन समस्याओं को उनसे बेहतर और कौन समझ सकता है।''

कश्मीर में रहने खाने, घूमने के खर्चों को देखते हुए मालती निर्धारित समय से पूर्व ही लौटने की कहती है। वह जानती है ''क्या फायदा तुम्हारे इस एल.टी.सी. से / रोटियों से ज्यादा आटा पलोथन में लग गया।''

''प्रेत'' कहानी की ''जिया'' भी एक ऐसी औरत है जो शराबी पति की तमाम बेवकूफियों को सहन करते हुए बच्चों की पढ़ाई एवं पोषण के लिए खटती रहती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर भी उसके तीन बच्चों को पढ़ाई छोड़नी पड़ती है। दारू पीने और गली वालों के लिए तमाशा बनने वाले पति को भी जिया सहन करती रहती है। यही नहीं पति के लात-घूँसों को भी झेलती रहती है। उसका बेटा यह दृष्य देखकर पिता का गला दबा देने की सोचता रहता है। किन्तु जिया कुछ नहीं कहती। परिवार में स्त्री पर अपनों के द्वारा जो अत्याचार हो रहे हैं, उसकी तस्वीर अशोक सक्सेना की कहानियों में दिखायी पड़ती है।

चाहे मन की विकृति हो या लोलुपता, दिखावे के लिए किया गया ढोंग हो या दूसरे का माल हड़पने का हथकंडा, साम्प्रदायिक वैमनस्य हो या जातीय द्वेषता, हर स्थिति पर कहानीकार की नजर पहुँची है। सरकारी काम काज की रिश्वत खोर शैली हो या ऊँचे रसूखात के चलते सरकारी जमीन पर कब्जा करना हो, सर्वत्र हो रहे चारित्रिक पतन को अशोक सक्सेना दर्शाते हैं। कहीं-कहीं इन कहानियों में व्यंग्य झलकता है। जहाँ-जहाँ विसंगति है वहाँ-वहाँ लेखक की शैली भी व्यंग्यमयी हो गयी है।

समाज में निम्न जातियों को दबाकर रखने की प्रथा लोगों के मन में आज भी समायी हुई है। लोग उन्हें आर्थिक रूप से भी दबाना चाहते हैं। समय के अनुसार उसकी मजदूरी में बढ़ोतरी को भी अवैध मानते हैं। ''प्रपंच'' कहानी में शास्त्री जी और जमाँदार कलुआ के बीच तू-तू-मैं-मैं हो जाती है। कलुआ रुपया बढ़ाने की बात कहता है तो शास्त्री जी आग बबूला हो उठते हैं।

''किस बात के पैसे बढ़ाता है तू। एक दिन आता है और दूसरे दिन गायब और आता है तो कौन सा निहाल करता है। झाडू के दो हाथ इधर मारे दो उधर और चल मेरे भाई। हो गया बस काम। मुँह मुफति लग रही है न। पैसे बढ़ा दो साब। जैसे यहाँ हराम की कमाई आ रही है।''

''अपने धरम की कमाई अपने पास रख पण्डत। फिर भी पूर नीं पड़ती हो तो डलिया-झाडू उठाकर साथ चल्या चल। पाँच क्या पचास रपिया माहवारी तो दे ही दूँगा।''

''अबे मर गये साले देने वाले। तेरे जैसे कुत्तों को मेरे यहाँ रोटी भौत है.....।''

''ई बंदर घुड़की कोई मोटी गाँठ के जिजमान पै झाड़ियो पंडत। हियां सवेरे ते संझा झाडू देते कमर कमानी है जाय। तेरे जैसे हराम खाऊ....।''

इस संवाद में साफ झलक रहा है कि सामाजिक रूप से दबे व्यक्ति को आर्थिक रूप से भी दबाया जाता रहा है। वह जब-जब मजदूरी बढ़ाने की कहता है उसे तब-तब घुड़क दिया जाता है। बात आगे बढ़ती है और पुलिस थाने में रिपोर्ट दर्ज हो जाती है। शास्त्री जी को बंद कर लिया जाता है। इस तरह शास्त्री जी को पहली बार अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गलती का अहसास होता है। इस अहसास को कराने में कानून का बड़ा हाथ रहा है। कलुआ का रोष जायज है उसे वह गंदगी साफ करनी पड़ती है जो प्रतिदिन समाज फैलाता है। गंदगी को साफ करते-करते वह खुद गंदा हो चला है। उसकी पीड़ा तब बह निकलती जब उसे लोग समझाते हैं कि छोटे-बड़े का लिहाज करके तो बोलाकर। वह कहता है- ''पन इस पेट का लिहाज कैसे रक्खूँ बाबूजी। पाँच रुपया महीना और सूखी रोटी। महँगाई के टैम में या से का होवे। पन हम वो नरक उठाते हैं। पन पाँच रपिया देने से इनकी मइया मर रही है। आज तक तीन रपल्ली देते चले आ रिये हैं। जब रपिया बढ़ाने की कहूँ तभी मिर्चा लग जावै। मैं इकल्ला तो रपिया बढ़ा नी रया। सारे सहर में जमादारों के पैसे बढ़ गिये हैं।''

पुलिस थाने में जब राजीनामा होता है तो कलुआ कहता है हमारी शास्त्री जी से कोई लड़ाई नहीं है। बस दो रुपये माहवारी के बढवा दें। इधर शास्त्री जी कार्यवाही के डर से दो रुपये बढ़ाने पर सहमत हो जाते हैं। समाज में असली विवाद तब पैदा होता है जब श्रमिक का वाजिब हक मारा जाता है। अब तक अधिकारों से वंचित होने के कारण यह तबका दमित-गलित बना रहा है। कानून ने इन्हें सहारा दिया है और अधिकारों के प्रति जागृत भी किया है।

एक अन्य कहानी ''मरभुक्खे'' में भी काम ज्यादा बढ़ने पर महरी साठ रुपये की जगह सत्तर रुपये पगार में कराना चाहती है। यहाँ दस रुपये बढ़ाना भी मालकिन को भारी जान पड़ता है। जब वह काम करने की स्थिति में नहीं होती है तो अपने बच्चों को भेज देती है। मालकिन इन बच्चों को एक दिन बासी-खराब दाल घर ले जाने को देती है जिसमें बदबू आ रही होती है। बच्चे सूँघकर उसे ले जाने से मना कर देते हैं। इस पर मालकिन की प्रतिक्रिया उसके भीतर छिपे द्वेष को प्रकट करती है- ''खुन्नस तो देखो मरभुक्खों की। ताजा दाल को खराब बता रहा था। अम्मा कुढ़कर बोली,- नीलू ये दाल बाहर कुत्तों को डाल देना। फेंकने से अच्छा है किसी जानवर का पेट भरेगा।''

सवाल उठता है, क्या हम देने के नाम पर अच्छी और ताजा चीज नहीं दे सकते हैं? यह ध्यान रखना जरुरी है कि जो अच्छा और ताजा खा नहीं सकते हैं वे बासी और खराब को जानते जरूर हैं। क्या उनकी विवशता का मजाक उड़ाना उचित है? ऐसे ही कई प्रश्न अशोक सक्सेना की कहानियाँ उठाती हैं।

कुछ कहानियाँ साम्प्रदायिक समस्या की ओर भी इशारा करती हैं। ''उसका मरना'' कहानी में अपनी भतीजी के रिश्ते के मामले में अलीगढ़ आए तनवीर साहब शहर में कर्फ्यू लगने के कारण फँस जाते हैं। आठ दिन बाद कर्फ्यू पास बनवाकर वे स्टेशन पहुँच जाते हैं और ट्रेन में बैठ जाते हैं। ट्रेन में सवारियाँ कम थीं। तभी दरवाजे पर चलती ट्रेन में खट्-खट् हुई और चार जने नरभक्षी बाघ शिकार की टोह में घुस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आये। वे एक-एक से नाम, गोत्र, परिवार के बारे में पूछते और संतुष्ट होने पर उसे पीट-पीटकर मार डालते। तनवीर साहब के साथ भी यही हुआ। खुखरी उनकी पसलियों में उतार दी गयी थी। हमारे लिए साम्प्रदायिकता की समस्या भी बड़ी समस्या है। इसके पीछे कट्टरता का जुनून छिपा है जो सबका सुख-चैन लील जाता है। जबकि सामान्य तौर पर ऐसा नहीं होता है। इस पर सोचना जरूरी है- ''ये जुनून क्यों है? आम जिंदगी में एक-दूसरे की जरूरत और जज्बात से गुँथे लोग यकायक इतने वहशी क्यों हो जाते हैं? मुद्दत से चले आ रहे ताल्लुकात चंद लम्हों में राख क्यों हो जाते हैं?''

स्वतंत्रता के बाद विभाजन की त्रासदी पर भी ''अब्बू'' कहानी प्रकाश डालती है। ''दिल्ली में जब लोग आजादी के जश्न में डूबे थे तब गाँधीजी बंगाल के नोआखाली में दंगों को बंद कराने पहुँचे थे। पूरे देश में यही हालात थे। एक तरफ आजादी मिलने की खुशी थी तो दूसरी तरफ विभाजन से उपजे सांप्रदायिक दंगों का दर्द था।'' इस आजादी ने लाखों हिंदू, मुसलमानों, सिक्खों को तबाह कर दिया था। उसी समय दिल्ली में रहने वाले खान साहब का परिवार मुल्क छोड़कर जाने को तैयार हो जाता है। अपनी भरी पूरी हवेली और कालीन-गलीचे बनाने के कारखाने को छोड़कर यह परिवार रातों रात वहाँ से निकल जाता है। केवल खान साहब रह जाते हैं जो दंगाइयों द्वारा पीटने, प्रताड़ित करने के कारण एक दिन कहीं चले जाते हैं। जिस हिन्दू परिवार में उन्हें शरण मिली थी। उसका पुत्र उन हमलावरों के साथ था। यह कहानी भावनात्मक स्तर पर साम्प्रदायिक द्वेष-बेल के फैलने की प्रक्रिया को भी स्पष्ट करती है।

अशोक सक्सेना की कहानियाँ सामाजिक रूढ़ियों एवं विसंगतियों पर भी प्रहार करती दिखायी पड़ती है। कहानी ''एल्सेशियन'', ''रहम दिल'', ''सफर'', ''और बाप मर गया'', ''दो साहित्यकारों की कथा'', ''दस्तूरी'' आदि ऐसी ही कहानियाँ हैं।

''और बाप मर गया'' में दिवंगत राजनेता के पुत्र खैरातीलाल एवं देशराज दोनों अपने पिता की छवि का लाभ लेने के लिए लालायित हैं। पिता की राजनीतिक विरासत को दोनों हथियाना चाहते हैं। पिता के मरने का दोनों को कोई दुख नहीं है बल्कि उनकी जगह टिकिट पाने की जुगत में लग जाते हैं। आने वाले लोग भी दो महीने बाद होने वाली चुनाव चर्चाओं में मशगूल हैं। शोक की स्थिति में भी दिखावे की रस्म चरम पर हैं- ''बड़े हाल में दीवार के सहारे चौकी पर बाबूजी की तस्वीर को सजाकर इस प्रकार रखा गया था कि हाल में घुसते ही सबसे पहले नजर तस्वीर पर जाती, तीन इंच के चौकोर और मजबूत फ्रेम में, शीशे से जड़ी तस्वीर में बाबूजी पूर्ण सदाशयता से मुस्करा रहे थे। माथे पर भूरे रंग की चंदनी बिंदी और ताजा गुलाब के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फूलों का हार डालकर तस्वीर के सामने चाँदी की कटोरी में दीपक प्रज्ज्वलित कर दिया गया था, इस तरह उन्हें दिवंगत समझ लेने की समस्त औपचारिकताएँ पूरी कर ली गयी थीं।''

''कुत्ता'' कहानी में चौधरी साहब अम्मा को गाँव से शहर ले आते हैं लेकिन अम्मा को रात में सोने की जगह नहीं मिल पाती है। न उनका बेटा, न बेटी और ना ही पत्नी उन्हें अपने कमरे में सुलाने को तैयार होते हैं। ''तीनों में से कोई भी अम्मा को एडजस्ट करने के लिए तैयार नहीं था। अजीब बात है। इतने बड़े घर में एक बूढ़े व्यक्ति को पाँव फैलाने भर की जगह नहीं मिल रही थी। भीषण गर्मी में बालकनी, लॉबी में भी उनकी व्यवस्था नहीं हो पाती है। अन्त में टीनशैड में अम्मा की चारपाई डाल दी जाती है और टीन शैड में रहने वाले कुत्ते को बैडरूप में रख लिया जाता है। मानवीय संवेदना का ह्रास इससे अधिक और क्या होगा?

ऐसी ही एक अन्य कहानी ''औकात'' में कहानीकार ने मानवीय वृत्ति को उभारा है। टैक्सी चालक ब्रजकिशोर की टैक्सी में सर्द रात में एक मुसाफिर बैठता है उसकी अटैची टैक्सी में ही छूट जाती है। जिसमें चालीस लाख रुपये होते हैं। टैक्सी ड्राइवर काफी सोच विचार करके वह अटैची निर्धारित व्यक्ति को देने रात ही को पहुँच जाता है। वापस आकर वह ढाबे वाले से चाय और क्रीमरोल लेता है तथा पचास का नोट उसे दे देता है। किन्तु ढाबे वाला सौ रुपये समझकर एक चाय और दो क्रीमरोल के पैसे काटकर सत्यासी रुपये उसे लौटा देता है। वह रुपये लेकर खुश होता है। यहाँ टैक्सी ड्राइवर का द्वन्द्व दिखायी पड़ता है। एक तरफ वह चालीस लाख रुपयों को लौटाकर ईमानदार होने की मिसाल बनता है तो दूसरी ओर पचास की जगह सौ रुपये बताकर ढाबे वाले से पंचास रुपये कमाकर बेईमानी का परिचय देता है। यह द्वन्द्व स्पष्ट करता है कि गरीब एवं थोड़ी पूँजी वाले को ठगना आसान होता है और खतरा भी कम होता है। बड़ी पूँजी वाले को ठगने में खतरे अधिक होते हैं।

व्यवस्था में भ्रष्टाचार की बात करें तो ''दस्तूरी'' कहानी सशक्त तरीके से व्यक्ति एवं व्यवस्था की विसंगतियों-विद्रूपताओं को उभारती है। राजस्थान के एक कस्बे का युवा दिल्ली में नौकरी लगता है। यहाँ जीवन के नये रंग-ढंग देखने का अवसर मिलता है लेकिन जल्दी ही वह समझ जाता है कि यहाँ भी नया कुछ नहीं है- ''सभी जगह इंसान एक जैसे होते हैं। उनकी प्रवृत्तियाँ और स्वार्थ एक से होते हैं। फर्क पड़ता है तो महज हालात का, जो इंसान को एक खास किस्म की जिन्दगी जीने को मजबूर करते हैं।''

यहाँ आफिस में काम करते हुए वह साथियों के टुच्चेपन को भी समझ जाता है। केवल एक व्यक्ति मणि ऐसा था जो अपनी सीट पर बैठकर काम करता रहता था। यहाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रिश्वत के रुपयों को बाँटकर प्राप्त करने की प्रथा दस्तूरी का चलन था। मणि दस्तूरी नहीं लेता था। बाकी लोग बिना दस्तूरी लिये किसी का काम नहीं करते थे। दस्तूरी के लेनदेन को वे सभी उचित मानते हैं- ''इसका सहारा न हो तो आज की मँहगाई में न तो बच्चों को पढ़ाया जा सकता है, न बीमार पड़ने पर इलाज कराया जा सकता है।''

एक दिन मणि सेवानिवृत्त हो जाता है। रिटायरमेन्ट पर वह आफिस में सादा पार्टी देता है। कहानीकार इस दृश्य को अपनी तरह से उभारता है- ''आज उसका रिटायरमेन्ट था लेकिन न कहीं फूलमालाएँ थीं न रंग गुलाल और न फेयरवेल पर उपहार देने की कोई और रस्म। शाम पाँच बजे लोगों से हाथ मिलाकर मणि रोज की तरह ऑफिस से रवाना हो गया। पीछे छोड़ गया केन्द्र सरकार में बिताए गए अपनी जिंदगी के चालीस साल। मणि के रिटायरमेन्ट पर तरह-तरह के फिकरे सामने आ रहे थे। जैसे- ''ही वाज ए डेड ऑनेस्ट पर्सन, बट मोस्ट वान्टेड पर्सन ऑफ दा सिस्टम।'' इसके बाद मणि की पेंशन और ग्रेच्युटी की फाइल उसी सेक्शन में रुक जाती है जिसमें उसने चालीस साल काम किया था। वह ऑफिस आकर केस सेटल के लिए कहने लगा। बिना दस्तूरी के किसी ने भी काम करने की हामी नहीं भरी। ''जिनका एडवांस आ चुका है पहले उनका काम होगा कि मुफ्तखोरों का? ठीक है मणि अपना कलीग रहा है, पर सिस्टम भी तो कोई चीज है कि नहीं। .... ऐसा करते हैं औरों से एक परसेन्ट लेते हैं आप उससे आधा परसेन्ट दिला दो। एक हफ्ते में चेक न बनवा दूँ तो कहना।'' यह कैसी विडम्बना है कि जिस व्यक्ति ने चालीस साल ईमानदारी से दस्तूरी बिना ही काम किया आज उसी से अपने काम के लिए दस्तूरी माँगी जा रही है। इस पूरी की पूरी भ्रष्ट व्यवस्था में हम अपने स्वार्थ के लिए बेईमानी को व्यवस्था का अंग समझने लगे हैं। सरकारी कार्यालयों में इस परम्परा को निरन्तर बल मिल रहा है। ''लालच और स्वार्थ इंसान को कितना नीचे गिरा देते हैं मणि का केस और हमारे सेक्शन का माहौल इसकी एक मिसाल था।''

यह कहानी इस व्यवस्था को बदलने का मार्ग भी प्रशस्त करती है। परेशान मणि ने पेन्शन सेक्शन में चल रही धाँधली विभाग के सेक्रेटरी को पत्र लिखकर बयान कर दी। उसमें नामजद तीन-चार लोगों के नाम शिकायत भी दर्ज थी। साथ ही उसने ऑफिस के सामने आत्मदाह की परमीशन भी माँग ली। तब शासन ने एक ही दिन में तीन-चार को सस्पेंड करके दो-एक को ए.पी.ओ. कर दिया। इस तरह तीन दिन में मणि का केस सैटल हो गया। उसे ग्रेच्युटी का पैसा मिल गया और अगले महीने से पेन्शन भी शुरू हो गयी। ''दस्तूरी'' कहानी बदलाव के लिए साहस, सूझबूझ की पैरवी भी करती है।

अशोक सक्सेना ने एक कहानी ''बिल्लू चुप है'' में सन् उन्नीस सौ चौरासी में इंदिरा गाँधी की मृत्यु पर हुए दंगों के प्रभाव को भी दर्शाया है। देशभर में सिक्ख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सम्प्रदाय के लोगों को संदेह की नजर से देखा जाने लगा था। जगह-जगह उन्हें तहस-नहस किया गया। सरदारों को गद्दारों के रूप में मान्यता दी जाने लगी। उनके घरों-दुकानों पर हमले हुए। आगजनी की गयी। वर्षों साथ रहने वाले भी इस घटना के बाद सरदारों के विरोधी हो गये। यह कहानी एक प्रश्न सबके समक्ष छोड़ जाती है- "जितने लोग चौरासी के दंगों में मारे गये, उनके हत्यारों में से कितने को सजा हुई।"

अशोक सक्सेना श्रमिकों और पीड़ितों के पक्षधर लेखक हैं। उनकी कहानियों में श्रमिक वर्ग के कई चरित्र बिखरे हुए हैं। उन्हें बरसात में महीने भर से घर बैठे मकान मिस्त्री होतीराम की भी चिंता है- "मजदूर आदमी का बिना कमाए एक महीने तक गृहस्थी की गाड़ी खींचना मजाक बात नहीं है। रोज कुआ खोदकर पानी पीना पड़ता है। एक महीने के करीब निठल्ले बैठे रहना किसे कहते हैं- आँखें बाहर निकल आती हैं।" इन श्रमिकों की ईमानदारी एवं परिश्रम पर संदेह करने वालों को भी कहानीकार निशाने पर लेता है। यह कहानी उनको "थप्पड़" मारने जैसी है।

स्त्री के प्रति अश्लील सोच एवं विकृत मानसिकता को "सफर" कहानी आसानी से स्पष्ट करती है। मुडिया पूर्णिमा पर गिर्राज जी की परिक्रमा को जाने वाले ट्रेन यात्रियों की मानसिकता का सचित्र वर्णन किया है। इस लम्पटता में बूढ़े भी पीछे नहीं है। ऐसा ही एक दृश्य वे खींचते हैं-

"भीड़ में फँसी एक लड़की चारों और खड़े लोगों से अपने बदन को बचाने के प्रयास में छुई-मुई हुई खड़ी थी। उससे सटकर खड़े एक अधेड़ व्यक्ति की कोहनी बार-बार उसके वक्ष से रगड़ जाती थी। अलग हटकर खड़े होने के प्रयास में वह भीड़ में और गहरे धँस गयी।

उस व्यक्ति ने सजग भाव से चारों ओर देखा। एक दूसरे से पूरी तरह बेखबर लोग जैसे किसी तन्द्रा में डूबे खड़े थे। वह लड़की की तरफ थोड़ा और खिसक आया। लड़की ने क्रोध और कसमसाहट से देहाती की ओर देखा लेकिन बूढ़े की नजरें दूसरी ओर थीं।

बर्थ का सहारा लेने के बहाने उसकी कोहनी फिर लड़की के वक्ष से जा लगी। इस बार लड़की ने गुस्से में भरकर उसकी बाँह झटक दी। शातिर नजरों से आसपास के हालात का जायजा लेकर अँगड़ाते हुए उस व्यक्ति ने जमुहाई ली। पैंतरा बदलकर वह लड़की से और ज्यादा सट गया था। इस दुरभिसंधि में कसमसाती लड़की उसकी तरफ पीठ मोड़कर खड़ी हो गयी। मेरे सामने की बर्थ पर एक हाथ टिकाकर उस व्यक्ति ने अपनी कमीज की झूलती बाँह की आड़ लगा दी। अब उसका दाँया हाथ आहिस्ता-आहिस्ता लड़की के वक्ष की ओर बढ़ने लगा। लड़की ने सहसा उसका हाथ पकड़कर झटक दिया। क्षणभर में जैसे ऊँघते हुए डिब्बे की चेतना लौट आयी।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह दृश्य बूढ़े की विकृत मानसिकता को उजागर करता है। एक तरफ यह बूढ़ा धार्मिक यात्रा पर है दूसरी ओर मन अपवित्रता से भरा हुआ है। जब लड़की की माँ उसकी हरकतों को भाँपकर गालियाँ बकने लगती है तो वह अपनी बेकसूरी व्यक्त करता हुआ सफाई देने लगता है। वह व्यक्ति ''चन्द क्षणों में जवान से बूढ़ा हो जाता है।'' समाज की यह स्थिति दयनीय एवं दरिद्रता पूर्ण कही जा सकती है।

अशोक सक्सेना व्यक्ति के मन में भरी हुई इसी अनुदार भावना, घृणित इच्छा, स्वार्थ लिप्तता और बेईमान हरकतों को कहानी के माध्यम से प्रकट करते चलते हैं। उनकी दृष्टि में दिहाड़ी मजदूरों, सफाई कर्मियों, घरों में साफ सफाई करने वालों का श्रमसाध्य कार्य सरल नहीं है, इसे हीनता बोध की श्रेणी में न रखकर स्वाभिमान से किया जाने वाला कर्म कहा जाना चाहिए। भले ही वह मजबूरी में ही क्यों न करना पड़ रहा हो। इस दौरान लेखक यह भी ध्यान रखता है कि श्रम की मजदूरी उसे वाजिब मिल रही है या नहीं। अपने हक के लिए आवाज उठाने वाले पात्र उनकी कहानियों में मौजूद हैं। अशोक सक्सेना ने कम कहानियाँ लिखी हैं लेकिन सार्थक कहानियाँ लिखी है। जो कहानी के वर्तमान संसार को समृद्ध करती हैं।

❑ 1, न्यू कॉलोनी, झोटवाड़ा
पंखा, जयपुर-302012

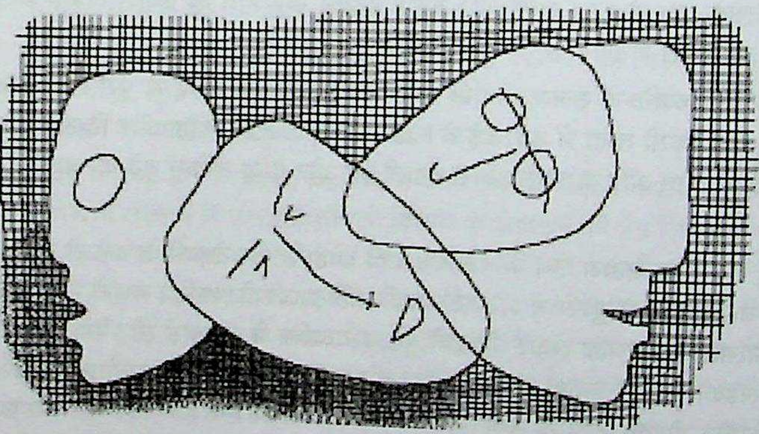

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रेत

अशोक सक्सेना

बारिश काफी तेज थी। साईकिल आफिस में छोड़कर ऑटो-रिक्शा से घर आना पड़ा। बावजूद काफी सँभल कर बैठने के तेज बौछार से मेरे कपड़े भीग चले थे। पूरी रफ्तार से भागते स्कूटर में ठण्डी हवा चेहरे पर थपेड़े दे रही थी।

घर पहुँचते-पहुँचते मुझे सर्दी से कंपकपी छूटने लगी। स्कूटर से उतर कर पहले मैं सीधा सीढ़ी चढ़ते हुए अपने क्वाटर में घुसा। कपड़े बदलकर मैंने ऊपर से शाल लपेट लिया। स्कूटर अभी नीचे खड़ा था। पर्स लेकर पहुँचा और बिल चुका कर ऊपर आया। ऐसे मौसम में इस वक्त बन्द कमरे की गर्माहट अच्छी लगी। तिपाही पर पड़ा अखबार उठाकर मैं बैड पर जा लेटा। आंध्र में रामाराव सरकार बर्खास्त, पुलिस मुठभेड में दो उग्रवादियों की मृत्यु, थाने में बलात्कारः दरोगा निलम्बित, महाराष्ट्र में साम्प्रदायिक दंगाः तीन सौ मरे, दक्षिण दिल्ली के बैंक में दिन दहाड़े डकैती, अमेरिका द्वारा भारत के शांति प्रयासों की सराहना-सुर्खियों पर नजर डालकर मैंने अखबार एक तरफ रख दिया। पत्नी चाय ले आई थी। 'आगरे से तार आया है।' चाय का कप थमाते हुए वह बोली और तह किया हुआ तार उसने तिपाही पर रख दिया।

इस कड़कती सर्दी में बिस्तर में चाय पीने का अपना मजा है। मैं इस मजे को किरकिरा करना नहीं चाहता क्योंकि जानता हूँ यह तार बाबू की बीमारी का होगा या ज्यादा उनकी मौत का। मैं चाय सिप करता रहा लेकिन सामने रखे तार पर बाबू का चेहरा बार-बार उभरने लगा। ऐसा लगा कि तार में से बाबू की आँखें उचक-उचक कर मुझे लगातार घूरे जा रही हैं। मैंने इस ख्याल को मन से झटक देना चाहा लेकिन नहीं झटक सका। चाय बेस्वाद लगने लगी। हाथ बढ़ाकर तिपाही से कागज उठा लिया। आगरे से छोटे भाई का दिया हुआ तार था - फादर एक्सपायर्ड। मैंने तार वापस तिपाही पर रख दिया और बेमन से चाय सुड़कने लगा। इस खबर से मुझे खुशी हुई या रंज, यह बता पाना जरा मुश्किल है। वैसे बाप की मौत का मुझे दुख होना चाहिए लेकिन मन में कोई कचोट महसूस नहीं हुई।

'क्या सोच रहे हैं।' मुझे चुप देख कांति ने पूछ लिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'कुछ नहीं।'

वह उठकर किचिन में चली गई। बहुत भावुक औरत है। हालांकि उसे कभी आगरे में यानी घर पर रहने का मौका नहीं मिला था फिर भी घर के प्रति एक किस्म का लगाव उसमें सदा से रहा है। बाबू को उसने केवल एक बार देखा है। वह भी तब जब कानपुर जाते हुए हम लोग एक दिन को आगरा रुक गये थे। लेकिन अब कई दिन तक बाबू की मौत का मर्सिया गाती रहेगी।

सब्जी की टोकरी लेकर वह कमरे में आकर बैठ गयी।

'कब चल रहे हैं?' आलू छीलते हुए उसने पूछा।

'कहाँ?'

उसने कहा कुछ नहीं। सिर्फ आँखें उठाकर क्षण भर मुझे देखा। मैंने तुरन्त नजरें हटा लीं और दूसरी तरफ देखने लगा जहाँ तिपाही पर कप के नीचे दबा हुआ तार दरवाजे से आ रही हवा से रह-रहकर फड़फड़ा रहा था।

'एक बात पूछूँ?' उसने कहा।

मैं चुप रहा। थोड़ी देर बाद वह गम्भीर होकर बोली- 'क्या खून के रिश्ते की यही पहचान रह गई है?. .. . . बाप कितना भी बदचलन और निकम्मा हो औलाद के साथ उसका नाम तो जुड़ेगा ही . . . .. उनमें लाख ऐब रहे हों हमें उससे क्या? लोग क्या कहेंगे कैसा आदमी है मौत की खबर सुनकर भी नहीं आया।'

'जब जीते जी कोई रिश्ता नहीं रहा तो अब उनकी मौत पर ही जाकर क्या करूँगा।'

'वो कौन देखने आ रहे हैं कि कौन आया कौन नहीं आया। बुरे वक्त में तो गैर भी साथ जाते हैं। बड़े बेटे होने के नाते'

'रमेश है तो सही वहाँ' मैंने बात खत्म करने के लिहाज से कहा।

'ठीक है मत जाइये आप। मैं रवि के साथ चली जाती हूँ।' उसने भी जैसे बात खत्म करते हुए कहा और उठकर किचिन में चली गई।

कांति शायद नाराज हो गई थी। मुझे इस समय इस औरत पर सिर्फ दया आई। मेरा बचपन जिस हालत में गुजरा है वह सब यह सुन चुकी है। शादी के बाद से ही घर के लिए खटते-खटते इसके बाल पक चले हैं। बच्चों का पेट काट कर सारी जिन्दगी उस घर की ईंटें जमाती रही है। जिसे बाबू ने लगभग धराशायी कर दिया था। अपने ननद देवरों की पढ़ाई-लिखाई से लेकर शादी-ब्याह रचाने तक की सारी जिम्मेदारियाँ निबाहते हुए अक्सर बाबू को कोसती रही है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि बाबू की मौत मेरी तरह कांति को भी विचलित नहीं कर सकी। सिर्फ लोकलाज के लिए इस मौके पर आगरा जाना उसे जरूरी लग रहा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं उठकर किचिन में आ गया। "आज बच्चे दिखाई नहीं दे रहे" मैंने पूछा। कालेज में कोई प्रोग्राम है। नीरा पिंटू के साथ गई है" कांति ने बताया

और रवि?

'यही कहीं घूमने निकल गया होगा।' उसने उदासीनता से कहा।

'सुनो खाना बनाकर सामान ठीक कर लो। रात की गाड़ी से चलेंगे।' मैंने बिना किसी भूमिका के कहा।

'ठीक है।' निःश्वास छोडते हुए वह नल पर पानी लेने चली गई।

कांति को सामान लगाते करते बारह बज गये। दस बजे तो नीरा और पिंटू कालेज से लौटकर आये थे। गाड़ी दो बजे मिलेगी। एक बजे घर से निकलना होगा। खिड़की से बाहर अँधेरी रात का सन्नाटा फैला हुआ था। बिजली के खम्भों पर लगे बल्व घने कोहरे में धूमिल नक्षत्रों की तरह टिमटिमा रहे थे। काफी दूरी पर एक बल्ब बुझ-बुझ कर रोशन हो उठता है। रोशनी की आँख मिचौनी देखते-देखते मैं धुन्ध के पार देखने लगता हूँ।

कच्ची दीवारों से बना एक घर दिखाई देता है। घर के पूर्व में एक कोठरी है और पश्चिम की तरफ एक बैठक है। बीच में लम्बा चौड़ा आँगन है। दोनों कमरों के बीच थोड़ी सी जगह में खपरैल हैं। शेष खाली जगह में घर-गृहस्थी का काठ-कबाड़ पड़ा हुआ है। खपरैल में चूल्हा पर चढ़ी पतीली में दलिया खदक रहा है। सोंधी महक नाक से होती हुई सीधी पेट पर दस्तक देती है। आँतें मरोड़ कर पेट में कुण्डली लगाये बैठी भूख को भूलकर बाहर आँखें पतीली पर टिकी हैं।

दलिया सिर्फ बिशु के लिए बन रहा है। उसे तीन चार दिन से बुखार है। वैद्यजी ने रोटी देने को मना किया है। दलिया बन जाये तब कहीं जाकर रोटियाँ सिकें। उधर दीवार से सटा हुआ विशू बैठे-बैठे झपकियाँ ले रहा है।

'विशू सो मत, बैठ, दलिया खाकर सोना', जिया विशू की अपनी गोद में खींच लेती है।

दिन छिपे पीछे बाबू आते हैं। जिया उनके पीछे-पीछे बैठक में चली जाती है। 'बच्चे सुबह से भूखे बैठे हैं, वह कहती है। बाबू कुर्त्ते की जेब से सिक्के वाला एक रुपया निकाल कर फैंक देते हैं।

'इससे क्या होगा। आटा भी मँगवाना है' जिया रुपया उठाते हुए कहती है। बाबू झल्ला उठते हैं- कैसे भी करो भई, मेरे पास अब फूटी कौड़ी नहीं है।

मुट्ठी में रुपया दबाये वह बाहर आ जाती है। चिरंजी की दुकान से सामान लाने की हिदायत देते हुए वह मुझे थैला पकड़ा देती है। मैं घर से निकलने को होता हूँ तभी बाबू आवाज देते हैं- 'हरी बाजार जा रहा है क्या? जरा बीड़ी का एक बंडल लेते आना।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वे कुर्त्ते की जेब से दो का नोट निकालते हैं। इसी के साथ एक थैला मेरे हाथ में और आ जाता है। 'एक टेलीफोन बीड़ी का बण्डल और गुलाब की एक बोतल लेते आना। कहना वकील साब ने मँगवायी है।' मैं थैला झुलाते हुए चल देता हूँ। पीछे से वे कहते हैं- और सुन ताऊजी से कहते जाना कि बाबू बुला रहे हैं।

ताऊजी के घर की दीवारें हमारे घर से सटी हुई हैं लेकिन उनके घर का दरवाजा दूसरी गली में खुलता है। इसलिए चक्कर लगाकर जाना पड़ता है। पहले हम लोग अपनी बैठक की छत से उतर कर ताई के यहाँ हो आते थे। लेकिन जबसे ताई का हमसे झगड़ा हुआ वह रास्ता तो बन्द हुआ ही आपस में बोलचाल तक बन्द हो गयी। उस घर में सिर्फ ताऊजी ही थे जिनका हमारे यहाँ आना-जाना अभी तक बना हुआ था।

ताई बहुत मुँहफट और स्वभाव की तेज थी। दूसरों की धो-धो कर उजली करने में उन्हें बहुत रस मिलता था। जिया के हरेक काम में मीन-मेख निकालना उनकी आदत बन गयी थी जबकि जिया का स्वाभाव कुछ और था। वह प्रायः गुमसुम रहती इसीलिये ताई से उसकी पटरी बैठी हुई थी लेकिन एक दिन ताई की जिया को खटक गयी। हुआ यह कि उस साल मैं नवीं क्लास में फेल हो गया था ताई को पता लगा तो वह दौड़ी-दौड़ी आई।

'जीजो हरी फेल हो गया' जिया ने ताई से बहुत बुझी हुई आवाज में कहा।

'और क्या होगा। चूहे के जाये तो भिट्टे ही खोदेंगे। ताई ने छूटते ही कहा- जिया आवाक हो कर उनका मुँह देखने लगी। उसे इस मौके पर ताई से शायद ऐसे व्यवहार की आशा न थी। फिर भी बात सम्भालने की गरज से वह बोली- 'पढ़ाई तो इसने खूब की थी।'

'शराबी की औलाद क्या खाक पढ़ेगी। बाप को पीने से फुर्सत न हो तो बेटे ऐसे ही निहाल करेंगे। ताई शर्तिया तौर पर जिया की हमदर्दी में बोल रही थी लेकिन उसके इन शब्दों का जिया पर बिल्कुल उल्टा असर हुआ।'

'बाप शराबी हो या जुआरी किसी के आगे हाथ तो नहीं पसारते। देखूँगी आगे-आगे किसकी औलादें बैरिस्टर बनेंगी।' जिया का शांत क्रोध फूट पड़ा। ताई को आँगन में खड़ा छोड़ कर कोठे में चली आई। इस घटना के बाद न ताई हमारे घर आई न जिया वहाँ गई।

मैं बाजार से लौटकर आता हूँ और घर के सामान वाला थैला लिये बैठक में चला जाता हूँ। जिया अच्छी तरह जानती है इसलिए कुछ नहीं पूछती।

बैठक में तख्त पर बाबू और ताऊजी के अलावा एक आदमी और बैठा है। शाम को अक्सर बाबू का कोई न कोई दोस्त बैठक में आकर जम ही जाता है। बाबू ताऊजी को तो कभी भूले-बिछड़े याद कर लेते हैं। बाबू को थैला थमाकर लौटने को होता हूँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तभी वे कहते हैं- 'हरीश इधर आओ। चाचा जी से नमस्ते नहीं की तुमने। मैं पाँव के नाखून से जमीन कुरेदता हुआ चुप खड़ा रहता हूँ।'

'नमस्ते करो' वे मुझे कान पकड़ते हुए अपनी तरफ खींच लेते हैं। मैं अब भी नहीं बोलता।

'सुना नहीं तुमने। मैं क्या कह रहा हूँ।'

मैं नजर उठाकर नहीं देखता। देखना भी नहीं चाहता। साले रोज आ जाते हैं फोकट की पीने जैसे इनके बाप का माल है, इस पर तुर्रा यह कि इनसे चाचाजी कहकर नमस्ते और करो।

'तड़ाक' अकस्मात बाबू का चाँटा मेरे गाल पर पड़ता है। 'सुनते नहीं मैं इतनी देर से क्या बक रहा हूँ।'

'नहीं करता! नहीं करता!! नही करता!!!' मैं गुस्से में भरकर चीख पड़ा।

'क्या!' उनके मुँह से सिर्फ यही निकला। वे ठगे खड़े रह जाते हैं। उन्हें क्या मुझे खुद को विश्वास नहीं था कि मैं ऐसी हिमाकत कर बैठूँगा। तभी वह आदमी मुझे अपने पास खींचते हुए बाबू से कहता है- 'क्यों नाराज होते हो यार, न की नस्मते ना सही। बच्चा ही तो है।' पिताजी तख्त पर बैठकर बीड़ी सुलगाने लगते हैं। मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए वह कहता है तुम तो बहुत समझदार बच्चे मालूम पड़ते हो। भला पिताजी को ऐसा जवाब दिया जाता है। अच्छे बच्चे अपने बड़ों की बात मान लिया करते हैं। जाओ बाहर खेलो आयन्दा ऐसा नहीं करना, हाँ।

हूँ! आयन्दा ऐसा नहीं करना। हमसे कहेंगे आयन्दा ऐसा नहीं करना। बाहर आते हुए मैंने सुना ताऊजी कह रहे थे। 'मध्धे तुमसे कितनी बार कहा बच्चों से ये चीज मत मँगाया कर, ये बात ठीक नहीं है।'

मैं चौके में आकर बैठ जाता हूँ। माँ आटा गूँथ रही है। चूल्हे पर रखी कढ़ाई का तेल धुआँ दे रहा है। इसलिए जानकी और रमेश जल्दी-जल्दी आलू छीलने लगे हैं।

'जिया मैं आ जाऊँ? कोठे में राजू के पास बैठी निर्मला पूछती है।'

'थोड़ी देर ठहर बेटा। खाना बनते ही बुला लूँगी।' आलुओं को धोकर साफ करते हुए जिया ने कहा 'भइया को लिहाफ उढ़ाये रखना।'

'जिया मुझे अकेले डर लगता है' निर्मला सहमी हुई आवाज में कहती है।

'डर काहे का, मैं यहाँ बैठी तो हूँ' उसे समझाते हुए वह बोली 'हरीश जा थोडी देर भइया के पास बैठ, निम्मा अँधेरे में अकेली बैठी डरती है।' चूल्हे के पास से उठकर जाने की इच्छा नहीं होती। मुझे निम्मा पर गुस्सा आता है। मनमसोस कर राजे के पास जा लेटता हूँ।

'सुनिये एक बज रहा है', कांति ने रजाई का कोना खींच कर कहा तो मेरी स्मृति में साकार हो उठा घर आँगन क्षणभर में रेतीली दीवार की तरह ढह गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हमें घर से निकलने में मुश्किल से दस मिनिट लगे होंगे, संयोग से गली पार करते ही रिक्शा मिल गया। सूटकेस और बैडिंग उठाकर मैं और कांति रिक्शे में गठरी बनकर बैठ गये। ठंडी हवा से बचने के लिए मैंने ओवरकोट का कॉलर खड़ा कर लिया।

प्लेटफार्म पर भीड़ नहीं थी, लोग वेटिंग रूप में ओढ़े दुबके पड़े थे। या इधर-उधर की चाय के स्टालों के गिर्द जमा थे। गाड़ी आने में करीब आधा घण्टे की देर थी। वेटिंग रूप में जाने की कोई तुक न थी लिहाजा एक खाली बेंच पर सूटकेस सिरहाने लगाकर लेट गया।

दूर केबिन के पार रंग-बिरंगी रोशनी झिलमिला रही थी। लाल-हरी-पीली बत्तियों की सुनहरी किरणों का जाल फैला था। इधर पटरियों के बिछे जाल में फँसा एक इंजन शंटिंग कर रहा था।

सू-सू की घुटती सी आवाज में छटपटाते इंजन के साथ ताल मिलाता मैं खुद कहीं से कहीं पहुँचने लगा। देखता क्या हूँ कि सामने से बाबू चले आ रहें है। लड़खड़ाते कदमों को जमा-जमा कर रखने की कोशिश में उनकी चाल निहायत बेढंगी हो जाती है। शरीर का सन्तुलन बिगड़ जाने से वे रास्ते में बीचों-बीच बैठ गये हैं। उनका दम फूल गया और खड़े होने की कोशिश में वे इधर-उधर लुढ़क रहे हैं। तभी अपने घर से निकलकर ताऊजी वहाँ जा पहुँचे मैंने राहत की साँस ली।

'मध्धो कुछ तो शरम कर सारा मुहल्ला हँस रहा है।' ताऊजी ने बाबू को उठाने की कोशिश की।

'शरम क्यों?' क्यों करू शर्म? किसी की चोरी की है मैंने? बड़े-बड़े राजे महराजे पीते हैं साले।

'बकवास बंद कर। झिलती है नहीं पर पियेंगे जरूर'।

'कौन उल्लू का पठ्ठा कहता है- झिलती नहीं है। पीते ही चढ़ जाती है साली। तुम साले ठहरे सूफी'।

'हरीश ताऊजी ने मुझे आवाज दी यहाँ ये यों ही जग हँसाई करायेगा'।

'मैं ऐसे नहीं उठूँगा'। वे बच्चों की तरह मचल गये।

ताऊजी बाबू को उठाने की कोशिश करते हैं एकाएक खड़े होकर बाबू ने ताऊजी को एक तरफ धकेल दिया और लडखड़ाते कदमों से घर की तरफ बढ़ रहे हैं।

मैं उलटे पैरों वापिस चल देता हूँ। समझ में नहीं आता बाबू ऐसा क्यों करते हैं। अक्सर सरेशाम उनका यों दारू के नशे में धुत होकर लौटना गली-मौहल्ले के लिए तमाशा बन जाता है। लोग देखते हैं और उनके पीठ पीछे बातें बनाते हैं। सामने कुछ कहने की हिम्मत किसी की नहीं होती।

मैं बाबू से पहले घर पहुँच जाता हूँ। थोड़ी देर बाद वह आते हैं। हाथ में लटकते थैले को जिया की तरफ उछालते हुए वह बैठक की ओर बढ़ जाते हैं। बाहर से टटोल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कर जिया ने थैला खूँटी पर टाँग दिया है। ठंडी होती जा रही राख को कुरेद कर वह चूल्हे में कंड़े के टुकड़े रख देती है। वह धीरे-धीरे न जाने क्या बड़बड़ा रही है। मैं उसके पास आकर बैठ जाता हूँ। कटोरे में साबुत मसाला लेकर वह कोने में रखे सिल पर मसाला बँटने लगती है। 'तू यहाँ क्या कर रहा है जा स्कूल का काम कर'। सिल पर से मसाला समेटते हुए वह बोली।

धुँआते कंड़ों को सुलगाकर उसने चूल्हे पर भगौनी चढ़ा दी है। और थैले को एक तश्तरी में उलट कर दिये की रोशनी में वह बोटियाँ साफ करने बैठ जाती है। गोश्त को उलट-पुलट कर देखते हुए वह बड़े ध्यान से एक-एक बोटी को साफ करती है। मैं उठकर कोठे में आ जाता हूँ।

तख्त पर रमेश, विशू, राजू और निम्मा बेसुध होकर सोये हैं। नीचे लटकती रजाई खींचकर मैं चारों को ठीक से उढ़ा देता हूँ। दिये की काँपती पीली रोशनी में नहाये चेहरे बहुम मासूम लगते हैं। आये दिन इन बच्चों पर पड़ने वाली मार का मुझे इस समय बहुत अफसोस होता है। बेचारे कभी बाबू से मार खाते हैं, कभी जिया से, ऊपर से मैं और हाथ छोड़ बैठता हूँ। मन ही मन छोटे भाई-बहिनों को न पीटने की कसम लेकर मैं उनके माथे सहलाने लगता हूँ। थोड़ी देर बाद मुझे नींद आ जाती है।

रात को पता नहीं कितने बजे बाद मेरी नींद खुली तो देखा जानकी चारपाई पर अकेली सो रही थी। इसका मतलब जिया अभी तक काम में लगी है। मैं पेशाब करने बाहर निकला तो देखा खपरैल भी सूनी पड़ी थी। आँगन पार मोरी से लौटते हुए मैंने बैठक पर नजर डाली। किवाड थोड़ा खुले दिखे। पायदाने बैठी जिया बाबू के पाँव दाब रही थी। और बाबू नशे में न जाने क्या बड़बडा रहे थे। मैं दबे पाँव आगे बढ़ा और किवाड़ से कान लगाकर खडा हो गया।

'हरी तीन दिन से फीस की कह रहा है। पिछले महीने भी उसकी फीस नहीं भरी गई थी। कल तक, फीस न पहुँची तो स्कूल से नाम कट जाएगा।' जिया कह रही थी।

'कटता है तो कट जाने दे। उसकी फीस के लिए मैं क्या बिक जाऊँ?'

'बिकने को कौनसी बात है। फीस का इन्तजाम तो किया जा सकता है'।

'मुझ पर कौनसा गढ़ा धन रखा है। अब नहीं है रुपये तो नहीं है बस'।

'पीने के लिए भी तो रुपये आते ही हैं कहीं से'। जिया ने दबी जबान से तीखी बात कह डाली।

'अपने पैसों की पीता हूँ कौन तेरा बाप दे जाता है'

बच्चों की जिंदगी का कुछ तो ख्याल करो। तीनों छोटे बच्चे तुमने पहले ही स्कूल छुड़ाकर घर बिठा रखे हैं। एक लड़का पढ़ रहा है तो उसकी फीस तुमसे .. . . ।

'बच्चो की तुझे ही तो ज्यादा चिंता है। अपने बाप के यहाँ से लाई है न?'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'क्या ऊलजुलूल बक रहे हो' जिया ने थोड़ा गुस्से में कहा।

'ऊलजुलूल बक रहा हूँ? उल्लू की पठ्ठरी जबान लड़ाती है? चल भाग यहाँ से।' बाबू ने गुस्से में लात फेंक मारी जो उसके घुटने पर लगी। सँभलते-सँभलते भी वह नीचे आ पड़ी। मुझमें कुछ और देखने की ताब नहीं थी। जी में आया कि अभी अन्दर जाकर बाबू का गला दबोच डालूँ। जिया कराहते हुए खड़ी हो गई और मैं चुपचाप तेजी से कोठे की तरफ बढ़ गया। थोड़ी देर बार वह आती है और किवाड़ बन्द कर जानकी के पास जा लेटती है।

घन्! घन् !! घन् !!! मेरे दिमाग में घंटियाँ बजने लगी हैं मस्तिष्क की शिराओं पर कोई हथौड़े चला रहा है। अस्पष्ट आवाजों का शोरगुल सुनाई दे रहा है, अजीब हलचल मची है। यहाँ इतने सारे लोग क्यों जमा है? इतनी चिल्ल-पों क्यों मच रही है कि कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा।

'नींद आ गई क्या? उठिये गाड़ी आ रही है'। कांति ने मुझे लगभग झँझोडते हुए कहा। मैं फौरन उठ बैठा। तन्द्रा टूटने पर बड़ी राहत महसूस हुई।

गाड़ी धड़ धड़ाती हुई प्लेट फार्म पर आकर रुक गई। चाय वाली अँगीठियों के इर्द-गिर्द जमा होकर तापते हुए कुलियों में हरकत शुरु हो गई। कंधे पर पड़ा अँगोछा फटकारते हुए वह खड़े हो गये।

'सुनो गाड़ी खाली पड़ी है। पीछे वाले डिब्बे में चढ़ते हैं'। मैंने बैडिंग उठाते हुए कहा। गाड़ी के पिछले डिब्बों में काफी जगह थी। लोग आराम से सोये पड़े थे। 'चलो ये अच्छा हुआ। लेटने लायक जगह मिल गई'। कांति ने बैडिंग खोलकर बिछाते हुए कहा। मैं इतमीनान से पाँव फैलाकर बिस्तर में लेट गया और वह भी कम्बल लपेट कर सामने वाली वर्थ पर पड़ गई।

प्लेटफार्म पर दूसरा केबिन छोड़ते-छोड़ते गाड़ी ने रफ्तार पकड़ ली। मैं सोने की कोशिश करने लगा लेकिन अतीत की घटनायें खौफनाक छाया की तरह पीछा नहीं छोड़तीं। छूटी हुई कड़ियाँ बिखर-बिखर कर जुड़ने लगीं।

बाबू कचहरी जाने को तैयार हो रहे हैं। जिया कहती है- 'राजू की हालत दिन-ब-दिन गिरती जा रही है।'

'इलाज चल तो रहा है'।

'वैद्य जी की दवा से तो कोई फायदा नहीं दीखता। न हो तो किसी अच्छे से डॉक्टर को दिखा लें'।

'डॉक्टर क्या करेगा इसमें। मोतीझरा है। जाते जाते ही जायेगा'।

'एक महीना बीत चला कब तक सबर करूँ'। जिया रुँआसी हो उठी।

'बेकार बातें मत कर कुछ नहीं होगा। सब ठीक है। जाते हुए मैं वैद्य जी से कह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाऊँगा। एक बार अभी आकर देख जायेंगे।' वे पूरी तरह निश्चिंत होकर कचहरी को जाते हैं।

जिया मुझे स्कूल जाने से रोक देती है। कोठे में जिया और में राजू की चारपाई के सिरहाने पूरा दिन गुजार देते हैं। जिया दिन भर कभी राजू की नब्ज देखती रही कभी उसके माथे पर हाथ फेरती रही। राजू कुछ बोलता नहीं सिर्फ आँखें खोलकर जिया की तरफ देख भर लेता है।

शाम को कोठे से बाहर निकला। बैठे-बैठे शरीर टूटने लगा था। हाथ-पाँव सीधे करने के लिहाज से आँगन में टहलने लगता हूँ। दिन ढल रहा है। धूप आँगन से हटकर मुँडेरों पर जा चढ़ी है। जैसे दिन का उजाला साथ ले जाने के लिए मुँडेर से कूदकर भाग जाने की तैयार में बैठी है। इस ख्याल से मुझे दहशत होने लगती है। मैं वापस कोठे में चला आता हूँ। तभी हाँ ठीक तभी जिया चीख उठी। मैं घबरा कर एकदम राजू पर झुक गया। उसकी साँसे तेजी से चल रही थीं। और बस। जिया के गले में आवाज नहीं निकलती। मेरी रूलाई छूट गई। बदहवास सा गली और सड़कों पर भागता हुआ कचहरी पहुँचकर बाबू को बताता हूँ। वे सिर्फ इतना कहते हैं 'घर चल मैं आ रहा हूँ।' मैं उल्टे पैरों घर भाग लेता हूँ। गली में कदम रखते ही चीख पुकार सुनाई दे जाती है। मेरे पाँवों की जैसे जान निकल गई है। पूरी ताकत से बेतहाशा दौड़ता हूँ।

आँगन सूना है। पाँचों भाई बहिन जिया से चिपटे हैं और जिया ताई की गोद में सर पटक रही है। राजू को जमीन पर चादर उढ़ा कर लिटा दिया गया है। इस विचार से कि राजू अब कभी नहीं उठेगा। मेरी आँखों के सामने कोठे और आँगन घूमने लगते हैं।

तभी बाबू आँगन में बुत की तरह आकर खड़े हो गये हैं मैं उनसे लिपट जाता हूँ। रोते-रोते हिचकियाँ बँध जाती हैं। उनका हाथ मेरे सिर पर रखा है और मैं धीरे-धीरे होश खो रहा हूँ लेकिन नहीं मेरा होश बरकरार रहता है। कोई मुझे एक तरफ ले जाकर समझाने लगा है। सब संस्कारों की बात है भाई जिसका जितना अन्न जल बदा है वह उतना ले जाता है। हिम्मत से काम लो। घर में तुम सबसे बड़े और समझदार हो। अपने बाप का हाल तो तुम देख ही रहे हो। अब अपनी जिम्मेदारी समझ कर चलो। यों हिम्मत हार बैठोगे तो कैसे काम चलेगा।

धीरे-धीरे मेरी हिचकियाँ थम गईं होशो-हवास लौट आया है जैसे इस अनहोनी को मैंने स्वीकार कर लिया है। मैं आँसू पोंछकर बैठक में आ गया जहाँ ताऊजी बाबू को समझा रहे थे- 'धीरज रख मध्धो, मुकद्दर में लिखे को कौन मेट सकता है। होना था सो तो हुआ। अब बाल बच्चों की फिक्र कर। इतनी देर से इनका रोते-रोते बुरा हाल हो रहा है। थोड़ी तसल्ली रख। एक से एक को हिम्मत होती है।' ताऊजी ने दस का नोट निकालकर बाबू की मुठ्ठी में ठूँस देते हैं- 'रात हो चली है पहले ये इन्तजाम कर।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देर हो गई तो काया रात भर कष्ट पायेगी। गया सो तो गया। मिट्‌टी रखे रहने से क्या फायदा।'

बाबू के बाहर जाते ही मेरे आँसुओं का बाँध फिर टूट जाता है। बाबू का इन्तजार करते-करते नौ बज गये। जिया का चीत्कार मंद हो गया है। बैठक में जमा लोगों में से चार-पाँच को छोड़कर बाकी लोग जा चुके हैं। ताऊजी मुट्ठियाँ बाँधे बेचैनी से इधर उधर आ जा रहे हैं। आखिर इतनी देर लगाने का क्या मतलब?

दस बजे बाद बाबू घर लौटे हैं। नशे में धुत इतने कि ठीक से खड़े भी नहीं हो पा रहे हैं। राजू का आखिरी सामान आहिस्ता से आँगन में रखकर उन्होंने आवाज लगाना शुरु कर दिया राजू .. . . ऊ . . . . वह जमीन पर सोये राजू की रजाई में जा घुसते हैं। घर में पुनः कोहराम मच उठा है। जिया ताई की पकड़ से छूटकर जमीन पर सिर पटक रही है और निम्मा, विशु, जानकी चीखकर माँ से लिपट जाते हैं। ताऊजी और एक दो लोग दौड़े हुए कोठे में आते हैं। बाबू को उन्होंने रजाई से खींच लिया है। गुस्से में भरे हुए ताऊजी बाबू पर लात घूँसे बरसा रहे हैं। बाबू को घसीटते हुए वे बैठक में ले आये हैं जहाँ तख्त पर डालकर उन्होंने बैठक की बाहर से कुंडी लगा दी है। खपरैल में दीवार के सहारे टिककर वे हाँफने लगे हैं।

डिब्बे में चहल पहल शुरू हो गई है। आगरा पहुँचते-पहुँचते सात बज चुके थे। स्टेशन से रिक्शा लिया और सीधे घर पहुँचे।

बैठक में बिछा रहने वाला तख्त बाहर आँगन में खड़ा कर दिया गया था। तख्त की जगह पर बिछी दरी पर जिया लेटी हुई थी।

पता नहीं चला कि आठ दस दिन कैसे गुजर गये। रिश्तेदार और संबंधियों के हुजूम, जमाने भर के किस्से, दुनियाँ भर की बातें, रात को बैठक में जमती ताश प्रेमियों की चौकड़ी, बाबू के स्वभाव की चर्चा, हँसी मजाक और दिल्लगी। लगता है लोग मौत में नहीं किसी उत्सव में शरीक होने आये हैं।

तेरहवीं के काम काज में फुर्सत पाकर हम लोग बैठक में सुस्ताने बैठ गये जानकी और निर्मला को कल जाना था। रमेश ने टेलीग्राम देकर कल तक की छुट्‌टी बढ़वाई थी। कल शाम तक वह भी निकल जायेगा। रिश्तेदार तो पहले ही जा चुके थे।

जिया किसके पास रहेगी? यह अभी तय नहीं था। कांति और रमेश उसके बारे में फैसला करने में लगे हैं। रमेश उसे अपने साथ ले जाना चाहता है और कांति की जिद है कि जिया अभी कुछ दिन हमारे साथ रह ले। जिया कुछ नहीं कहती। सबकी सुनती है। मेरी नजर उसके चेहरे पर टिक जाती है। जहाँ असंख्य झुर्रियाँ हैं और उन झुर्रियों में इस घर का दर्ददाक इतिहास छिपा है।

"जिया रमेश कल जायेगा और एक-दो दिन में मुझे भी जाना है। जब तक मन चाहे हमारे पास रह। जब इच्छा हो तब रमेश या विशू के पास चली आना।" मैंने कहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वह चुप थी। उसके जवाब के इन्तजार में हम सब चुप थे।

''जिया बता क्या कहती है।'' रमेश आजिजी से बोला।

''क्या कहूँ'' उसने रूँधी हुई आवाज में कहा ''जब सारी उमर इस घर में काट दी तो अब अन्त समय यह देहरी छोड़कर कहाँ जाऊँगी।''

''इसका मतलब तू अकेली रहेगी?''

''अकेली क्यों? तुम लोग तो आते जाते रहोगे न मेरे लिए यही बहुत है।'' उसने धीरे से कहा।

जिया का आत्मविश्वास देखकर मेरा विश्वास हिल गया। जिन्दगी में कौन सा सुख पाया इसने? पति की मार, रिश्तेदार और पड़ौसियों की सहानुभूति! वह सहानुभूति जो दयनीय बनकर ही पाई जा सकती है। संतान का वियोग, घोर अभाव, कष्ट और पीड़ा। मैं समझ नहीं पाया कि नारकीय जीवन की पीड़ा को नियति मानकर सहती चली जाने वाली इस जर्जर काया में कौन सी दुर्दमनीय जिजीविषा छिपी हुई है।

जिया कहीं नहीं जायेगी। जाना होता तो भर जवानी में अपने मायके चली गई होती जब बाबू के अत्याचारों से तंग आकर बड़े मामाजी जिया को सदा के लिये ले जाने की ठानकर अपने घर से चले थे।

मुझे लगा कि बाबू मरे नहीं है। उनका अस्तित्व अभी शेष है। एक प्रेत है जो इस घर पर मँडरा रहा है और यह प्रेत जिया को जिन्दगी भर अपनी जकड़न से मुक्त नहीं होने देगा। एक दिन उसी घर की चार-दीवारी में जिया की करुण कहानी का अन्त हो जायेगा।

'ठीक है जैसा तू चाहे' मैंने कहा।

जानकी जाने की तैयारी में संदूक सँभाल रही थी। इधर निम्मा की छोटी लड़की रमेश के लड़के के लम्बे बालों में रिबन बाँध रही थी। मैं बच्चों के इस खेल में शामिल हो गया।

❑ लक्ष्मी नगर, काकाजी की कोठी
भरतपुर (राज.)-321001

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजेन्द्र यादव देवता नहीं थे

हेतु भारद्वाज

राजेन्द्र यादव के निधन से मैं बहुत आहत हुआ हूँ। उनकी याद नहीं, उनकी अनुपस्थिति मुझे बहुत साल रही है। मुझे लगता है कि मेरे बहुत निकट का व्यक्ति चला गया है। उनके आत्मीय जनों का परिवार बहुत बड़ा था। मुझे यह भी नहीं पता कि वे मेरे साथ कितनी नजदीकी महसूस करते थे। पर इतना विश्वास जरूर है कि उनकी स्मृति में मेरा नाम जरूर बना हुआ था। इसका अहसास मुझे उस समय अधिक हुआ जब रात के 11 बजे के करीब उनका फोन आया, 'सो गये क्या पंडित?', 'नहीं अभी नहीं सोया' मैंने कहा तो वे बोले, 'मैंने तुम्हें बधाई देने को फोन किया। अभी-अभी, मैंने सम्बोधन में तुम्हारा संस्मरण 'हाय!' ग्राम जीवन भी क्या है' पढ़कर समाप्त किया है। यह तो मैं जानता था कि गाँव से तुम्हारा बहुत लगाव है पर इस संस्मरण को पढ़कर लगा कि तुम ग्रामीण जीवन के बदलाव को बहुत गहराई से महसूस करते हो। यह सारा मसला तो एक उपन्यास का है। तुम इस सारे घटनाचक्र पर उपन्यास लिखो।' 'आपको पसंद आया, यह मेरे लिए गर्व की बात है', मैंने उत्साहित होकर कहा। 'गरबफरब को छोड़ो और इसे एक उपन्यास में ढाल दो।' उन्होंने फोन काट दिया।

यह किस्सा मैंने पूरे उल्लास के साथ अनेक लोगों को सुनाया। उपन्यास तो मैं नहीं लिख पाया पर यह बातचीत दिमाग में ठहर गयी। उनके साथ की अनेक स्मृतियाँ हैं जो उनके मुक्त स्वभाव और छोटे-बड़े का भेद छोड़ सबके साथ खुली बातें करने की घटनाएँ हैं। सिरोही में एक आयोजन था जिसमें राजेन्द्र यादव भी शामिल हुए थे। वे वहाँ सर्किट हाउस में ठहराये गये थे। रात को हम लोग उनके कमरे में बेतकल्लुफ बातें कर रहे थे। वे सभी को छेड़ भी रहे थे। वे घूम फिरकर सैक्स के किस्सों पर आ जाते थे। मैंने कहा कि लोक में सैक्स के विषय में एक उक्ति प्रचलित है कि बचपन में सैक्स लड़के की एड़ी में रहती है, जवानी में यथास्थान आ जाती है जबकि बुढ़ापे में वह जीभ पर आ विराजती है। सबने एक ठहाका लगाया। इस घटना को मालचन्द तिवाड़ी जब भी मिलते हैं याद करते हें। राजेन्द्र यादव भी खूब हँसे, यह उनकी जिन्दादिली भी थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर सैक्स उनकी बहुत गहरी कुंठा थी। कानोडिया महिला महाविद्यालय, जयपुर में रचनात्मक शिविर लगाने की परम्परा रही है। (अब है या नहीं कह नहीं सकता) इसमें नामी रचनाकारों को आमंत्रित किया जाता रहा है।एक वर्ष राजेन्द्र यादव और मैं आमंत्रित थे। डॉ. मेहतानी तब प्राचार्य थीं तथा डॉ. प्रभा सक्सेना हिन्दी विभागाध्यक्ष। इस शिविर में आमंत्रित रचनाकारों के साथ इच्छित छात्राओं का संवाद होता था। इस संवाद में महाविद्यालय के प्राचार्य या शिक्षक नहीं रहते। समापन के समय सब लोग एकत्र होते हैं। संवाद के दौरान राजेन्द्र यादव यही कहते थे 'यार पंडित इन लड़कियों को खोलो।' स्थानीय होने के कारण मैं अपनी सीमाओं में रहा। वे लड़कियों से उनके प्रेम प्रसंगों के बारे में पूछते रहे। उन्होंने कुछ लड़कियों से व्यक्तिगत स्तर पर प्रेम विषयक प्रश्न किए। कोई लड़की उनके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पायी। कहानी, कविता आदि लेखन पर खूब चर्चा रही। छात्राओं ने पूरे मनोयोग से कविता-कहानियाँ लिखीं, पढ़ीं और उन पर चर्चा भी हुई। समापन सत्र में राजेन्द्र यादव ने अपना वही लड़की, कड़की, झिड़की, खिड़की वाला भाषण सुनाया। प्राचार्य डॉ. मेहतानी बहुत नाराज हुईं और उन्होंने अपना गुस्सा प्रभा सक्सेना पर निकाला। मैंने बाद में सारा किस्सा राजेन्द्र यादव को सुनाया तो हँसकर बोले, 'मरने दो यार अपने तो दो दिन अच्छे कट गये।' अपने इस खुलेपन पर उन्हें कोई पश्चाताप नहीं होता था। इसलिए अंतिम समय तक वे ऐसे ही विवादों में उलझे रहे।

उनकी इस विवादप्रियता के कारण उनकी रचनाशीलता पर लोगों ने बात करना ही बंद कर दिया था। जब उन्होंने 'हंस' निकाला तो शायद उन्हें आभास हो गया था कि अब उनकी रचनात्मक क्षमता चुक गयी है। इसमें संदेह नहीं कि उन्होंने 'हंस' को महत्वपूर्ण सामाजिक बहसों का केन्द्र बनाया- स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, धर्म निरपेक्षता जैसे ज्वलंत प्रश्नों पर उन्होंने खुलकर बहस की और तीखे सम्पादकीय लिखे। लेकिन सारी साहसिकता के बावजूद उनमें कहीं-कहीं विचलन दिखायी दे जाता था। अखिलेश यादव के उ.प्र. में मुख्यमंत्री बनने पर सम्पादकीय में अखिलेश की तारीफ ने सभी को चौंकाया था। अखिलेश यादव जयपुर एक रैली में आने वाले थे। मेरे एक पत्रकार मित्र ने चाहा कि उनके अखबार को अखिलेश यादव दस-पाँच मिनिट का समय दें। मैंने राजेन्द्र यादव को फोन किया और उनसे अनुरोध किया अखिलेश यादव से मेरी बात करा दें। राजेन्द्र यादव ने साफ-साफ कहा, 'पंडित मैं तो उसे जानता ही नहीं। मैं उससे कभी नहीं मिला।' 'फिर आपने सम्पादकीय में तारीफ क्यों की थी? मैंने सवाल किया। 'अरे यार वो तो यों ही एक युवक मुख्यमंत्री का हौसला बढ़ाने के लिए लिख दिया था।' मैं इस पर क्या कहता।

और भी अनेक स्मृतियाँ हैं- लेकिन मुझे बराबर लगता रहा है कि राजेन्द्र यादव जितने सहज और खुले लगते हैं अन्दर से उतने ही जटिल और व्यक्तिवादी। साथ ही एक सच्चे कलाकार और बेचैन आत्मा। हर वक्त एक तलाश कि जिन्दगी कैसे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूर्ण बने। मोहन राकेश ने राजेन्द्र यादव के बारे में ठीक ही लिखा है, 'जिन्दगी में सिर्फ एक तलाश, एक कशिश-कहानी। वह जहाँ भी मिले, जिससे भी मिले, जैसे भी मिले। हर मिलने वाला आदमी-कहानी का सम्भावित पात्र! जिन्दगी का हर हुस्न फरेब-कहानी की एक स्थिति। अपने ऊपर ओढ़ी हुई हर तकलीफ लिखने की जरूरत। एकान्त का एक-एक क्षण(!) लिखने या सोचने का समय।.... मुसीबत है ऐसी जिन्दगी, जिसमें इंसान ....कभी भी, किसी भी क्षण केवल जीने के लिए न जिए, हर वक्त किसी न किसी प्रेत छाया का मीडियम बनकर उसकी बात सोचता हुआ रहे, उस कहानी के साथ एक कहानी हुआ रहे और जब तक एक प्रेत छाया सिर से उतरे, तब तक दो और प्रेत छायाओं को सिर पर बुला ले।' (मेरा हम दम : मेरा दोस्त, पृ. 23)

जाहिर है कि राजेन्द्र यादव का व्यक्तित्व बहुत पेचीदा है किन्तु रचना कर्म को पूरी तरह समर्पित। इतना ही नहीं अपने रचनाकर्म के प्रति पूर्ण सजग। वे रचनाकर्म को एक पूर्णकालिक कर्म मानते हैं इसलिए आजीविका कमाने के लिए वे कोई नौकरी नहीं कर पाते। वे मानते हैं कि तुर्गनेव की नौकरी उनकी साहित्य साधना में बाधक साबित हुई तो चेखव ने स्पष्ट ही लिखा, 'साहित्य एक ऐसी वैध पत्नी है, जो अपने से ईमानदारी की माँग करती है।' स्वयं राजेन्द्र यादव किसी नौकरी के ही खिलाफ नहीं वैवाहिक जीवन अपनाने के भी पक्षधर नहीं थे। यद्यपि उन्होंने प्रसिद्ध लेखिका मन्नू भण्डारी से शादी की, इसका कारण भी उन्होंने लिखा है, 'लिखना, और अधिक अच्छा लिखने का वातावरण बनाने का विश्वास हमें साथ लाया था।' (औरों के बहाने, पृ. 71) मन्नू भण्डारी भी स्वीकार करती हैं 'हमारी रुचियाँ, आदतें, स्वभाव, रहन-सहन, मनोरंजन सभी कुछ प्रायः एक दूसरे के विरोधी हैं, लेकिन उन्हें लेकर आज तक शायद ही कभी हम लोगों में कभी मतभेद हुआ है।' (मन्नू भण्डारी श्रेष्ठ कहानियाँ, पृ. 23)

लेकिन सचाई यह भी है कि उनका दाम्पत्य जीवन शायद ही कभी सामान्य रहा हो। अपने अंतिम दिनों में वे मन्नू भण्डारी से अलग रह रहे थे। इसका कारण यह है कि राजेन्द्र यादव ने अपने चारों ओर बहुत से यौन-विवाद पैदा कर लिए थे। इन विवादों में वे पूरा मजा लेते थे। इन विवादों के कारण उनकी प्रतिष्ठा पर आँच आयी और इन्हीं विवादों के चलते 'हंस' के स्तर में भी गिरावट आयी। जाहिरा तौर पर इस सबके लिए उन्होंने कभी अफसोस जाहिर नहीं किया। इसका कारण यह है कि वे यौन कुंठा तथा हीनभावना से ग्रसित थे। वे अपने सारे क्रियाकलाप अपनी इन्हीं भावनाओं को ढकने के लिए करते थे। यही कारण है कि उनकी गम्भीर से गम्भीर बात हवा में उड़ जाती थी। वे अपनी कमजोरी को ही अपनी ताकत मानते थे।

'हंस' के माध्यम से राजेन्द्र यादव ने अपने चिंतन को विस्तार ही नहीं दिया बल्कि इसे अपने चिन्तन-स्वप्न को साकार करने का माध्यम बनाया। उनके लिखे सम्पादकीय उत्तेजक और प्रेरक रहे जिनमें उन्होंने ज्वलंत समस्याओं को उठाया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपने विषय में विवाद खड़े किये और उन पर बहस को उकसाया। 'हंस' में उनके आग्रह ही नहीं लिहाज भी पूरा महत्व पाते रहे। एक बार उन्होंने अपने एक 'प्रिय' लेखक का संकलन मुझे समीक्षार्थ दिया। मैंने उसकी जो समीक्षा लिखी, उससे शायद उन्हें संतोष नहीं आया तथापि वह समीक्षा उन्होंने 'हंस' में छापी। लेकिन मुझे आश्चर्य तब हुआ जब उसी पुस्तक पर एक और समीक्षा छपी जो अत्यधिक प्रशंसा से भरी थी। ऐसे ही एक बहुत बड़े स्टार लेखक की कहानी 'हंस' में छपी जो मुझे अत्यंत सामान्य थी। मैंने उनसे पूछा कि क्या उन्हें यह कहानी पसंद आयी? उन्होंने स्पष्ट कहा कतई नहीं, पर क्या करें पंडित यह कहानी 'उनकी' थी। उन्होंने भेज दी तो मैं क्या करता?

इन सारी सीमाओं के बावजूद राजेन्द्र यादव एक बड़े तथा ईमानदार रचनाकार, चिन्तक और सम्पादक थे। जितना सम्भव हो सका उन्होंने ईमानदारी का दामन नहीं छोड़ा जबकि उनके समकालीन और भी बड़े रचनाकारों की सीमाएँ बराबर उजागर होती रहीं। उन्हें अवसरवादी नहीं कहा जा सकता। वे सम्मानों और पुरस्कारों के पीछे नहीं भागे। अपनी मान्यताओं से डिगे नहीं। प्रसार भारती प्रसंग में वे केन्द्रीय सरकार से लड़ने का साहस दिखा सके। ईमानदारी और साहस उनके कुण्ठाग्रस्त व्यक्तित्व के सबसे सुदृढ़ आधार थे जिनके कारण वे हमेशा चर्चा में भी रहे। इसका कारण यह हो सकता है कि राजेन्द्र यादव एक ऐसे मौलिक रचनाकार थे जिन्होंने विश्व के श्रेष्ठतम साहित्य को पढ़ा। वे रचनाकार को समाज का नागरिक मानते थे और उन्होंने कभी नहीं चाहा कि रचनाकार मिथ्या गौरव का शिकार हो इसीलिए उन्होंने लिखा, 'देवताओं की मूर्तियों की भाँति लोग इन्हें रखकर पूजते रहें, सदा इनकी चिन्ता करते रहें और इन्हें कुछ न करना पड़े।' (देवताओं की मूर्तियाँ, पृ. 104) शायद इसीलिए उन्होंने 'वे देवता नहीं थे' जैसी संस्मरणात्मक पुस्तक लिखी।

❑ छावनी, नीमकाथाना-332713

मो. 09414752039

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बिज्ञी का लोक

नन्द भारद्वाज

अपने आत्मीयजनों और पाठकों के बीच 'बिज्जी' नाम से विख्यात राजस्थान के अग्रणी कथाकार विजयदान देथा का निधन अप्रत्याशित घटना बेशक न हो, लेकिन यह मानने को जी नहीं करता कि अब हमारे बीच नहीं रहे। उनसे बीते चालीस बरसों का गहरा वास्ता रहा है। अपने घर-गाँव बोरूंदा में उनकी मौजूदगी और साहित्यिक हलकों में उनकी हलचल इस बात की तसल्ली देती थी कि हमारे बीच विजयदान देथा जैसा समर्थ लेखक सक्रिय है। अपनी छह दशक की अथक साहित्य-यात्रा में उन्होंने विपुल साहित्य की रचना की- 'बातां री फुलवाड़ी' के चौदह खण्ड, हिन्दी में अनूदित कथाओं के कोई दर्जन भर संग्रह, भारती भाषाओं में उनकी कृतियों के अनुवाद, अंग्रेजी और विश्व की कई भाषाओं में कथाओं के अनुवाद, छह भागों में प्रकाशित 'राजस्थानी हिन्दी कहावत कोश', साहित्य की अनेक विधाओं में सृजन और देश-दुनिया में असंख्य कद्रदान उनकी इसी सक्रियता का प्रमाण हैं।

राजस्थानी आख्यान की परंपरा को लेखन और प्रकाशन के माध्यम से संरक्षित करने और उसे आधुनिक समाज में प्रतिष्ठा दिलाने के गुरुतर कार्य को विजयदान देथा ने जिस मौलिक सूझ-बूझ से संपन्न किया, उसी के चलते राजस्थानी और हिंदी जगत में एक अलग तरह के स्वभाव वाले रचनाकार के रूप में उनकी पहचान बनी है। लोक विरासत से बनी उनकी आंचलिक भाषा और लेखन-शैली का अनूठा आकर्षण जिज्ञासु पाठकों के लिए निश्चय ही नया और विस्मयकारी रहा है। यही कारण है कि उनके लोकधर्मी लेखन का साहित्य-जगत में व्यापक स्वागत हुआ।

विजयदान देथा यों तो 1949 से ही विद्यार्थी जीवन के दौरान एक लेखक के रूप में सक्रिय हो चुके थे। लेकिन अपनी भाषा की पारंपरिक लोककथाओं को लिखित रूप देने का काम उन्होंने 1960 में अपने मूल गाँव बोरूंदा लौट कर ही आरम्भ किया। इसके लिए उन्होंने कोमल कोठारी के साथ 'रूपायन संस्थान' की नींव रखी और अपने गाँव में ही छापेखाने की व्यवस्था की, जहाँ से अनेक महत्त्वपूर्ण राजस्थानी कृतियों का प्रकाशन संभव हो सका। एक ओर जहाँ वे राजस्थानी लोककथाओं के पहले सफल लिपिकर्ता और संग्राहक रहे, वहीं दूसरी ओर 1973 में प्रकाशित अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पहली मौलिक कहानी 'अलेखूं हिटलर' के माध्यम से एक नए तेवर वाले कथाकार के रूप में सामने आए।

लोककथाओं के लेखन में वे जितने लोकोन्मुख और यथार्थ के प्रति आग्रहशील रहे, अपनी मौलिक कहानियों में वे उतने ही भावुक और रूमानी दिखाई देते रहे। 1972 में 'बातां री फुलवाडी' का दसवा खंड प्रकाशित होकर आया। फिर 1979 में 'दुविधा' और उसी क्रम में 'उलझन' संग्रह आए तो हिन्दी जगत में हलचल-सी उत्पन्न हो गई। इसके बाद जिस तरह एक के बाद एक उनकी राजस्थानी कहानियों के हिंदी अनुवाद 'सपनप्रिया', 'उजाले के मुसाहिब', 'अंतराल', 'महामिलन', 'प्रिय मृणाल', आदि संग्रहों के माध्यम से प्रकाशित होते रहे, और दूसरी भारतीय भाषाओं में भी जिस तरह उनकी कहानियाँ अनूदित होकर सामने आती रहीं, उससे अखिल भारतीय स्तर पर अलग तरह के कथाकार के रूप में उनकी पहचान बनने लगी। उनकी कहानियों के अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित हुए तो वे लेखक के रूप में दुनिया के कई देशों-रूस, चीन, जर्मनी, बेल्जियम, सूरीनाम आदि की यात्रा कर आए।

इन सारी गतिविधियों और उपलब्धियों के बावजूद विजयदान देथा ने राजस्थान की कदीमी लोककथाओं के संग्रह का जो बीड़ा उठाया, वह अपने आप में एक अभूतपूर्व उपलब्धि थी। यों राजस्थानी लोककथाओं के संग्रहण का काम पहले भी होता रहा है और उसमें रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, कन्हैयालाल सहल, गोविन्द अग्रवाल, डॉ. मनोहर शर्मा, देवीलाल सामर, भवानीशंकर उपाध्याय आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है, लेकिन 'रूपायन' के माध्यम से विजयदान देथा और कोमल कोठारी द्वारा किया गया कार्य अधिक व्यवस्थित, योजनाबद्ध और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साबित हुआ।

राजस्थानी लोककथाओं के अन्य संग्रहों की कथाओं से 'बातां री फुलवाडी' की कथाओं का एक मौलिक अंतर यह है कि अन्य लोगों ने जहाँ राजाओं, राजवंशों, सवर्ण जातियों, शूरवीरों की कथाओं और प्रेमाख्यानों के माध्यम से स्वामिभक्ति, वीरता, दानशीलता, बलिदान, पतिव्रत धर्म, सतीत्व जैसे सामंती मूल्यों को महिमामंडित करने का प्रयास किया, वहीं विजयदान देथा ने आज के जनतांत्रिक समाज की नई आकांक्षाओं के अनुरूप स्वाधीनता, समानता, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, नारी-स्वातंत्र्य और आत्मसम्मान जैसे मानवीय मूल्यों और मानव अधिकारों को पुष्ट करने वाली जीवंत और प्रेरणादायी लोककथाओं का चयन कर उन्हें अपनी प्रवाहमयी भाषा में प्रस्तुत किया।

राजस्थानी भाषा और साहित्य में इन लोककथाओं के माध्यम से पहली बार पद और पेशे की प्रभुता के सम्मुख श्रम की प्रतिष्ठा और नारी के आत्मसम्मान का प्रभावशाली स्वर उभरा। सामंती समाज में अछूत और उपेक्षित समझी जाने वाली मेहनतकश जातियों (नायक, बनजारे, भील, जोगी, कालबेलिया, राइके, कुम्हार, लुहार, नाई, तेली आदि) के कर्मठ पात्रों को तथाकथित सवर्ण समाज के शूरवीर और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
चतुर समझे जाने वाले पात्रों के मुकाबले ज्यादा धीर-गंभीर और व्यवहार कुशल बनाकर प्रस्तुत करना कोई आसान काम नहीं था।

यही नहीं, 'फुलवाडी' की इन कथाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, रूढ़िवादिता और धार्मिक आडंबर की जैसी धज्जियाँ उड़ाई गईं, वह राजस्थानी लेखन के क्षेत्र में नई चेतना के उद्घोष की जीती-जागती मिसाल थी। निश्चय ही विजयदान देथा के आरंभिक दौर के लेखन में इस वैज्ञानिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण के पीछे उनके गंभीर अध्ययन, मध्यवर्गीय जीवन अनुभव, ग्रामीण समाज के प्रति सहज सहानुभूति, मेहनतकश लोगों से भावनात्मक लगाव, नारी के प्रति अटूट अनुराग और सम्मान की भावना का गहरा असर रहा। आज अगर राजस्थानी लोककथाओं को जो राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सम्मान प्राप्त हैं या उनके मंचन, फिल्मांकन, प्रसारण और प्रचार-प्रसार की व्यापक संभावनाएँ बनी हैं, उनके पीछे निश्चय ही विजयदान देथा और कोमल कोठारी के सतत श्रम और सूझ-बूझ की निर्णायक भूमिका रही है।

'बातां री फुलवाडी' के क्रमिक प्रकाशन के साथ हिंदी में 'दुविधा', 'उलझन' और अन्य संग्रहों के माध्यम से प्रकाशित राजस्थानी लोककथाओं के महत्त्वपूर्ण और चर्चित होने का दूसरा बड़ा कारण यह है कि लोक की मौखिक परंपरा में शताब्दियों से प्रचलित इन कथाओं को लिखित रूप में ढालते समय विजयदान देथा ने जिस रचनात्मक कौशल, कल्पनाशीलता, आधुनिक भावबोध और साहित्य विवेक का परिचय दिया, वह लोक संपदा के रचनात्मक संग्रहण की एक मिसाल है। इसकी एक वजह यह भी है कि विजयदान देथा इस कार्य की प्रकृति, कठिनाइयों और इसकी प्रक्रिया से भलीभाँति परिचित रहे हैं।

फुलवाडी श्रृंखला का दसवाँ खंड सर्वाधिक चर्चित और महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इसी भाग की कथाओं को महत्त्वपूर्ण साहित्यिक अवदान मानते हुए साहित्य अकादेमी ने बिज्जी को 1974 में अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया और वहीं से राजस्थानी कृतियों पर अकादेमी पुरस्कारों की शुरुआत हुई। उन्हीं वर्षों में कुछ उभरते फिल्मकारों का राजस्थान की इस लोक-संपदा की ओर ध्यान आकृष्ट हुआ और मणि कौल ने 'दुविधा' कहानी पर जहाँ पहली कला फिल्म बनाई, इसी कथा को आधार बना कर अमोल पालेकर के निर्देशन में शाहरुख खान ने 'पहेली' फिल्म बनाई। हबीब तनवीर ने दसवें भाग की एक और कथा 'खांतीलौ चोर' का 'चरणदास चोर' के रूप में प्रभावशाली नाट्य-रूपांतर कर उसे देश के विभिन्न भागों में प्रस्तुत किया और अपूर्व ख्याति अर्जित की।

हिन्दी ही नहीं, भारतीय कथा जगत और विश्व साहित्य में विजयदान देथा ने पर्याप्त ख्याति अर्जित की है, साथ ही राजस्थानी भाषा के विकास और उन्नयन में उनकी ऐतिहासिक भूमिका से भाषायी मान्यता के दावे को बल मिला है।

❑ 71/247, मध्यम मार्ग
मानसरोवर, जयपुर-302020

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जहाँ लक्ष्मी कैद है

राजेन्द्र यादव

जरा ठहरिए, यह कहानी विष्णु की पत्नी लक्ष्मी के बारे में नहीं, लक्ष्मी नाम की एक ऐसी लड़की के बारे में है जो अपनी कैद से छूटना चाहती है। इन दो नामों में ऐसा भ्रम होना स्वाभाविक है जैसा कि कुछ क्षण के लिए गोविन्द को हो गया था।

एकदम घबराकर जब गोविन्द की आँखे खुलीं तो वह पसीने से तर था और उसका दिल इतने जोर से धड़क रहा था कि उसे लगा, कहीं अचानक उसका धड़कना बंद न हो जाये। अँधेरे में उसने पाँच-छः बार पलकें झपकायीं, पहली बार तो उसकी समझ में ही न आया कि वह कहाँ है, कैसा है- एकदम दिशा और स्थान का ज्ञान उसे भूल गया। पास के हॉल की घड़ी ने एक का घंटा बजाया तो उसकी समझ में ही न आया कि वह घड़ी कहाँ है, वह स्वयं कहाँ है और घंटा कहाँ बज रहा है। फिर धीरे-धीरे उसे ध्यान आया, उसने जोर से अपने गले का पसीना पोंछा और उसे लगा, उसके दिमाग में फिर वही खट्खट् गूँज उठी है, जो अभी गूँज रही थी . .. .।

पता नहीं, सपने में या सचमुच ही, अचानक गोविन्द को ऐसा लगा था, जैसे किसी ने किवाड़ पर तीन-चार बार खट्-खट् की हो और बड़े गिड़गिड़ाकर कहा हो- 'मुझे निकालो, मुझे निकालो!' और वह आवाज कुछ ऐसे रहस्यमय ढंग से आकर उसकी चेतना को कोंचने लगी कि वह बौखलाकर जाग उठा - सचमुच ही वह किसी की आवाज थी या महज उसका भ्रम?

फिर उसे धीरे-धीरे याद आया कि वह भ्रम ही था और वह लक्ष्मी के बारे में सोचता हुआ ऐसा अभिभूत सोया था कि वह स्वप्न में भी छायी रही। लेकिन वास्तव में यह आवाज कैसी विचित्र थी, कैसी साफ थी! - उसने कई बार सुना था कि अमुक स्त्री या पुरुष के स्वप्न में आकर कोई कहता- 'मुझे निकालो, मुझे निकालो!' फिर वह धीरे-धीरे स्थान की बात भी बताने लगता और वहाँ खुदवाने पर कड़ाहे या हाँडी में भरे सोने-चाँदी के सिक्के या माया उसे मिलती और वह देखते देखते मालामाल हो जाता। कभी कभी ऐसा भी हुआ कि किसी अनधिकारी आदमी ने उस द्रव्य को निकलवाना चाहा तो उसमें कौड़ियाँ और कोयले निकले या फिर उसके कोढ़ फूट आया या घर में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कोई मृत्यु हो गयी। कहीं इसी तरह, धरती के नीचे से उसे कोई लक्ष्मी तो नहीं पुकार रही है? और वह बड़ी देर तक सोचता रहा उसके दिमाग में फिर लक्ष्मी का किस्सा साकार होने लगा। वह मोहाछन्न सा पड़ा रहा. . . . .।

दूर कहीं दूसरे घड़ियाल ने फिर वही एक घंटा बजाया।

गोविन्द से अब नहीं रहा गया। रजाई को चारों तरफ से बंद रखे हुए ही बड़े संभालकर उसने कुहनी तक हाथ निकाला, लेटे ही लेटे अलमारी के खाने से किताब कॉपियों की बग़ल से उसने अधजली मोमबत्ती निकाली, वहीं कहीं से खोजकर दिया सलाई निकाली और आधा उठकर, ताकि जाड़े में दूसरा हाथ पूरा न निकालना पड़े, उसने दो तीन बार घिसकर दियासलाई जलायी, मोमबत्ती रौशन की और पिघले मोम की बूँद टपकाकर उसे दवात के ढक्कन के ऊपर जमा दिया। धीरे-धीरे हिलती रोशनी में उसने देख लिया कि किवाड़ पूरे बन्द हैं, और दरवाजे के सामने वाली दीवार में बने, जाली लगे रोशनदान के ऊपर, दूसरी मंजिल से हल्की-हल्की जो रोशनी आती है, वह भी बुझ चुकी है। सब कुछ कितना शांत हो चुका है। बिजली का स्विच यद्यपि उसके तख्त के ऊपर ही लगा था। लेकिन एक तो जाड़े में रजाई समेत या रजाई छोड़कर खड़े होने का आलस्य, दूसरे लाला रूपाराम का डर, सुबह ही कहेगा - 'गोविन्द बाबू, बड़ी देर तक पढ़ाई हो रही है आजकल।' जिसका सीधा अर्थ होगा कि बड़ी बिजली खर्च करते हो।

फिर उसने चुपके से, जैसे कोई उसे देख रहा हो, तकिये के नीचे से रजाई के भीतर-ही-भीतर हाथ बढ़ाकर वह पत्रिका निकाल ली और गर्दन के पास से हाथ निकालकर उसे सैंतालीसवें पन्ने को बीसवीं बार खोलकर बड़ी देर घूरता रहा। एक बजे की पठानकोट-एक्सप्रेस जब दहाड़ती हुई गुजर गयी तो सहसा उसे होश आया। 47 और 48 जो पन्ने उसके सामने खुले थे। उनमें जगह-जगह नीली स्याही से कुछ पंक्तियों के नीचे लाईने की तरफ विशेष रूप से ध्यान खींचा गया था। अब तक गोविन्द उन या उनके आस-पास की लाइनों को बीस बार से अधिक घूर चुका था। उसने शंकित निगाहों से इधर-उधर देखा और फिर एक बार उन पंक्तियों को पढ़ा।

जितनी बार वह उन्हें पढ़ता, उसका दिल एक अनजान आनन्द के बोझ से धड़क कर डूबने लगता और दिमाग उसी तरह भन्ना उठता जैसा उस समय भन्नाया था। जब वह पत्रिका उसे मिली थी। यद्यपि इस बीच उसकी मानसिक दशा कई विकट स्थितियों से गुजर चुकी थी। फिर भी वह बड़ी देर तक काली स्याही से छपे कहानी के अक्षरों को स्थिर निगाहों से घूरता रहा। धीरे धीरे उसे ऐसा लगा, यह अक्षरों की पंक्ति एक ऐसी खिड़की की जाली है, जिसके पीछे बिखरे बालों वाली एक निरीह लड़की का चेहरा झाँक रहा है और फिर उसके दिमाग में बचपन की सुनी कहानी साकार होने लगी- शिकार खेलने में साथियों का साथ छूट जाने पर भटकता हुआ एक राजकुमार अपने थके-माँदे घोड़े पर बिलकुल वीराने में, समुद्र के किनारे बने एक विशाल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुनसान किले के नीचे जा पहुँचा। वहाँ ऊपर खिड़की में उसे एक अत्यंत सुंदर राजकुमारी बैठी दिखायी दी, जिसे एक राक्षस ने लाकर वहाँ कैद कर दिया था. . . . । छोटे से छोटे विवरण के साथ खिड़की में बैठी राजकुमारी की तस्वीर गोविन्द की आँखों के आगे स्पष्ट और मूर्त होती गयी और उसे लगा, जैसे वही राजकुमारी उन रेखांकित, छपी लाइनों के पीछे से झाँक रही है- उसके गालों पर आँसुओं की लकीरें सूख गयी हैं, उसके होंठ पपड़ा गये हैं. . . . चेहरा मुरझा गया है और रेशमी बाल मकड़ी के जाले जैसे लगते हैं- जैसे उसके पूरे शरीर से एक आवाज निकलती है- 'मुझे छुडाओ, मुझे छुड़ाओ!'

गोविन्द के मन में उस अनजान राजकुमारी को छुड़ाने के लिए जैसे रह-रहकर कोई कुरेदने लगा। एक-आध बार तो उसकी बड़ी प्रबल इच्छा हुई कि अपने भीतर रह-रहकर कुछ करने की उत्तेजना को वह अपने तख्त और कोठरी की दीवार के बीच में बची दो फीट चौड़ी गली में घूम-घूमकर दूर कर दे।

तो क्या सचमुच लक्ष्मी ने यह सब उसी के लिए लिखा है? लेकिन उसने तो लक्ष्मी को देखा तक नहीं! अगर अपनी कल्पना में किसी जवान लड़की का चेहरा लाये भी तो वह आखिर कैसी हो? . .. . कुछ और भी बातें थीं कि वह लक्ष्मी के रूप में एक सुन्दर लड़की के चेहरे की कल्पना करते डरता था- उसकी ठीक शक्ल-सूरत और उम्र भी नहीं मालूम उसे .. . .

गोविन्द यह अच्छी तरह जानता था कि यह सब उसी के लिए लिखा गया है; ये लाइनें खींचकर उसी का ध्यान आकृष्ट किया गया है। फिर भी वह इस अप्रत्याशित बात पर विश्वास नहीं कर पाता था। वह अपने को इस लायक भी नहीं समझता था कि कोई लड़की इस तरह उसे संकेत करेगी। यों शहरों के बारे में उसने बहुत काफी सुन रखा था, लेकिन यह सोचा भी नहीं था कि गाँव से इंटर पास करके शहर आने के एक हफ्ते में ही उसके सामने एक 'सौभाग्यपूर्ण' बात आ जायेगी . .. . .

वह जब-जब इन पंक्तियों को पढ़ता तब-तब उसका सिर इस तरह चकराने लगता, जैसे किसी दस मंजिले मकान से नीचे झाँक रहा हो। जब उसने पहले-पहल ये पंक्तियाँ देखी थी तो इस तरह उछल पड़ा था, जैसे हाथ में अंगारा आ गया हो!

बात यह हुई कि वह चक्की वाले हॉल में ईंटों के तख्त जैसे बने चबूतरे पर हिसाब मिला रहा था, तभी लाला रूपाराम का सबसे छोटा, नौ-दस साल का लड़का रामस्वरूप उसके पास खड़ा हुआ। यह लड़का एक फटे-पुराने से चैस्टर की, जो साफ ही किसी बड़े भाई के चैस्टर को कटवाकर बनवाया गया होगा, जेबों में दोनों हाथो को ठूँसे पास खड़ा होकर उसे देखने लगा।

गोविन्द जब पहले ही दिन आया था और हिसाब कर रहा था, तभी यह लड़का भी आ खड़ा हुआ था। उस दिन लाला रूपाराम भी थे, इसलिए सिर्फ यह दिखाने को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कि वह उनके सुपुत्र में भी काफी रुचि रखता है, उससे नियमानुसार नाम, उम्र और स्कूल-क्लास इत्यादि पूछे थे; नाम रामस्वरूप, उम्र नौ साल, चुंगी-प्राइमरी स्कूल में चौथे क्लास में पढ़ता था। फिर तो सुबह-शाम गोविन्द उसे चैस्टर की छाया से ही जानने लगा, शक्ल देखने की जरूरत ही नहीं होती थी। चैस्टर के नीचे नेकर पहने होने के कारण उसकी पतली टाँगे खुली रहतीं, और वह पाँवों में बड़े पुराने किरमिच के जूते पहने रहता, जिनकी फटी-निकली जीभों को देखकर उसे हमेशा दुम-कटे कुत्ते की पूँछ का ध्यान हो आता था।

थोड़ी देर उसका लिखना ताकते रहकर लड़के ने चैस्टर के बटनों के कसाव और छाती के बीच में रखी पत्रिका निकालकर उसके सामने रख दी और बोला, ''मुंशी जी, लक्ष्मी जीजी ने कहा है, हमें कुछ और पढ़ने को दीजिए।''

''अच्छा, कल देंगे . .. . मन ही मन भन्नाकर उसने कहा।''

यहाँ आकर उसे जो 'मुंशी जी' का नया खिताब मिला है, उसे सुनकर उसकी आत्मा खाक हो जाती। 'मुंशी' नाम के साथ जो एक कान पर कलम लगाये, गोल मैली टोपी, पुराना कोट पहने, मुड़े-तुड़े आदमी की तस्वीर सामने आती है- उसे बीस-बाईस साल का युवक गोविन्द संभाल नहीं पाता।

लाला रूपाराम उसी के गाँव के हैं- शायद उसके पिता के साथ दो-तीन जमात पढ़े भी थे। शहर आते ही आत्मनिर्भर होकर पढ़ाई चला सकने के लिए किसी ट्यूशन इत्यादि या छोटे पार्ट-टाइम काम के लिए लाला रूपाराम से भी वह मिला तो उन्होंने अत्यंत उत्साह से उसके मृत बाप को याद करके कहा- 'भैया, तुम तो अपने ही बच्चे हो, जरा हमारी चक्की का हिसाब-किताब घंटे-आध घंटे देख लिया करो और मजे में चक्की के पास जो कोठरी है, उसमें पड़े रहो, अपने पढ़ो। आटे की यहाँ तो कमी है ही नहीं।' और अत्यंत कृतज्ञता से गद्गद वह उनकी कोठरी में आ गया, पहली रात हिसाब लिखने का ढंग समझाते हुए लाला रूपाराम, मोतियाबिंद वाले चश्में के मोटे-मोटे काँचों के पीछे से मोरपंखी के चंदोवे-सी दीखती आँखों और मोटे होठों से मुस्कराते, उसका सम्मान बढ़ाने को 'मुंशी जी' कह बैठे तो वह चौंक पड़ा। लेकिन उसने निश्चय कर लिया कि यहाँ जम जाने के बाद वह विनम्रता से इस शब्द का विरोध करेगा। रामस्वरूप से 'मुंशी जी' नाम सुनकर उसकी भौंहें तन गयीं, इसीलिए उसने उपेक्षा से वह उत्तर दिया था।

''कल जरूर दीजिएगा।'' रामस्वरूप ने फिर अनुरोध किया।

''हाँ भाई, जरूर देंगे।'' उसने दाँत पीसकर कहा; लेकिन चुप ही रहा। वह अक्सर लक्ष्मी का नाम सुनता था। हालांकि उसकी कोठरी बिलकुल सड़क की तरफ अलग ही पड़ती थी। लेकिन उसमें पीछे की तरफ जो एक जालीदार छोटा सा रोशनदान था, वह घर के भीतर नीचे की मंजिल के चौक में खुलता था। लाला रूपाराम का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परिवार ऊपर की मंजिल पर रहता था और नीचे सामने की तरफ पनचक्की थी, पीछे कई तरह की चीजों का स्टोर रूम था। इस 'लक्ष्मी' नाम के प्रति उसे उत्सुकता और रुचि इसलिए भी बहुत थी कि चाहे कोठरी में हो या बाहर, पनचक्की के हॉल में, हर पाँचवें मिनट पर उसका नाम विभिन्न रूपों में सुनायी देता था- 'लक्ष्मी बीबी ने यह कहा है', 'रुपये लक्ष्मी बीबी के पास हैं।', 'चाबी लक्ष्मी बीबी को दे देना।' और उसके जवाब में जो एक पतली तीखी-सी अधिकार पूर्ण आवाज सुनायी देती थी, उसे गोविन्द पहचानने लगा था। अनुमान से उसने समझ लिया कि यही लक्ष्मी की आवाज है। लेकिन स्वयं वह कैसी है? उसकी एक झलक भर देख पाने को उसका दिल कभी-कभी बुरी तरह तड़प सा उठता है। लेकिन पहले कुछ दिनों उसे अपना प्रभाव जमाना था, इसलिए वह आँख उठाकर भी भीतर देखने की कोशिश न करता। मन-ही-मन उसने समझ लिया कि यही लक्ष्मी है, काफी महत्त्वपूर्ण है. .. . . दिक्कत यह थी कि भीतर कुछ दिखायी भी तो नहीं देता था। सड़क के किनारे तीन-चार दरवाजे वाले इस चक्की के हॉल के बाद एक आठ-दस फीट लंबी गली थी और चौक के ऊपर लोहे का जाल पड़ा था। उस पर से ऊपर वाले लोग जब गुजरते थे तो लोहे की झनझनाहट से पहले तो उसका ध्यान हर बार उधर चला जाता था। बच्चे तो कभी-कभी और भी उछल-उछल कर उस पर कूदने लगते थे। यहाँ से जब तक किसी बहाने पूरी गली पार न की जाये, कुछ भी देखना असंभव था। चूंकि गुसलखाना और नल इत्यादि उसी चौक में थे। जिनकी वजह से नीचे प्रायः सीलन और गीलापन रहता था, इसलिए सुबह चौक में जाते हुए अत्यंत सीधे लड़के की तरह निगाहें नीची किये हुए भी वह ऊपर की स्थिति को भाँपने का प्रयत्न करता था। ऊपर सिर उठाकर आँख भर देख पाने की उसमें हिम्मत न थी। अपनी कोठरी का एक मात्र दरवाजा बंद करके, तख्त पर चढ़कर मकड़ी के जाले और धूल से भरे जालीदार रोशनदान से झाँककर उसने वहाँ की स्थिति को भी जानने की कोशिश की थी; लेकिन यह कम्बख्त जाली कुछ इस ढंग से बनी थी कि उसके 'फोकस' में पूरा सामने वाला छज्जा और एकाध फुट लोहे का जाल भर आता था। वहाँ कई बार उसे लगा, जैसे दो छोटे-छोटे तलुए गुजरे. . . . बहुत कोशिश करने पर टखने दीखे- हाँ, हैं तो किसी लड़की के पैर, क्योंकि साथ में धोती का किनारा भी झलका था .. . . उसने एक गहरी साँस ली और तख्त से उतरते हुए बड़े एक्टराना अंदाज में छाती पर हाथ मारा और बुदबुदाया-'अरे लक्ष्मी जालिम, एक झलक दो दिखा देती .. . .'

"मुंशी जी, तुम तो देख रहे हो, लिखते क्यों नहीं?" रामस्वरूप ने जब देखा कि गोविन्द धीरे-धीरे होल्डर का पिछला हिस्सा दाँतों में ठोंकता हुआ हिसाब की कॉपी में अपलक कुछ घूर रहा है तो पता नहीं कैसे यह बात उसकी समझ में आ गयी कि वह जो कुछ सोच रहा है, उसका संबंध सामने रखे हिसाब से नहीं है .. . . .

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने चौंककर लड़के की तरफ देखा.. .. और चोरी पकड़ी जाने पर झेंपकर मुस्कराया, तभी अचानक एक बात उसके दिमाग में कौंधी - यह लक्ष्मी रामस्वरूप की बहन ही तो है। जरूर उसका चेहरा इससे काफी मिलता-जुलता होगा। इस बार उसने ध्यान से रामस्वरूप का चेहरा देखा कि वह सुन्दर है या नहीं। फिर अपनी बेवकूफी पर मुस्कराकर एक अँगडाई ली। चारों तरफ ढीले हुए कंबल को फिर से चारों ओर कस लिया और अप्रत्याशित प्यार से बोला, ''अच्छा मुन्ना, कल सुबह दे देंगे।'' उसकी इच्छा हुई कि वह उससे लक्ष्मी के बारे में कुछ बात करे, लेकिन सामने ही चौकीदार और मिस्तरी सलीम काम कर रहे थे .. . ..

असल में आज वह थक भी गया था। अचानक व्यस्त होकर बोला और जल्दी-जल्दी हिसाब करने लगा। दुनिया भर की सिफारिशों के बाद उसका नाम कॉलेज के नोटिसबोर्ड पर आ गया कि वह ले लिये गये लड़कों में से है। आते समय कुछ किताब और कॉपियाँ भी खरीद लाया था, सो आज वह चाहता था कि जल्दी से जल्दी अपनी कोठरी में लेटे और कुछ आगे-पीछे की बातें .. .. दुनिया भर की बातें सोचता हुआ सो जाये .. . सोचे, लक्ष्मी कौन है .. . . वह उसके बारे में किससे पूछे?. .. . कोई उसका हमउम्र और विश्वास का आदमी भी तो नहीं है। किसी से पूछे और रूपाराम को पता चल जाये, तो? लेकिन अभी तीसरा ही तो दिन है. . .मन-ही-मन अपने पास रखी पत्रिकाओं और कहानी की पुस्तकों की गिनती करते हुए वह सोचने लगा कि इस बार उसे कौन सी देनी है.. . . आगे जाकर जब काफी दिन हो जायेंगे तो वह चुपचाप उसमें एक छोटा सा पत्र रख देगा जो किसी दोस्त के नाम लिखा गया होगा या उसकी भाषा ऐसी होगी कि पकड़ में न आ सके .. .. भूल से चला गया, पकड़े जाने पर वह आसानी से कह सकेगा- उसे तो ध्यान भी नहीं था कि वह पर्चा उसमें रखा है। बीस जवाब हैं। अपनी चालाक बेवकूफी की कल्पना कर वह मुस्कराने लगा।

जिसके विषय में वह इतना सब सोचता है, वह उसी लक्ष्मी के पास से आयी हुई पत्रिका है- उसने इसे अपने कोमल हाथों से छुआ होगा, तकिये के नीचे, सिरहाने भी यह रही होगी.. . . लेटकर पढ़ते हुए हो सकता है, सोचते-सोचते छाती पर भी रखकर सो गयी हो .. . . और उसका तन-मन गुदगुदा उठा। क्या लक्ष्मी उसके विषय में बिलकुल ही न सोचती होगी? हिसाब लिखने की व्यस्तता में भी उसने गर्दन मोड़कर एक हाथ में पत्रिका के पन्ने पलटने शुरु कर दिये और एक कोना-मुड़े पन्ने पर अचानक उसका हाथ ठिठक गया- यह किसने मोड़ा है? एक मिनट में हजारों बातें उसके दिमाग में चक्कर लगा गयीं। उसने पत्रिका उठाकर हिसाब की कॉपी पर रख ली। मुड़ा पन्ना पूरा खुला था। छपे पन्ने पर जगह-जगह नीली स्याही से निशान देखकर वह चौंक पड़ा। ये किसने लगाये हैं? उसे खूब अच्छी तरह ध्यान है, ये पहले नहीं थे .. . .

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मैं तुम्हे प्राणों से अधिक प्यार करती हूँ . .. ." उसने एक नीली लाइन के ऊपर पढा. .. .

"अयं! यह क्या चक्कर है .. .. ?" वह एकदम जैसे बौखला उठा। उसने फौरन ही सामने बैठे मिस्तरी सलीम और दिलावरसिंह को देखा, वे अपने में ही व्यस्त थे। उसकी निगाह अपने आप दूसरी लाइन पर फिसल गयी।

'मुझे यहाँ से भगा ले चलो. .. . '

"अरे .. ..!"

तीसरी लाइन - 'मैं फाँसी लगाकर मर जाऊँगी.. .. ।'

और गोविन्द इतना घबरा गया कि उसने फट से पत्रिका बंद कर दी। शंका से इधर-उधर देखा, किसी ने ताड़ तो नहीं लिया? उसके माथे पर पसीना उभर आया और दिल चक्की के मोटर की तरह चलने लगा। पत्रिका के उन पन्नों के बीच में ही उँगली रखे हुए उसने उसे घुटने के नीचे छिपा लिया। कहीं दूर से रंग-बिरंगी कवर की तस्वीर को देखकर यह कंबख्त चौकीदार ही न माँग बैठे। इन पंक्तियों को एक बार फिर देखने की दुर्निवार इच्छा उसके मन में हो रही थी; लेकिन जैसे हिम्मत न पड़ती थी। क्या सचमुच ये निशान लक्ष्मी ने ही लगाये हैं? कहीं किसी ने मजाक तो नहीं किया? लेकिन मजाक उससे कौन करेगा, क्यों करेगा? ऐसा उसका कोई परिचित भी तो नहीं है यहाँ तीन दिन में ही ऐसी हिम्मत कर डाले।

उसने फिर पत्रिका निकालकर पूरी उलट-पुलट डाली। नहीं, निशान वही हैं, बस। वह उन तीनों लाइनों को फिर एकसाथ पढ़ गया और उसे ऐसा लगा, जैसे उसके दिमाग में हवाई जहाज भन्ना उठा हो। गोविन्द का दिमाग चकरा रहा था, दिल धड़क रहा था, और जो हिसाब वह लिख रहा था, वह तो जैसे एकदम भूल गया। उसने कलम के पिछले हिस्से से कान के ऊपर खुजलाया, खूब आँखे गढ़ाकर जमा और खर्च के खानों को देखने की कोशिश की, लेकिन बस नस-नस में सन-सन करती कोई चीज दौड़े जा रही थी। उसे लगा, उसका दिल फट जायेगा। और आतिशबाजी के अनार की तरह दिमाग फूट पड़ेगा. .. अब वह किससे पूछे? ये सब निशान किसने लगाये हैं? क्या सचमुच लक्ष्मी ने?

इस मधुर सत्य पर विश्वास नहीं होता। मैं चाहे उसे न देख पाया होऊँ, उसने तो जरूर ही मुझे देख लिया होगा। अरे, ये लड़कियाँ बडी तेज होती हैं। गोविन्द की इच्छा हुई, अगर उसे इसी क्षण शीशा मिल जाये तो वह लक्ष्मी की आँखों से एक बार अपने को देखे- कैसा लगता है?

लेकिन वह लक्ष्मी कौन है? विधवा, कुमारी, विवाहिता, परित्यक्ता, क्या? कितनी बड़ी है? कैसी है? उसकी नस-नस में एक प्रबल मरोड़ सी उठने लगी। कि वह अभी उठे और दौड़कर भीतर के आँगन की सीढ़ियों से धड़ाधड़ चढ़ता हुआ ऊपर जा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पहुँचे। लक्ष्मी जहाँ भी, जिस कमरे में बैठी हो, उसके दोनों कंधे झकझोर कर पूछे- 'लक्ष्मी, लक्ष्मी, यह सब तुमने लिखा है? तुम नहीं जानती लक्ष्मी, मैं कितना अभागा हूँ। मैं कतई इस सौभाग्य के लायक नहीं हूँ।' और सचमुच इस अप्रत्याशित सौभाग्य से गोविन्द का हृदय इस तरह पसीज उठा कि उसकी आँखों में आँसू आ गये। डोरी से लटकते हुए बल्ब को अपलक देखता हुआ वह अपने अतीत और भविष्य की गहराईयों में उतरता चला गया; फिर उसने धीरे से अपनी कोरों में भरे आँसुओं को उँगली पर लेकर इस तरह झटक दिया, जैसे देवता पर चंदन चढ़ा रहा हो। उसका ढीला पड़ा हाथ अब भी पत्रिका के पन्ने को पकड़े था।

एक बार उसने फिर उन पंक्तियों को देखा- मान लो लक्ष्मी उसके साथ भाग जाये? कहाँ जायेंगे वे लोग? कैसे रहेंगे? उसकी पढ़ाई का क्या होगा? बाद में पकड़ लिये गये तो?

लेकिन आखिर यह लक्ष्मी है कौन?

लक्ष्मी के बारे में प्रश्नों का एक झुंड उसके दिमाग पर टूट पड़ा, जैसे शिकारी कुत्तों का बाड़ा खोल दिया गया हो या एक के बाद एक सिर पर कोई हथौड़े की चोटें कर रहा हो, बड़ी निर्ममता और क्रूरता से। जैसे छत पर से अचानक गिर पड़ने वाले आदमी के सामने सारी दुनिया एक झटके के साथ, एक क्षण में चक्कर लगा जाती है, उसी तरह उसके सामने सैंकड़ों-हजारों चीजें एकसाथ चमक कर गायब हो गयीं।

ईंटों के ऊँचे चौकोर तख्तनुमा चबूतरे पर पुरानी छोटी-सी संदूकची के आगे बैठा गोविन्द हिसाब लिख रहा था और अभी हिसाब न मिलने के कारण जो कच्चे पुर्जे इधर-उधर बिखरे थे, वे सब यों ही बिखरे रहे। उसने खुले लेजर-रजिस्टर पर दोनों कुहनियाँ टिका दीं और हथेलियों से आँखें बद कर लीं .. . . कनपटी के पास की नसें चटख रही थीं। ऐसा तो कभी देखा सुना नहीं .. . . सिनेमा, उपन्यासों में भी नहीं देख पढ़ा। सचमुच इन निशानों का क्या मतलब है? क्या लक्ष्मी ने ही ये लाइनें खींची हैं? हो सकता है, किसी बच्चे ने ही खींच दी हों .. . . इस संभावना से थोड़ा चौंककर गोविन्द ने फिर पन्ना खोला- नहीं बच्चा क्या सिर्फ इन्हीं लाइनों के नीचे निशान लगाता? और लकीरें इतनी सधी और सीधी हैं कि किसी बच्चे की हो ही नहीं सकती। किसी ने उसे व्यर्थ परेशान करने को तो निशान नहीं लगा दिये? हो सकता है, वह लक्ष्मी बहुत चुहलबाज हो और जरा छकाने को उसी ने सब किया हो .. . .

यद्यपि गोविन्द इस तरह आँखें बंद किये सोच रहा था; लेकिन उसे मन-ही-मन डर था कि मिस्तरी और दरबान उसे देखकर कुछ समझ न जायें। सबसे बड़ा डर उसे लाला रूपाराम का था। अभी रूई-भरी, सकलपारों वाली सिलाई की, मैली सी पूरी बाँहों की मिरजई पहने और उस पर मैली चीकट, युगों पुरानी अंडी लपेटे, धीरे-धीरे हाँफते हुए बेंत टेकते बड़े कष्ट से सीढ़िया उतरकर वे आयेंगे . . ..

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अचानक बेंत की खट्-खट् से चौंककर उसने जो आँखों के आगे से हाथ हटाये तो देखा, सच ही लाला रूपाराम चले आ रहे हैं। अरे, कंबख्त याद करते ही आ पहुँचा। बैठे हुए देख तो नहीं लिया? उसने झट पत्रिका को घुटने के नीचे और भी सरका लिया और सामने फैले पुर्जां पर आँखें टिकाकर व्यस्त हो उठा। मिस्तरी और चौकीदार की खुसुर-पुसुर बंद हो गयी। गली सी पार करके लाला रूपाराम ने प्रवेश किया।

मोटे-मोटे शीशों के पीछे से उनकी आँखें बड़ी होकर भंयकर दिखती थीं। आँखों और पलकों का रंग मिलकर ऐसा दिखायी देता था, जैसे पीछे मोरपंख के चंदोवे लगे हों। सिर पर रूई भरा कंटोपा था, उसके कानों को ढकने वाले मोटर के 'मडगार्ड' जैसे कोने अब ऊपर मुड़े थे। चेहरा उनका झुर्रियों से भरा था और चश्में का फ्रेम नाक के ऊपर से टूट गया था। उसे उन्होंने डोरा लपेटकर मजबूत कर लिया था। दाँत उनके नकली थे। और शायद ढीले भी थे; क्योंकि उन्हें वे हमेशा इस तरह मुँह चला-चलाकर पीछे सरकाये रखते थे जैसे 'चुइंगम' चबा रहे हों। गोविन्द को उनके इस मुँह चलाने और मुँह से निकलती तरह-तरह की आवाजों से बड़ी उबकाई सी आती थी और जब वे उससे बात करते तो वह प्रयत्न करके अपना ध्यान उस ओर से हटाये रखता। लाला रूपाराम की गर्दन हमेशा इस तरह हिलती रहती, जैसे खिलौने वाले बुड्ढे की गर्दन का स्प्रिंग ढीला हो गया हो! घुटनों तक की मैली कुचैली धोती और मिलिटरी के कबाड़िया बाजार से खरीदकर लाये गये मोजों पर बाँधने की पट्टियाँ जो शायद उन्हें गठिया के दर्द से भी बचाती थीं; बिना फीते के खींसें निपोरते फटे-पुराने बूट- उन्हें देखकर हमेशा गोविन्द को लगता कि इस आदमी का अंत समय निकट आ गया है।

जब लाला रूपाराम पास आ गये तो उनके सम्मान में चेहरे पर चिकनाई वाली मुस्कान लाकर उनकी ओर देखते हुए स्वागत किया। ईंटों के चबूतरे पर लगभग दो सौ स्याही के दाग और छेद वाली दरी पर, रामस्वरूप के उससे सटकर खडे होने से, एक मोटी सी सिकुडन पड गयी थी उसे हाथ से ठीक करके उसने कहा, "लाला जी, यहाँ बैठिए।"

लाला जी ने हाँफते हुए बिना बोले ही इशारा कर दिया कि नहीं वे ठीक हैं। और वे टीन की कुर्सी पर ही उसकी ओर मुँह करके बैठ गये और हाँफते रहे। असल में उन्हें साँस की बीमारी थी और वे हमेशा प्यासे कुत्ते की तरह हाँफते रहते थे। उनके वहाँ आ बैठने से एक बार तो गोविन्द काँप उठा, कहीं कंबख्त को पता तो नहीं चल गया? कुछ पूछने-ताछने न आया हो। हालांकि लाला रूपाराम इस समय खा-पीकर एक बार चक्कर लगाते थे, लेकिन उसे विश्वास हो गया कि हो न हो बुड्ढा ताड़ गया है। उसका दिल धसक चला। आखिर स्थिति संभालने की दृष्टि से उसने कहा, "लाला जी, आज मेरा नाम आ गया कालेज में।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अच्छा!" लाला जी ने खाँसी के बीच में ही कहा। वह एक हाथ से डंडे को धरती पर टेके थे, दूसरे हाथ में कलाई तक गोमुखी बँधी थी, जिसके भीतर उँगलियाँ चला-चलाकर वह माला घुमा रहे थे। और उनका वह हाथ टोंटा-सा लग रहा था।

वातावरण का बोझ बढ़ता ही चला जा रहा था कि एक घटना हो गयी।

उन्होंने साँस इकट्ठी करके कुछ बोलने को मुँह खोला ही था कि भीतर आँगन का टट्टर (लोहे का जाल) भंयकर रूप से झनझना उठा, जैसे कोई बहुत ही भारी चीज ऊपर से फेंक दी गयी हो। और फिर जोर से बजती हुई खनखनाती कल्छी जैसी चीज नीचे आ गिरी; उसके पीछे चिमटा, संडासी.. .. और फिर तो उसे लगा जैसे कोई बाल्टी, कडाही, तवा इत्यादि निकालकर टट्टर पर फेंक रहा है और पानी और छोटी मोटी चीजें गिर रही हैं। उसके साथ कुछ ऐसा कोलाहल और कुहराम भीतर सुनायी दिया, जैसे आग लग गयी हो!

गोविन्द झटककर सीधा हो गया- कहीं सचमुच आग-वाग तो नहीं लग गयी? उसने प्रश्नसूचक दृष्टि से चौंककर लाला की तरफ देखा और वह आश्चर्य से अवाक् रह गया। लाला परेशार जरूर दिखाई देता था लेकिन कोई भयंकर घटना हो गयी है और उसे दौड़कर जाना चाहिए, ऐसी कोई बात उसके चेहरे पर नहीं थी। मिस्तरी और चौकीदार, दोनों बड़े दबे व्यंग्य से एक दूसरे की ओर देखते, मुस्कराते, लाला की ओर निगाहें फेंक रहे थे। किसी को कोई खास चिंता नहीं थी। भीतर कोलाहल बढ़ रहा था, चीजें फिंक रही थीं और टट्टर की खड़खड़ाहट घनघनाहट गूँजती जा रही थी। आखिर यह क्या हो रहा है? उत्तेजना से उसकी पसलियाँ तड़कने को हो गयीं। वह लाला से यह पूछने ही वाला था कि यह क्या है, तभी बड़े कष्ट से हाथ की लकड़ी पर सारा जोर देकर वह उठ खडा हुआ . . . और घिसटता-सा जहाँ से आया उसी गली में चला गया। जाते हुए उलटकर धीरे से उसने किवाड़ बंद कर दिये। मिस्तरी और चौकीदार ने मुक्त होकर बदल ढीला किया, एक दूसरे की ओर मुस्कराये। लाला का पीछा करती गोविन्द की निगाह अब उन लोगों की ओर मुड़ गयी। और जब उससे नहीं रहा गया तो वह खड़ा हो गया। मुर्गे के पंखों की तरह कंबल को बाँहों पर फड़फड़ाकर उसने लपेटा और उस पत्रिका को देखता हुआ चबूतरे से नीचे उतर आया। थोड़ी देर यों ही असमंजस में खड़ा रहा, फिर उस गलियारे के दरवाजे तक गया कि कुछ दिखायी सुनायी दे। कोलाहल में चार-पाँच आवाजें एकसाथ किवाड़ की दरार से घुटी-घुटी सुनायी दीं और उसमें सबसे तेज आवाज वही थी जिसे उसने लक्ष्मी की आवाज समझ रखा था। हे भगवान, क्या हो गया? कोई कहीं से गिर पड़ा, आग लग गयी, साँप-बिच्छू ने काट लिया? लेकिन जिस तरह ये लोग बैठे देख रहे थे, उससे तो ऐसा लगता था जैसे यह कोई खास बात नहीं है। यह कंबख्त किवाड क्यों बंद कर गया? इस वक्त टट्टर इस तरह धमाधम बज रहा था, जैसे उस पर कोई तांडव कर रहा हो। उस ऊँची, चीखती महीन आवाज में वह नारी कंठ, जिसे वह लक्ष्मी की आवाज समझता था,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इतनी तेज और जोर से बोल रहा था कि लाख कोशिश करने पर भी वह कुछ नहीं समझ सका।

"परेशान क्यों हो रहे हो बाबू जी?" चौकीदार की आवाज सुनकर वह एकदम सीधा खड़ा हो गया। मुस्कराता हुआ वह कह रहा था, "आज चंडी चेत रही है।" उसकी इस बात पर मिस्तरी हँसा।

गोविन्द बुरी तरह झुँझला उठा। कोई इतनी बड़ी बात, घटना हो रही है और ये बदमाश इस तरह मजा लूट रहे हैं! फिर भी वह अत्यंत चिंतित और उत्सुक सा उधर मुड़ा।

इस बड़े कमरे या छोटे हॉल में हर चीज पर आटे का महीन पाउडर छाया हुआ था। एक ओर आटे में नहायी चक्की, काले पत्थर के बने हाथी की तरह चुपचाप खड़ी थी और उसका पिसे आटे को संभालने वाला गिलाफ़ हाथी की सूँड की तरह लटका था। उसी की सीध में दूसरी दीवार के नीचे मोटर लगी थी, जहाँ से एक चौडा पट्टा चक्की को चलाता था। इतने हिस्से में सुरक्षा के लिए एक रेलिंग लगा दिया गया था। सामने की दीवार में चिपके लंबे-चौड़े लाल चौकोर तख्ते पर एक खोपड़ी और दो हड्डियों के क्रास के नीचे 'खतरा' और 'डेंजर' लिखे थे। उसके चबूतरे की बगल में ही छत से जाती जंजीर में एक बड़ी लोहे की तराजू, कथकली की मुद्रा में एक बाँह ऊँची किये लटकी थी, क्योंकि दूसरे पलड़े में मन से लेकर छटाँक तक के बाटों का ढेर लगा था। यद्यपि लाला रूपाराम अक्सर चौकीदार को डाँटते थे कि रात में इसे उतारकर रख दिया कर; लेकिन किसी-किसी दिन आधी रात तक चक्की चलती और दुकान दफ्तर वाले तो सुबह पाँच बजे से ही आने लगते- उस समय बर्फ जैसी ठंडी तराजू को छूना और टाँगना दिलावरसिंह को अधिक पसंद नहीं था। वह उसे यह कहकर टाल देता कि लड़ाई में सुबह-ही-सुबह काफी ठंडी बंदूकें लेकर मार्च और परेड कर लिया, अब क्या जिंदगी भर ठंडा लोहा ही छूना उसकी किस्मत में बदा है? इसीलिए वह उसे टँगी ही रहने देता। हालांकि ठीक बीच में होने के कारण वह जब भी दरवाजा खोलने उठता तो खुद ही उससे टकराता उलझता और रात के एकांत में फौजी गालियों का स्वागत भाषण करता। पुराना कैलेंडर, एक ओर पिसाई के लिए भरे अन्न, या पिसे आटे के बौरे, कनस्तर, पोटलियाँ और ऊपर चढ़कर अन्न डालने का मजबूत सा स्टूल। इस समय दोनों टाँगें जिनमें कीलदार फूलबूट डटे हुए थे, धरती पर फैलाये चौकीदार मजे में खाट की पाटी पर झुका बैठा अपना पुराना-पहली लड़ाई के सिपाहीपने की याद-ग्रेटकोट चारों ओर लपेटे शान से बीड़ी धौंक रहा था और धीरे-धीरे सामने बैठे मिस्तरी सलीम से बातें भी करता जा रहा था।

उसके और मिस्तरी के बीच में एक बरोसी जल रही थी; जब कभी ध्यान आ जाता तो पास रखे कोयले-लकड़ी कुछ डाल देता और कभी कभी अत्यंत निस्पृहता के हाथ या पाँव उस दिशा में बढ़ाकर गर्मी सोखता। सलीम सिर झुकाये गर्म पानी की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बाल्टी में ट्यूब डुबा-डुबाकर उनके पंक्चर देखने में व्यस्त था। उसके आस-पास दस बारह काले लाल ट्यूब, रबर की कतरनें, कैंची, पेंचकस, प्लास, सोल्यूशन, चमड़े की पेटी और एक ओर टायर लटके दस-बारह साइकिल के पहियों का ढेर था। अपने इस सामान से उसने आधे से ज्यादा कमरा घेर लिया था।

जब गोविन्द उसके पास आया तो वह सिर झुकाये ही हँसता हुआ ट्यूब के पंक्चर को पकड़कर कान में लगी कॉपीइंग पेंसिल को थूक से गीला करते हुए (हालांकि ट्यूब पानी से भीगा था, और सामने पानी भरी बाल्टी भी रखी थी) निशान लगाता हुआ जवाब दे रहा था, ''यह कहा जमादार साहब ने?'' फिर एक भौंह को जरा तिरछी करके बोला, ''लाला कुछ नामा ढीला करे तो. .. . उसकी लड़की पर जिन का साया है, उसका इलाज तो हम अपने मौलवी बदरुद्दीन साहब से मिनटों में करा दें।''

गोविन्द का माथा ठनका, लाला की किसी लड़की पर क्या कोई देवी आती है? उसे अपने गाँव की एक ब्राह्मणी विधवा, तारा का एकदम ध्यान हो आया। उसे भी जब देवी आती थी तो घर के बर्तन उठा-उठाकर फेंकती थी, उसका सारा बदन ऐंठने लगता था मुँह से झाग आने लगते थे, गर्दन मरोड़ खाने लगती थी, आँखे और जीभ बाहर निकलने लगती थी। कौन लड़की है लाला की? लक्ष्मी तो नहीं? भगवान करे लक्ष्मी न हो! उसका दिल आशंका से डूबने सा लगा। उसने सुना, कोलाहल अब लगभग शांत हो गया था और कहीं दूर से रह-रहकर एक हल्की रोने की आवाज भर सुनायी देती थी। शायह किसी को दौरा-बौरा ही आ गया है, तभी तो ये लोग निश्चिंत हैं।

गोविन्द को सुनाकर चौकीदार बोला, ''नामा? तुम भी यार मिस्तरी, किसी दिन बेचारे बुड्ढे का हार्टफेल कराओगे। और बेटा, इस 'जिन' का इलाज तुम्हारे मौलवी के पास नहीं है, समझे? वह तो हवा ही दूसरी है। आओ बाबू जी बैठो।''

चौकीदार ने बैठे-बैठे स्टूल की तरफ इशारा किया। असल में वह गोविन्द 'बाबू जी' जरूर कहता था; और उसे शहर में चौकीदारी करते हो चुके थे नकद बीस साल; दूसरे वह फौज में रहा था और कैरो तक घूम आया था। उम्र, अनुभव, तहजीब सभी में वह अपने को गोविन्द से ज्यादा ही समझता था। लेकिन गोविन्द को इस समय इस सबका ध्यान नहीं था। उसने स्टूल से टिककर जरा सहारा लेते हुए चिंतित स्वर में पूछा, ''क्यों भई, यह शोरगुल क्या था? क्या हो रहा था?''

मिस्तरी ने सिर उठाकर उसे देखा और चौकीदार की मुस्कराती नजरों से उसकी आँखें मिली। उसने अपनी खिचड़ी मूँछों पर हथेली फेरते हुए कहा, ''कुछ नहीं बाबू जी, ऊपर कोई चीज किसी बच्चे ने गिरा दी होगी। .. .''

मिस्तरी ने कहा, ''जमादार साहब झूँठ क्यों बोलते हो? साफ साफ क्यों नहीं बता देते? अब इनसे क्या छिपा रहेगा?''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''तू खुद क्यों नहीं बता देता?'' चौकीदार ने कहा और जेब से बीड़ी का बंडल निकाल लिया, कागज नोचकर आटे की लोई बनाने की तरह उसे ढीला किया, फिर एक बीड़ी निकालकर मिस्तरी की ओर फेंकी। दूसरी को दोनों तरफ से फूँका और जलाने के लिए किसी दहकते कोयले की तलाश में बरोसी में निगाहें घुमाते जरा व्यस्तता से बात जारी रखी, '' तुझे क्या मालूम नहीं है?''

इन दोनों की चुहल से गोविन्द की झुंझलाहट बढ़ रही थी। उसे लगा, जरूर ही दाल में काला है। जिसे ये लोग टाल रहे हैं। मिस्तरी जीभ निकाले पंक्चर के स्थान को रेगमाल से घिस रहा था। वह जब भी कोई काम एकाग्रचित से करता है तो अपनी जीभ को निकालकर ऊपर के होंठ की तरफ मोड़ लेता था। उसकी चाँद के बीच में उभरते गंज को देखकर गोविन्द ने सोचा कि गंजापन तो रईसी की निशानी है, लेकिन यह कंबख्त तो आधी रात में पंक्चर जोड़ रहा है। उसने उसी तरह सिर झुकाये ही कहा, ''अब मैं बाबू जी को किस्सा बताऊँ या इन ट्यूबों से सिर फोड़ूँ? साले सड़कर हलुआ तो हो गये हैं, पर बदलेगा नहीं। मन तो होता है, सबको उठाकर इस अँगीठी में रख दूँ, होगा सुबह सो देखा जायेगा।''

''ये इतने ट्यूब हैं काहे के?'' जरा आत्मीयता जताने को गोविन्द ने पूछा, ''हालत तो सचमुच इनकी बड़ी खराब हो रही है।''

''आपको नहीं मालूम?'' इस बार काम छोड़कर मिस्तरी ने गौर से गोविन्द को देखा, ''यह आपके लाला के जो दो दर्जन रिक्शा चलते हैं, उनका कूड़ा है। यह तो होता नहीं कि इतने रिक्शे हैं, रोज टूट-फूट, मरम्मत होती ही रहती है। हमेशा के लिए लगा ले एक मिस्तरी, दिन भर की छुट्टी हुई। सो तो नहीं ट्यूब टायर मेरे सिर हैं और बाकी टूट-फूट मिस्तरी अली अहमद ठीक करते हैं।'' फिर उनसे यू ही पूछा, ''आप बाबू जी, नये आये हैं?''

''हाँ, दो-तीन दिन ही तो हुए है। मैं यहाँ पढ़ने आया हूँ।'' गोविन्द ने कहा उसके पेट में खलबलाहट मच रही थी। लेकिन वह नये सिरे से पूछने का सूत्र खोज रहा था।

''तभी तो,'' मिस्तरी बोला ''तभी तो आप यह सब पूछ रहे हैं। रात को इसका हिसाब रखते हैं न? हाँ, थोड़े दिनों में अपने फरजंद को भी आपसे पढ़वायेगा।'' अपने ''फरजंद'' शब्द में जो व्यंग्य उसने दिया था, उससे खुद ही प्रसन्न होकर मुस्कराते हुए उसने चौकीदार की दी हुई बीड़ी सुलगायी।

''नहीं, सच, मुझे कुछ नहीं मालूम।'' गोविन्द ने जरा आश्वासन के स्वर में कहा, ''इन लाला के तो पिता ही यहाँ चले आये थे न, सो हम लोगों को कुछ भी नहीं मालूम। बताइये न, क्या बात है?'' गोविन्द ने आदरपूर्वक जरा खुशामद के लहजे में पूछा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शायद उसकी जिज्ञासु व्याकुलता से प्रभावित होकर ही मिस्तरी बोला, ''अजी कुछ नहीं, लाला की बड़ी लड़की जो है न, उसे मिरगी का दौरा आता है। कोई कहता है उसे हिस्टीरिया है, पर हमारा तो कयास है कि बाबू जी, दौरा-बौरा कुछ नहीं, उस पर किसी आसेब का साया है . .. . . उस बेचारी को तो कुछ होश नहीं रहता।''

''विधवा है?'' जल्दी से बात काटकर गोविन्द धक्-धक्करते दिल से पूछ बैठा-हाय, लक्ष्मी ही न हो।

इस बार पुनः दोनों की निगाहों का आपस में टकराकर मुस्कराना उससे छिपा न रहा। बीड़ी के लंबे कश के धुएँ को लीलकर इस बार चौकीदार जबरदस्ती गंभीर बनकर बोला, ''अजी, इसने उसकी शादी ही कहाँ की है?''

''नाम क्या है?'' गोविन्द से नहीं रहा गया।

''लक्ष्मी।''

''लक्ष्मी .. . .! उसके मुँह से निकल गया और जैसे एकदम उसकी सारी शक्ति किसी ने सोख ली हो, जिज्ञासा और उत्तेजना से तना शरीर ढीला पड़ गया।''

चौकीदार इस बार अत्यन्त ही रहस्यमय ढंग से हँसा, जैसे कह रहा हो- अच्छा तुम भी जानते हो?

गोविन्द के मन में स्वाभाविक प्रश्न उठा, उसकी उम्र क्या है?

लेकिन चौकीदार ने पूछा, ''तो सचमुच बाबू जी, आप इनके घर के बारे में कुछ भी नहीं जानते?''

''नहीं भाई, बताया तो, मैं इनके बारे में कुछ भी कतई नहीं जानता।'' एक तरह आत्म-समर्पण के भाव से गोविन्द बोला।

''लेकिन लक्ष्मी का किस्सा तो सारे शहर में मशहूर है,'' चौकीदार बोला।

''आप शायद नये आये हैं, यही वजह है।'' फिर मिस्तरी की ओर देखकर बोला, ''क्यों मिस्तरी साहब, तो बाबू जी को किस्सा बता ही दूँ. .. .।''

''अरे लो, यह भी कोई पूछने की बात है? इसमें छिपाना क्या? यहाँ रहेंगे तो कभी न कभी जान ही जायेंगे।''

''अच्छा तो फिर सुन ही लो यार, तुम भी क्या कहोगे .. . . '' चौकीदार ने आनन्द में आकर कहना शुरू किया, ''आप शायद जानते है, यह हमारा लाला शहर का मशहूर कंजूस और मशहूर रईस है. . . ।''

''लामुहाला जो कंजूस होगा वो रईस तो होगा ही।'' मिस्तरी बोला।

''नहीं मिस्तरी साहब, पूरा किस्सा सुनना हो तो बीच में मत टोको।'' चौकीदार इस हस्तक्षेप पर नाराज हो गया।

''अच्छा-अच्छा सुनाओ'' मिस्तरी बुड्ढ़ों की तरह मुस्कराया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"इसकी यह चक्की है न, सहालगों में इस पर हजारों मन पिसता है, वैसे भी दो-ढाई सौ मन तो कम से कम पिसता ही है रोज। अफसरों और क्लर्कों को कुछ खिला-पिलाकर लड़ाई के जमाने में इसे मिलिटरी से कुछ ठेके मिल ही जाते थे। आप जानो, मिलिटरी का ठेका तो जिसके पास आया सो बना। आप उन दिनों देखते 'लक्ष्मी फ्लोर मिल' के हल्ले। बोरे यों चुने रखे रहते थे, जैसे मोर्चे के लिए बालू-भर भरकर रख दिये हों! इसमें इसने खूब रुपया पीटा, मिलिटरी के गेहूँ बेच दिये ओन-पौन भाव, और रद्दी सस्ते वाले खरीदकर कोटा पूरा किया, उसमें खड़िया मिला दी। पिसाई के उल्टे-सीधे पैसे तो इसने मारे ही, ब्लैक, चार सौ बीसी, चोरी क्या-क्या इसने नहीं किया! इसके अलावा एक बड़ी साबुन की फैक्टरी और एक काफी बड़ा जूतों का कारखाना भी इसका है। उसे इसके बेटे संभालते हैं। पच्चीस तीस रिक्शे और पाँच मोटर-ट्रक चलते हैं। दस-बारह से ज्यादा इसके मकान हैं, जिनका किराया आता है। रुपये सूद पर देता है। शायद गाँव में भी काफी जमीन इसने ले रखी है। एक काम है साले का! इतना तो हमें पता है, बाकी इसकी असली आमदनी तो कोई भी नहीं जानता, कुछ न कुछ करता ही रहता है। भगवान ही जाने! रात-दिन किसी न किसी तिकड़म में लगा ही रहता है। करोड़ों का आसामी है। और सबसे ताज्जुब की बात तो यह है कि सब सिर्फ इसी पच्चीस छब्बीस साल में जमा की हुई रकम है।" चौकीदार दिलावर सिंह मिलिटरी में रह जाने के कारण खूब बातूनी था और मोर्चे के अपने अफसरों के किस्सों को, अपनी बहादुरी के कारनामों को खूब नमक-मिर्च लगाकर इतनी बार सुना चुका था कि उसे कहानी सुनाने का मुहावरा हो गया था। हर बात के उतार चढ़ाव के साथ उसकी आँखें और चेहरे की भँगिमाएँ बदलती रहती थीं।

उसकी बातें और रुचि से सुनते हुए भी गोविन्द के मन में एक बात टकरायी, लक्ष्मी को दौरे आते हैं, कहीं ऐसा तो नहीं कि उसने जो यह निशान लगाकर भेजे हैं, यह भी दौरों की दशा में ही लगाये हों और उनका कोई विशेष अर्थ न हो। इस बात से सचमुच उसे बड़ी निराशा हुई, फिर भी उसने ऊपर से आश्चर्य प्रकट करके पूछा, "सिर्फ पच्चीस-छब्बीस साल?"

नयी बीड़ी जलाते हुए चौकीदार ने जोर से सिर हिलाया। गोविन्द ने सोचा- "और लक्ष्मी की उम्र क्या होगी?"

"और कंजूसी की तो हद आपने देख ही ली होगी। बुड्ढा हो गया है, साँस का रोग हो रहा है। सारा बदन काँपता है लेकिन एक पैसे का भी फायदा देखेगा तो दस मील धूप में हाँफता हुआ पैदल जायेगा, क्या मजाल जो सवारी कर ले। गर्मी आयी तो पूरा शरीर नंगा; कमर में धोती, आधी पहने, आधी बदल में लपेटे। जाड़ा हुआ तो यही ड्रेस, बस, इसी में पिछले दस साल से तो मैं देख रहा हूँ। कभी किसी मकान की मरम्मत न कराना, सफेदी-सफाई न कराना और हमेशा यही ध्यान रखना कि कौन कितनी बिजली खर्च कर रहा है, कहाँ बेकार नल या पंखा चल रहा है। लड़का है सो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
उसे मुफ्त के चुंगी के स्कूल में डाल दिया है। लड़की घर पर बैठा रखी है। एक-एक पैसे के लिए घंटों रिक्शावालों, ट्रकवालों से लड़ना, बहसें करना और चक्की वालों की नाक में दम रखना, उन्हें दिन रात यह सिखाना कि किस चालाकी से आटा बचाया जा सकता है। बीसियों रुपये का आटा रोज होटलवालों को बिकता है, सो अलग। जिस दिन से चक्की खुली है, घर के लिए तो आटा बाजार से आया ही नहीं। आप विश्वास मानिए, कम से कम बारह-पन्द्रह हजार की आमदनी होगी इसकी, लेकिन सूरत देखिए, मक्खियाँ भिनभिनाती रहती हैं। किसी आने जाने वाले के लिए एक कुर्सी तक नहीं- पान-सुपाड़ी की तो बात ही दूर है। कौन कह देगा कि यह पैसे वाला है? यह उम्र होने आयी, सुबह से शाम तक बस, पैसे के पीछे हाय-हाय! दुनिया के किसी और काम से इसे मतलब ही नहीं है। सभा हो सोसाइटी हो, हड़ताल हो, छुट्टी हो, कुछ भी हो-लेकिन लाला रूपाराम अपनी ही धुन में मस्त! नौकरों को कम से कम देना पड़े, इसलिए खुद ही उनके काम को देखता है। मुझसे तो कुछ इसलिए नहीं कहता है कि मुझ पर थोड़ा विश्वास हैं; दूसरे मेरी जरूरत सबसे बड़ी है। लेकिन बाकी हर नौकर रोता है इसके नाम को। और मजा यह कि सब जानते हैं कि झक्की है। कोई इसकी बात को ध्यान से सुनता नहीं। बाद में सब इसका नुकसान करते हैं, आस पास के सभी हँसते और गालियाँ देते हैं . . . . .''

''बच्चे कितने है .. ..? चौकीदार को इन बेकार की बातों में बहकता देखकर गोविन्द ने सवाल किया।''

''उसी बात पर आता हूँ,'' चौकीदार इत्मीनान से बोला, ''सच बाबू जी, मैं यह देख-देखकर हैरान हूँ कि इस उम्र तक तो इसने यह दौलत जुटायी है, अब इसका यह कंबख्त करेगा क्या? लोग जमा करते हैं कि बैठकर भोगें; लेकिन यह राक्षस तो जमा करने में ही लगा रहता है। इसे जमा करने की ऐसी हाय-हाय रही है कि दौलत किसलिए जमा की जाती है, इस बात को यह बेचारा बिलकुल भूल गया है।'' फिर बड़े चिंतित और दर्शनिक मूड में दिलावरसिंह ने आग वाली राख को देखते हुए कहा, ''इस उम्र तक तो इसे जोड़ने की ऐसी हवस है, अब इसका यह भोग कब करेगा? सचमुच बाबू जी, जब कभी मैं सोचना हूँ तो बेचारे पर बड़ी दया आती है। देखा, आज की तारीख तक यह बेचारा भाग-दौडकर, लू-धूप की चिंता छोड़कर जमा कर रहा है। एक पाई उसमें से खा नहीं सकता, जैसे किसी दूसरे का हो- अब मान लीजिए, कल यह मर जाता है, तो यह सब किसके लिए जमा किया गया? बेचारे के साथ कैसी लाचारी है, मरकर-जीकर, नौकर की तरह जमा किये जा रहा है, न खुद खा सकता है न देख सकता, कि कोई दूसरा छू भी ले - जैसे धन के ऊपर बैठा साँप, खुद उसे खा नहीं सकता। खाने तो खैर देगा ही क्या? उसकी रखवाली करना और जोड़ना . . . .'' और लाला रूपाराम के प्रति दया से अभिभूत होकर चौकीदार ने एक गहरी साँस ली। फिर दूसरे ही क्षण दांत किट-किटाता हुआ बोला, ''अरे कभी कभी मन होता है, छुरा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकर साले की छाती पर जा चढ़ूँ, और मुरब्बे के आम की तरह गोदूँ। अपने पेट में जो इसने इतना धन भर रखा है, उसकी एक-एक पाई उगलवा लूँ। चाहे खुद न खाये लेकिन, जिसे अपने बच्चों को भी खिला-पिला नहीं सकता, उस धन का क्या होगा।''

''इनके बच्चे कितने हैं?'' इस बार फिर गोविन्द अधीर हो गया। असल में वह चाहता था दार्शनिक उद्‌गारों को छोड़कर वह जल्दी से जल्दी मूल विषय पर आ जाये। लक्ष्मी के विषय में बताये।

वर्णन में बह जाने की अपनी कमजोरी पर चौकीदार मुस्कराया और बोला, ''इसके बच्चे हैं चार; बीबी मर गयी, बाकी किसी नातेदार, किसी रिश्तेदार को झाँकने नहीं देता, ऊपर तो कोई नौकर भी नहीं है। बस, एक मरी-मरायी सी बुढिया पाल ली है। लोग बडे भाई की बीबी बताते हैं। बस वही सारी देखभाल करती है। और तो किसी को मैंने साथ देखा नहीं। खुद के तीन लड़के और एक लड़की . . . .।''

''बड़े दो लड़के तो साथ नहीं रहते . . . .'' इस बार मिस्तरी बोला।

''हाँ, वो लोग अलग ही रहते हैं। दिन में एकाध चक्कर लगा जाते हैं। एक जूतों का कारखाना देखता है, दूसरा साबुन की फैक्टरी संभालता है। इस साले को उन पर भी विश्वास नहीं है। पूरे कागज पत्तर, हिसाब-किताब अपने पास ही रखता है; नियम से शाम को वहाँ जाता है। वसूली करने। लेकिन लड़के भी बड़े तेज हैं, जरा शौकीन तबियत पायी है। इसके मरते ही देख लेना मिस्तरी, वो इसकी सारी कंजूसी निकाल डालेंगे।'' फिर याद करके बोला, ''और क्या कहा तुमने? साथ रहने की बात, सो भैया, जब तक अकेले थे, तब तक तो कोई बात ही नहीं थी; लेकिन अब तो उनकी बीवियाँ आ गयी हैं न, एकाध बच्चा भी आ गया है घर में, सो उसे दिन भर गोद में लटकाये फिरता है। इसके घर में एक चंडी जो है न, उसके साथ सबका निभाव नहीं हो सकता।''

एकदम गोविन्द के मन में आया - लक्ष्मी। और वह ऊपर से नीचे तक सिहर उठा। ''कौन? लक्ष्मी!'' उसके मुँह से निकल गया।

''जी हाँ, उसी की बदौलत तो यह सारा खेल है, वही तो इस भंडारें की चाबी है। वह न होती तो यह सब ताम-झाम आता कहाँ से? उसने तो इसके दिन ही पलट दिये, नहीं तो था क्या इसके पास?'' इस बार यह बात चौकीदार ने ऐसे लटके से कही, जैसे सचमुच किसी रहस्य की चाबी दे दी हो।

''कैसे भाई, कैसे?'' गोविन्द पूछ बैठा। उसका दिमाग चकरा गया। यह क्या विरोधाभास है? एक पल को उसके दिमाग में आया- कहीं यह रुपया कमाने के लिए तो लक्ष्मी का उपयोग नहीं करता? राक्षस! चांडाल!

उसकी व्याकुलता पर चौकीदार फिर मुस्कराया, और बोला, ''बाप तो इसका ऐसा रईस था भी नहीं, फिर वह कच्ची गृहस्थी छोडकर मर गया था। ज्यादा से ज्यादा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हजार-हजार रुपया दोनों भाईयों के पल्ले पड़ा होगा। शादियाँ दोनों की हो ही चुकी थीं। कुछ कारोबार खोलने के विचार से यह सट्टे में अपने रुपये दूने-चौगुन करने जा पहुँचा तो सारे गँवा आया। बड़े भइया रोचूराम ने एक पनचक्की खोल डाली। पहले तो उसकी भी हालत डाँवाडोल रही थी; लेकिन सुनते हैं कि जब से उसकी लड़की गौरी पैदा हुई, उसकी हालत संभलती ही चली गयी। यह उसी के यहाँ काम करता था। मियाँ-बीबी वहीं पड़े रहते। ऐसे कुछ उस लड़की का पाँव आया कि लाला रोचूराम सचमुच के लाला हो गये। इन लोगों के बड़े-बूढ़ों का कहना था कि लड़की उनके खानदान में भगवान होती है। अब तो अपना लाला कभी इस ओझा के पास जा, कभी उस पीर के पास जा, कभी इसकी 'मानता', कभी उसका 'संकल्प' - दिन-रात बस यही है कि भगवान, मेरे लड़की हो। और पता नहीं कैसे, भगवान ने सुन ली और लड़की हो गयी। आप विश्वास नहीं करेगे, फिर तो सचमुच ही रूपाराम के नक्शे बदलने लगे। पता नहीं गढा हुआ मिला या छप्पर फाड़कर मिला - लाला रूपाराम के सितारे फिर गये .. . . । इसे विश्वास होने लगा कि यह सब बेटी की कृपा है। और वास्तव में यह कोई देवी है। इसने उसका नाम लक्ष्मी रखा और साहब, कहना पड़ेगा कि लक्ष्मी सचमुच लक्ष्मी ही बनकर आयी। थोड़े दिनों में ही 'लक्ष्मी फ्लोर मिल' अलग बन गयी। अब तो इसका यह हाल है कि यह मिट्टी भी छू दे तो सोना बन जाये। और कंकड़ को उठा ले तो हीरा दीखे। फिर आ गयी लडाई और इसके पंजे छक्के हो गये। इसे ठेके मिलने लगे। समझिए, एक के बाद एक मकान खरीदे जाने लगे- सामान लाने ले जाने वाले ट्रक आये। इधर रोचूराम भी फल रहा था और दोनों भाई गर्व से कहते थे - 'हमारे यहाँ लड़कियाँ लक्ष्मी बनकर ही आती हैं।' लेकिन फिर एक ऐसा वाक़या हो गया कि तस्वीर की शक्ल बदल गयी . . .'' चौकीदार दिलावरसिंह जानता था कि यह उसकी कहानी का क्लाइमैक्स है। इसलिए श्रोताओं की उत्सुकता को झटका देने के लिए उसने उँगलियों में दबी, व्यर्थ जलती बीड़ी को दो-तीन कश लगाकर खत्म किया और बोलाः

''गौरी शादी लायक हो गयी थी। शायद किसी पड़ोसी लड़के को लेकर कुछ ऐसी-वैसी बातें भी लाला रोचूराम ने सुनी। लोगों ने उँगलिया उठाना शुरू कर दिया तो उन्होंने गौरी की शादी कर दी। बस, उसकी शादी होना था कि जैसे एकदम सारा खेल उजड़ गया। उसके जाते ही लाला एक बहुत बड़ा मुकदमा हार गया और भगवान की लीला देखिए, उन्हीं दिनों उसकी पनचक्की में आग लग गयी। कुछ लोगों का कहना तो यह है कि किसी घरेलू दुश्मन का काम था। जो भी हो, बड़े हाथी की तरह जो एकबारगी गिरे तो उठना दुश्वार हो गया। लोग रुपये दाब गये और उनका दिवाला निकल गया। दिवाला क्या जी, एक तरह से बिलकुल मटिया मेट हो गया। सब कुछ चौपट हो गया और छल्ला-छल्ला तक बिक गया। एक दिन लाला जी की लाश तालाब में फूली हुई मिली। अब तो हमारे लाला रूपाराम को साँप सूँघ गया, उनके कान खड़े

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हो गये और लक्ष्मी पर पहरा बैठा दिया गया। उसे स्कूल से उठा लिया गया। और वह दिन सो आज का दिन, बेचारी नीचे नहीं उतरी। घर के भीतर न किसी को आने देता, न जाने देता है। मास्टर रखकर पढ़ाने की बात पहले उठी थी; लेकिन जब सुना कि मास्टर लोग लड़कियों को बहका कर भगा ले जाते हैं तो वह विचार एकदम छोड़ दिया गया। लक्ष्मी खूब रोयी-पीटी; लेकिन इस राक्षस ने उसे भेजा ही नहीं। सुनते हैं लड़की देखने दिखाने लायक . . . .''

बात काटकर मिस्तरी बोला, ''अरे देखने-दिखाने लायक क्या, हमने खुद देखा है। जिधर से निकल जाती उधर से बिजली सी कौंध जाती। सौ में एक .. . . .।''

उसकी बात का विरोध न करके, अर्थात् स्वीकार करके चौकीदार बोला, ''स्कूल में भी सुनते हैं बड़ी तारीफ थी; लेकिन सबकी साले ने रेड कर दी। उसे यह विश्वास हो गया कि लड़की सचमुच लक्ष्मी है। इसी डर से न तो किसी को आने-जाने देता और न उसकी शादी करता है। उसकी हर बात पर पुलिस के सिपाही की तरह नजर रखता है। उसकी हर बात मानता है। बुरी तरह उसकी इज्जत करता है; उसकी हर ज़िद पूरी करता है; लेकिन निकलने नहीं देता। लक्ष्मी सोलह की हुई, सत्रह की हुई, अठारह, उन्नीस .. .. साल पर साल बीत गये। पहले तो वह सबसे लड़ती थी। बड़ी चिड़चिड़ी और जिद्दी हो गयी थी। कभी कभी सबको गाली देती और मार भी बैठती थी, फिर तो मालूम नहीं क्या हुआ कि घंटों रात-रात भर पड़ी जोर-जोर से रोती रहती, फिर धीरे धीरे उसे दौरा पड़ने लगा .. .. ''

''अब क्या उम्र हैं?'' गोविन्द ने बीच में पूछा।

''उसकी ठीक उम्र तो किसी को भी पता नहीं, लेकिन अंदाज से पच्चीस छब्बीस से कम क्या होगी?'' घृणा से होंठ टेढ़े करके चौकीदार ने अपनी बात जारी रखी, ''दौरा न पड़े तो बेचारी जवान लड़की क्या करे? उधर पिछले पाँच-छः साल से तो यह हाल है कि दौरे में घंटे दो घंटे वह बिलकुल पागल हो जाती है। उछलती-कूदती है, बुरी-बुरी गालियाँ देती है, बेमतलब रोती-हँसती है, चीजें उठा-उठाकर इधर-उधर फेंकती है। जो चीज सामने होती है उसे तोड़ फोड़ देती है। जो हाथ में आता है, उससे मार पीट शुरू कर देती है, और सारे कपड़े उतारकर फेंक देती है। बिलकुल नंगी हो जाती है और जाँघें पीट-पीटकर बाप से कहती है, 'ले, तूने मुझे अपने लिए रखा है, मुझे खा, मुझे चबा, मुझे भोग . .. . । यह पिटता है, गालियाँ खाता है; और सब कुछ करता है, लेकिन पहरे में जरा ढील नहीं होने देता। चुपचाप सिर पर हाथ रखकर बैठा-बैठा सुनता रहता है। क्या जिन्दगी है बेचारे की! बाप है सो उसे भोग नहीं सकता और छोड़ तो सकता ही नहीं। मेरी तो उम्र नहीं रही, वर्ना कभी मन होता है ले जाऊँ भगाकर, जो होगा सो देखा जायेगा . .. . ।'' और एक तीखी व्यथा से मुस्कराता चौकीदार देर तक आग को देखता रहा, फिर धीरे से होंठ चबाकर बोला, ''इसकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बोटी-बोटी गर्म लोहे से दागी जाये और फिर टिकटी बाँधकर गोली से उड़ा दिया जाये।''

गोविन्द का भी दिल भारी हो आया था। उसने देखा, बुड्ढ़े चौकीदार की गीली आँखों में सामने की बरोसी की धुँधली आग की परछाई झलमला रही है।

आधी रात को अपनी कोठरी में लेटे लक्ष्मी के बारे में सोचते हुए मोमबत्ती की रोशनी में उसकी सारी बातों का एक-एक चित्र गोविन्द की आँखों के आगे साकार हो आया और फिर उसने अंधकार की प्राचीरों से घिरी, गर्म-गर्म आँसू बहाती मोमबत्ती की धुँधली रोशनी में रेखांकित पंक्तियाँ पढ़ीं:

'मैं तुम्हें प्राणों से अधिक प्यार करती हूँ।'

'मुझे यहाँ से भगा ले चलो .. . . ।'

'मैं फाँसी लगाकर मर जाऊँगी .. . . ।'

गोविन्द के मन में अपने आप एक सवाल उठा: 'क्या मैं ही पहला आदमी हूँ जो इस पुकार को सुनकर ऐसा व्याकुल हो उठा हूँ या औरों ने भी इस आवाज को सुना है और सुनकर अनसुना कर दिया है? और क्या सचमुच जवान लड़की की आवाज को सुनकर अनसुना किया जा सकता है?'

❑

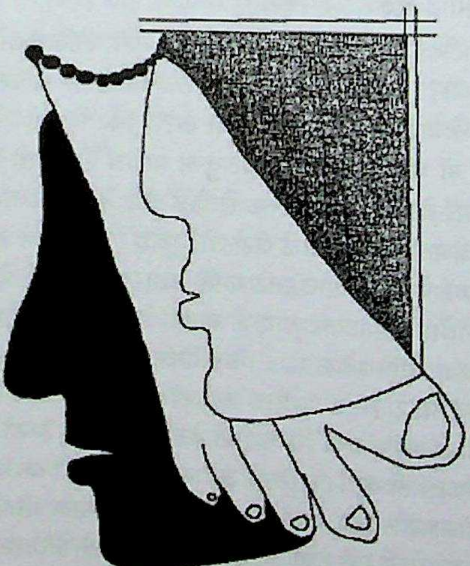

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बंगला लोक शिशु साहित्य में श्रीकृष्ण तथा ग्राम्य गीत में कृष्ण कथा

हरिश्चन्द्र मिश्र

बंगाल के लोक साहित्य में शिशु साहित्य के अन्तर्गत शिशु काव्य 'छड़ा' का विशेष महत्व है। ये ''छड़े' लोक संगीत से भिन्न हैं। लोक संगीत एक विशिष्ट भाव का आधार बनाकर रचित होता है। किन्तु ''छड़ा'' में किसी विशिष्ट भाव की खोज नहीं की जा सकती। अधिकांश क्षेत्र में कोई भाव हो इसमें नहीं है, यदि रहता है तो असंलग्न रूप से अभिव्यक्त होता है, छड़ा में कोई कहानी भी नहीं रहती। हाँ चित्त अवश्य होता है। लेकिन वह भी स्वयं सम्पूर्ण नहीं। एक ही चित्र पट पर खेयाली शिशु विभिन्न चित्रों की रेखाएँ खींच लेता है। अतः अपनी सहजता से वह शिशु की दृष्टि को आकर्षित करता है।

'छड़ा' ही लोक साहित्य का प्राचीनतम रूप है एवं शिशु साहित्य ही साहित्य का प्राचीनतम रूप है। कारण कि शिशु ही परिणत बुद्धि मनुष्य का अग्रज है। युग-युग में देश-देश में शिशु अभिन्न होते हैं। इसीलिए अतीत एवं वर्तमान का छड़ा देश एवं देशान्तर के छड़े एक अखण्ड ऐक्य सूत्र में आबद्ध हैं। जब बच्चा अबोला होता है तब माँ या गुरुजन ही उसे 'छड़ा' सुनाते हैं जो वयस्कों की रचना होती है। बाद में स्वयं शिशु ही छड़ा की रचना करने लगता है। प्रायः खेल के छड़ा हैं। वस्तुतः छड़ा में कविता का सुर एवं ताल होता है। सुर का वैचित्र्य नहीं होता। सहजता ही इनका विशिष्ट गुण है। 'छड़ा' एक सामूहिक रचना है।

शिशु सम्बन्धी छड़ों को रवीन्द्रनाथ ने केवल दो भागों में विभाजित किया है। 'छेले भुलानो छड़ा' -1 एवं छेले भुलानो छड़ा-2। यहाँ भुलानों का अर्थ बहलाने या बहकाने के सन्दर्भ से जुड़ा है। आशुतोष भट्टाचार्य ने सभी शिशु साहित्य (छड़ा) को अनेक शीर्षकों में रखकर विश्लेषित किया है। जैसे - धुम पाड़ानि (सुलाने वाले), दोलना (पालना) घुम आयरे(नींद आओ रे), 'घुम यारे' (सो जा रे), 'घुम आय' (सोया हुआ), 'वर्गी एल देशे' (लुटेरा मराठा आया देश में), 'घुमपाड़ानि मासि पिसि' (नींद देने वाली मौसी बुआ), निद्राली मा (नींद देने वाली माँ), 'छेले भुलानो (शिशुओं को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहलाना)' इसमें भी 'भोजन' 'रुदन' नृत्य 'खोका यावे' (बेटा जाएगा), विवाह 'आय चाँद' (आओ चन्दा) 'धन धन धन' नन्द किशोर, 'विविध' अब इसके आगे खेला का वर्ग आता है। आग्डुम बाग्डुम (अक्कड-बक्कड), इकडि मिकडि (इक्कड-मिक्कड), 'हा-डु-डु' (कबड्डी की ध्वनि), 'अन्यान्य', प्रश्नोत्तर वाचक विविध। इसके बाद 'कन्या' के सन्दर्भ से जुड़े छड़ा का प्रसंग आता है- उसमें आता है। 'अधिवास' (मायके का रहना), 'तिन कन्या' (तीन कन्याएँ) 'कन्या आन' (कन्या लाओ), 'कन्यादान' 'कन्या विदाई', 'जोड़ पुतुलेटविये' (दो गुडियों का विवाह), 'प्रेम' 'मा वड़ धन' (माँ बड़ी धन) पटेर घर (पराया घर) 'गुणवती', 'मामा बाडी यार' (मामा-घर जाओ), आदि। शिशुओ से सम्बन्धित छड़ों में से यहाँ 'नन्दकिशोर' शीर्षक छड़ा पर ही विचार किया जाएगा।

चैतन्य ने जब गौडीय वैष्णव धर्म का प्रचार किया तब से बंगालियों की चिन्ताधारा इसके आदर्श से प्रभावित हुई। अतः बंगाल साहित्य रचना में एक नयी जागृति आयी। अब बंगला साहित्य का परम्परित रूप अनेक दिशाओं में परिवर्तित हुआ। इसका प्रभाव बंगला लोक साहित्य पर भी पड़ा। यहाँ यह कहावत ही प्रचलित हो गयी कि इस प्रदेश में 'कानु (कान्हा) के अलावा गीत नहीं'। अतः इस प्रदेश का सारा संगीत ही कृष्ण के नाम पर उत्सर्ग है। कारण कि इस प्रदेश में जाति वर्ण रहित लौकिक प्रेम संगीत प्रचलित रहा। उन सबके नायक नायिका श्री कृष्ण एवं श्री राधिका हैं। सबसे विशिष्ट बात है कि बंगाल के मुसलमान समाज में प्रचलित लौकिक प्रेम संगीत में भी राधा कृष्ण ही नायक नायिका के रूप में गृहीत हैं।

बंगाल के शिशुओं को बहलाने वाले 'छड़ा' (शिशुगीत) मूलरूप से किसी सम्प्रदाय विशेष से जुड़े नहीं हैं। यही कारण है कि वे अबोध रूप से समाज के हर श्रेणी में प्रचलित हैं। बंगाल के बच्चों को बहलाने वाले छड़ों की यही एक विशेषता सर्वत्र नहीं दिखायी देती। 'छड़ा' में किसी धर्म की बात नहीं है, आचरण पूर्ण जीवन में किसी आंगिक का उल्लेख नहीं है। सम्प्रदायगत किसी वैशिष्ट्य का परिचय नहीं है। इसीलिए साहित्य के हिसाब से उनका एक मूल्य है। रवीन्द्र नाथ ने अपने 'छेले भुलानो छड़ा' (बच्चों को बहलाने वाले शिशु गीत) विषयक निबन्ध में इसका विश्लेषण किया है। यह बात भी सत्य है कि अन्यान्य सभी दिशाओं से आगत साम्प्रदायिक प्रभाव को अस्वीकार करने पर भी बंगाल के कुछ-कुछ छड़े वैष्णव प्रभाव द्वारा प्रभावित हुए हैं। इसका कारण है कि वैष्णव धर्म ने मनुष्य में ही भगवान की उपासना की है। मनुष्य को लेकर ही साहित्य भी सार्थकता पाता है। 'बच्चों को बहलाने वाले गीतों' का प्रधान लक्ष्य शिशु होता है। वैष्णव धर्म ने भगवान की बात कहने पर भी यशोदा के लाल श्रीकृष्ण में भगवत्ता प्राप्त की है। शिशु को अस्वीकार करके वहाँ भगवत् चैतन्य का विकास नहीं हुआ है। 'छड़ा' (शिशुगीत) के शिशु एवं वैष्णवों के बाल गोपाल की उपलब्धि में कोई अन्तर नहीं है। इसीलिए शिशु श्रीकृष्ण को आधार बनाकर भी जो रचित हुआ है, वह शास्त्र न होकर चेतना में देवता को मनुष्य में ही प्राप्त किया जाता है। वात्सल्य, शान्त,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मधुर जगत की उपलब्धि का सहायक है, उसे आधार बनाकर जो निर्मित होता है, वह साहित्य ही होता है। इसी आधार पर बंगाल का वैष्णव पदावली बंगाल का अनवद्य गीति साहित्य है। बंगाल के 'छेले भुलानों छड़ा' (बच्चों को बहलाने वाले गीत) में भी श्रीकृष्ण को आश्रय करके वात्सल्य रस का विकास हुआ है। इसीलिए उसके द्वारा भी बंगला लोक साहित्य का एक अंग पुष्ट हुआ है।

झूले में जो शिशु मुख छिपाकर मृदु-मुदु झूलता रहता है, जननी उसमें यशोदा के दुलारे के रूप् की उपलब्धि करती रहती है-

दोल दोल दोल दोलन हरि,
के देखेछे हरि।
झोलनाते झुलछे आमार ऐ गिरिधारी।। - बाँकुडा
(झूले झूले झूले झूलते हरि,
किसने देखा है हरि।
झूले पर झूलता है हमारा यही गिरिधारी।।)

जो शिशु धूल में गिरकर लोट रहा है, उसमें भी जननी नन्दकिशोर श्रीकृष्ण का ही रूप देख पाती है-

धुलाय धूसर नन्दकिशोर धुल लेगेछे गाय।
धुला झेड़े नेवे कोले प्राण जुड़ावे ताय।।- रवीन्द्र संग्रह से
(धूल से धूसरित नन्द किशोर धूल लगी है देह में।
धूल झाड़कर लोगे गोद में प्राण शीतल होगा उसमें।।)

शिशु का रंग काला होने पर भी उसमें ही जननी वृन्दावन के काले शशि नव घनश्याम श्रीकृष्ण का रूप देख पायी हैं।

वृन्दावनेर यत रूपसी रूपेर यत आलो,
वृन्दावनेर कालोशशी देखे एलाम भालो।
(वृन्दावन की जितनी रूपवती रूप की जितना आलोक,
वृन्दावन के कालेशशि देख आयी भले।)

बंगाल के घर के सभी शिशु ही गोपाल हैं। जननी यशोदा के मातृस्नेह मघित सुधारस सिंचित नाम गोपाल है। इस नाम के भीतर से ही मानो मातृस्नेह का सुधारस मूर्त्त होकर प्रकट होता है। इसीलिए इसी नाम को पुकारते-2 आनन्द का सिहरन अनुभव किया गया है।

गोपाल गोपाल गोपाल।
कांगालिनीर दुलाल।। (कंगाल का रत्न)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE 2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुमि आमार योगीर कोशाकुशि। (योगी -योग)

तुमि आभार श्यामेर हातेर वांशी।। वर्धमान से प्राप्त

(तुम्हीं श्याम के हाथ की बाँसुरी)

स्नेह-पुत्तलिका का किस प्रकार जननी व्याख्या कर सकती है। उसे किसी भी प्रकार समझ नहीं पाती है। शिशु की प्रकृति किसी भी व्याख्या से पकड़ में नहीं आती। केवल इतना ही नहीं है कि वह मात्र दुर्जेय है, उसके रूप की भी सीमा नहीं है। कृष्ण रूप में भी मानो विद्युत की छटा दिखायी देती है।

कोउँ कोउँ शास्नि पातार तले,
शास्नि पाता उल्टाइ चाइलाम
बिजली छडक मारे
बिजली छडके देइखलाम मुख
अति तपस्यार फले
अति तपस्यार नन्ददुलाल
कने कइते पारे 1- चट्टग्राम
(कौन कौन 'शास्नि' पत्ते के नीचे,
'शास्नि' पत्ता उलटकर देखा
बिजली कौंध गयी
बिजली की चमक में देखा मुख
अति तपस्या का फल,
अति तपस्या का नन्द दुलाल
कौन कह सकता।)

श्री कृष्ण ग्वाले की सन्तान हैं, दही-दूध बेचना उनका व्यवसाय है अतः उन्हें पंसारी के रूप में भी देखा जाता है-

कानाइट माथात लाल पागड़ी,
पाकाइयाछे छिक्का दड़ि।
सकले वेचे दधि दुग्ध,
कानाइये गणे कड़ि।।
कानाइ न याइओं गोपाल वाडा
भांगिव तोमार हातेर वांशी,
छिड़िर तोमार गलार माला।। - चट्टग्राम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(कन्हाई के माथे पर लाल पगड़ी,
रखा है छींके की डोरी।
सभी बेचते दही - दूध
कन्हाई गिनता कौड़ी (पैसा)।।
कन्हाई न जाना ग्वालों के मुहल्ले।
तोड़ देंगे तुम्हारे हाथ की बाँसुरी
तोड़ देंगे तुम्हारे गले की माला।।)

शिशु का नृत्य जननी के हृदय में असीम आनन्द का उत्सव पैदा करता है। शिशु का नृत्य देखकर बंगाली जननी का गोकुल के गोशाले में श्री कृष्ण के नृत्य की बात याद आ जाती है-

शिव नाचे ब्रह्मा नाचे आर नाचे इन्द्र,
गोकुल गोयाला नाचे पाइये गोविन्द
क्षीर खिर से क्षीरेर नाडु वर्तमानेर कला,
वुटिये-2 खाय यत गोपेर वाला,
नन्देर मन्दिरे गोयाला एल धेये,
तादेर हाते नडि, कांधे भाड़ नाचे थेये थेये।। रवीन्द्र संग्रह
(शिव नाचे ब्रह्मा नाचे और नाचे इन्द्र,
गोकुल के ग्वाल नाचे पाकर गोविन्द।
दूध का खीर दूध का लड्डू मर्तबान केला,
लूट लूटकर खाते जितने गोप-बाला,
नन्द के मन्दिर में ग्वाला आया दौड़कर,
उसके हाथ में लाठी, कन्धे पर भाण्ड नाचता थई थई।।) रविन्द्र संग्रह
शिशु के जन्म से ही पड़ो सीगण अनुभाव करते हैं।
नन्देर दुआरे आज कि आनन्द हइछे,
यशोमती भाग्यवती गोपाल कोले पाइछे।
(नन्द के द्वारे आज क्या आनन्द हुआ है।,
यशोदा भाग्यवती गोपाल को गोद में पायी है।)

इस देश की सारी माताएँ ही स्नेह शालिनी यशोदा होती हैं और सभी शिशु ही गोपाल हैं। इसी चेतना के अन्तर्गत मातृस्नेह के प्रति इस जाति ने जैसी देव-मर्यादा दी है, उसी प्रकार शिशु को भी देव मर्यादा द्वारा ग्रहण किया है। शिशु देवता होता है, इस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
शिशु की जननी भी देता है। बंगाल के बच्चों को बहलाने वाले छेड़ों द्वारा साधारण बंगाली गृहस्थ भी शिशु एवं जननी के संबंध में यही विश्वास व्यक्त करते हैं। यह केवल शास्त्र अथवा सामाजिक नीति के रूप में ही इस देश में अस्तित्ववान नहीं है, वरन् उसके बदले दैनिक जीवन के आचरणीय धर्म के द्वारा भी उसका अनुभव किया गया है।

बच्चों को बहलाने वाले छेड़ों (शिशु गीतों) में कृष्ण के साथ राधा का नाम क्वचित सुना जाता है। इसका कारण है कि जहाँ बाल गोपाल के वात्सलय का चित्र अंकित हुआ है। वहाँ राधा के नाम का उल्लेख करने की कोई बात नहीं है। दो एक जगह इसका व्यतिक्रम भी दिखाई देता है। अतः यहाँ राधा को विशेष अर्थ में ग्रहण करना होगा, कान्ता भाव की अधिकारिणी रूप में नहीं-

ओ पाटेते कदम गाछटि कदम झुमझुम करे,
तार तलाते राधाकृष्ण सदाइ नृत्य करे।
गोप कांदे गापिनी कांदे कांदे तरुलता,
सकल लता वले आमार कृष्ण गेल कोथा।
कृष्ण गेल विष्णुपुर ना गेल वालिये,
हेन समये एलेन कृष्ण पाचनि हारिये।
पाचनि हाराये कृष्ण वेड़ान वने वने,
नवीन कुशेर अंकुर फुटिल चरणे।
डाहिन हाते तेलेट वाटि काने कदम्बेर फुल,
राधा गेलेन स्नान करिते काली दहेर कूल।
कालीदहे गिये राधा खुले दिलेन केश
केश दाने चेये चेये तनु हलो शेष।
आलि लो मा डाले केवा - कृष्ण केन गाछे
सकल सखी नृत्य करे बलरामेर काछे।। - नदीया
(उस पार कदम्ब वृक्ष कदम झुम झुम करता,
उसके नीचे राधा कृष्ण सदैव नृत्य करते।
गोप रोते ग्वालिन रोती, रोती तरुलता,
सारी लताएँ कहतीं हमारा कृष्ण गया कहाँ।
कृष्ण गये विष्णुपुर नहीं गये बताकर,
उसी समय आये कृष्ण लाठी खोकर,
लाठी खोकर कृष्ण घूमते वन-वन में,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नये कुश का अँकुर चला पाँवमें।
दाहिने हाथ में तेल की खोरी कान पर कदम्ब का फूल,
राधा गयी, स्नान करने कालीदह के कूल।
काली दह में जाकर राधा खोल दी केश,
केश खोलते ही देखते देखते काया हुई क्षीण।
सखि हो मार डालने वाला कौन है- कृष्ण क्यों गा रहे
सभी सखियाँ नृत्य करती बलराम के पास।।)

उद्धृत छड़ा से समझा जाएगा कि यह वर्णन भागवत सम्मत नहीं है, अर्थात् वैष्णव धर्म के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वात्सल्य रस के आधार पर श्री कृष्ण को बाल गोपाल के रूप में परिकल्पना करने में भागवत् या वैष्णव धर्म विरोधी कोई भाव नहीं है। किन्तु यहाँ जो चित्त प्रस्तुत किया गया है वह एकदम लौकिक है, तनिक भी पौराणिक नहीं है। इसमें बंगला छड़ा का पूर्णतः अनुकरण हुआ है। यहाँ देखा जाता है कि कृष्ण कदम्ब वृक्ष के नीचे सदैव ही नृत्य करते रहने के साथ ही सहसा किसी को भी कुछ न कहकर विष्णुपुर चले गये एवं वहाँ से जब लौटकर आये, तब देखा गया कि वे हाथ की बाँसुरी खोने के बजाय हाथ की लाठी खोकर आये हैं। इसके बाद इस लाठी के शोक से वन-वन में घूमने लगे। विष्णुपुर में लाठी खोकर पुनः लौटकर वन वन में क्यों खोजने गये, उसे भी कुछ प्रकट नहीं किया गया है। नवीन कुशांकुर उनके रक्त कमल सदृश पदतल में घुसने लगा। एक तरफ श्री राधिका कृष्ण विरह की वेदना को तनिक भी दिखाये बिना दाहिने हाथ में तेल की कसौटी एवं कान में कदम्ब फूल को गूँथकर कालीदह के किनारे जाकर पैर फैलाकर सिर का केश खोल दी। इसके बाद उसी सघन एवं सुदीर्घ केश की ओर देखकर अपना शरीर फेंक दीं। अन्तिम दृश्य में देखा गया कि कृष्ण एक वृक्ष शाखा पर बैठे थे। साथी गण कृष्ण को खोजन की कोई तत्परता न दिखाकर बलराम के चारों और घेरकर सहसा नृत्य आरम्भ कर दिये। इन चित्रों में परस्पर जो असंलग्नता का परिचय मिलता है, वही छड़ा का वैशिष्ट है। इन असंलग्न चित्रों के द्वारा इस बात का अनुभव किया जा सकता है। कि इसमें श्रीकृष्ण का जैसा आचरण है वह भागवत सम्मत नहीं है। श्री राधिका का आचरण भी वैसे ही वैष्णव धर्म अनुमोदित नहीं है। अपितु साधारण नायिका के लक्षण सम्मत है।

इस 'छड़ा' के एक और रूप की खोज हुई है उसमें भी देखा गया है कि छड़ा धर्म की रक्षा करते हुए कृष्ण और राधिका को सम्पूर्ण लौकिक रूप में उपस्थित किया गया है; जैसे-

ठाकुर वाड़ीर फुलगाछटि सदाइ झुर झुर करे।
गोप कांदे गोपिनी कांदे आर कांदे लता।
किष्ट आभार एका, किष्ट आभार बाँका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किष्ट चिंतामणि ये आकुल व्याकुल,
लोके वले क्ष्यापा ।। - ढाका
(मन्दिर का पुष्प पौधा सदा ही झुर झुर करता
गोप रोवे गोपिनी रोवे और रोवें लता।
कृष्ण हमारे अकेले
कृष्ण हमारे बाँके
कृष्ण का मन है आकुल व्याकुल
लोग कहते पगला ।।)

यहाँ 'कृष्ण राधिका' के युग्मभाव से सर्वदा नृत्य करते रहने पर भी कृष्ण क्यों अकेले हैं। उसे किसी प्रकार भी समझा नहीं जा सकता। यहाँ भी कृष्ण को भागवत के बन्धन से मुक्त करके बंगाली लोक-मानस के विस्तृत क्षेत्र में छोड़ दिया गया है। बंगाल के बच्चों को बहलाने वाले छड़ों में श्रीकृष्ण इसी प्रकार विराजमान हैं।

भागवत वर्णन में देखा जाता है। कि गोष्ठ लीला में सदैव बाल-गोपाल का उल्लास व्यक्त हुआ है। यहाँ तक कि जननी यशोदा ने शंकित होकर शिशु कृष्ण को उस कार्य से निवृत्त होने के लिए अनुरोध किया है। किन्तु छड़ा में यशोदा ने श्रीकृष्ण को गोष्ठ यात्रा का आदेश किया है। शिशु कृष्ण ने इसे सुनकर रोना आरम्भ कर दिया। वे किसी प्रकार भी गोष्ठ यात्रा से सहमत नहीं है। यही कारण है कि जहाँ भागवत की कथावस्तु है, वहाँ भी भागवत की कथा नहीं है। भागवत के नाम पर जननी की अपनी बात ही प्रकट हुई है।

के मेरेछे के घरेछे सोनार गतरे।
आध काठा चाल देव गालेर भितरे।।
कें मेटेछे के घरेछे के दिये छे गाल।
तार संगे गोसा करे भात खाओं निकाल।।
के मेटेछे के घरेछे के दिये छे गाल।
तार संगे कोंदल करे आसव आभि काल।।
मारि नाइयो धरि नाइको वलि नाइको दूर।
सवे माल वलेछि गोपाल चराओंगे वाधुर–) रवीन्द्र -संग्रह
(कौन मारा कौन पकड़ा सोना का शरीर
आधा काठा चावल दूंगी गाल भीतर।।
कौन मारा कौन पकड़ा कौन दिया गाली।
उसके साथ गुस्सा करके भात खाया नहीं कल।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कौन मारी कौन पकड़ा कौन दिया गाली।

उसके साथ झगड़ा करके आऊँगी मैं कल।।

मारा नहीं पकड़ा नहीं कहा नहीं दूर।

मात्र सबने कहा गोपाल चराओं रे बछड़ा।।)

गोपाल जननी की सम्पदा हैं। उसे माँ बार बार कहती है। बंगाल के जिस अंचल में वैष्णव प्रभाव ज्यादा है, उन सभी अंचल के छड़ों में वैष्णव भाव का प्रभाव है। इस प्रकार बंगला शिशु गीतों में श्रीकृष्ण की उपस्थिति हुई है। उद्धरणों की संख्या बढ़ने से ज्यादा विस्तार होगा। अतः उद्धरणों से ही बंगला 'छड़ों, में श्रीकृष्ण की उपस्थिति को दिखाने की चेष्टा की गयी है।'

बंगला ग्राम्य गीत एवं कृष्ण कथा

रवीन्द्र नाथ ने लोक साहित्य पर विशेष अध्ययन प्रौढावस्था में आरम्भ की। शिशु साहित्य पर उनका विवेचन बड़ा ही प्रायोगिक एवं चिन्तन परक है। कहते हैं कि शिशु साहित्य का विश्लेषण वयस्क व्यक्ति ही कर सकता है। यही कारण है कि रवीन्द्र नाथ ने लोक-साहित्य एवं शिशु साहित्य पर अपनी अन्तिम अवस्था में अध्ययन आरम्भ किया। लोक में प्रचलित ग्रामय गीतों पर अपना आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया। अपनी 'लोक साहित्य' पुस्तक में उन्होंने ग्राम्य साहित्य के विश्लेषण के पूर्व कुछ सैद्धान्तिक प्रस्तुति दी है।

ग्राम्य साहित्य को चर्चा का आरम्भ वे कथात्मक ढंग से करते हैं। कहते हैं- एक दिन सावन महीने के अन्त में नौका द्वारा पावना राजशाही में भ्रमण करने गया था। मैदान घाट सब जल में डूबा था। छोटे छोटे गाँव जलचर जीव की तरह तैरते हुए किनारे के पुंज की तरह बीच-बीच में दिखायी दे रहे थे। किनारों की सीमा दिखायी नहीं दे रही थी। केवल जल छल-छल कर रहा था इसी बीच जब सूर्यास्त होने वाला है उसी समय दिखायी दिया कि प्रायः दस बारह लोग डोंगी खेते हुए आ रहे है। वे सब उच्च स्तर से एक गान कर रहें है एवं दौड़ की जगह एक एक बाँस दोनों हाथों में लेकर गान के तल पर झोंक झोंक से छपू छपू की आवाज करते जल को ठेलते हुए द्रुत वेग से चलते आ रहे हैं। गाने की बात को सुनने के लिए कान लगाया। अन्त में बारम्बार आवृत्ति सुनकर जो पंक्तियाँ उद्धार किया वे यही है-

युवती क्यान् वा कर मनभारी।

पावना श्याहे आन्य देव ट्याहा दामेट मोटरि।।

(युवती क्यों करती हो मन भारी।

पावना से खरीद दूंगा कि एक रुपये की मोटरी।।)

भरी वर्षा के जलप्लावन के ऊपर जब निःशब्द है उस समय सूर्य अस्त होने जा रहा है। ठीक उस समय यह गान उपयुक्त है कि नहीं इस संबंध में किसी को भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
सन्देह हो सकता है। किन्तु गान के इसी दो धरणी से उसी शैवालकीर्ण जलमरु के भीतर से मानो सारा गाँव ही बात करने लगा। देखा कि गोशाला के पास, किनारे के पेड़ों की छाया में यहाँ भी युवतियाँ मन भारी करके रहती हैं एवं उनके रोष से लाल कुटिल कटाक्षपात से ग्राम्य कवियों की कविता छन्द बन्ध में सुरताल में मैदान घाट में जल-स्थल में जागृत होती रहती है।

संसार में जितने प्रकार के दुर्विपाक है उनमें युवतियों के मन की विमुखता अग्रगण्य है- उसी दुर्ग्रह शान्ति के कवि छन्द रचना एवं प्रिय प्रसाद वंचित हतभाग्यगण प्राणपात तक करने को तैयार रहते हैं। किन्तु गान में सुना 'पावना से ला दूंगा अच्छे दाम की मोटरी।' पदार्थ क्या है उसे ठीक से नहीं जानता लेकिन कवि को इसमें सन्देह नहीं कि उसका दाम एक रुपये से अधिक नहीं है। संसार के एक छोर में पावना जिले में एक ऐसा स्थान है। जहाँ प्रतिकूल प्रणयिनी के लिए असाध्य व्यवस्था नहीं करनी पड़ती। पावना की अपेक्षा दुर्लभ पदार्थ संग्रह नहीं करना पड़ता। ऐसा मान लेने पर संसार की यन्त्रणा अपेक्षाकृत सुसह्य लगती है। कालिदास, भवभूति प्रभृति प्रथम श्रेणी के कवि ऐसी जगह निश्चय ही मानसरोवर का स्वर्ण पद्म, आकाश के तारे, नन्दन कानन के पारिजात आम्लान मुख पर डाल देते और उज्जैनी की प्रथम श्रेणी की युवतियाँ शिखरिणी एवं मन्दाक्रान्ता छंद में ऐसे दुःसाध्य अनुष्ठान के प्रस्ताव को सुनते ही बिना प्रसन्न हुए नहीं रह सकतीं।

अन्ततः काव्य पढ़कर इसी प्रकार भ्रम होता है किन्तु अविश्वासी गद्यजीवी लोग कवित्व पर इतना विश्वास नहीं करते मात्र मन्त्र काट के द्वारा एक (फल मेड़ा) मेड़े का झुण्ड मारा जाय कि नहीं। इस प्रश्न के उत्तर में बोल्टेयर ने कहा है कि मारा जाय किन्तु उसके साथ-साथ यथेष्ट मात्रा में आर्सेनिक विष भी होना चाहिए। मन भारी करने वाली युवती के लिए आकाश का तारा नन्दन वन का परिजात एवं प्राण समर्पण का प्रस्ताव सन्तोष जनक हो सकता है। किन्तु अधिकांश जगहों पर उसके साथ-साथ बाजूबन्द या चरण चक्र की आवश्यकता पड़ सकती है। कवि इन बातों को लाद देते हैं। वे प्रमाणित करना चाहते हैं कि केवल मन्त्र बल से केवल छन्द एवं भाव के जोर से कार्य सिद्ध होता है- अलंकार का प्रयोजन हो सकता है। किन्तु वह काव्यालंकार ही होगा। इधर हमारे पावना की जनपद वासिनी गण काव्य के आडम्बर बहुलता का ज्ञान प्राप्त करती है। एवं उनके चिर अनुरक्त ग्राम वासी कवि मन्त्र-तन्त्र छोड़कर एक बारगी सीधे एक टके दाम की 'मोटरी' की बात कह बैठते हैं। समय नष्ट नहीं करते।

फिर भी एक छन्द एवं एक सुर चाहिए। इसी जगत् के एक प्रान्त में इसी पावना जिले के जलराशि के किनारे भी उन्हें आवश्यकता है। उसके द्वारा इस मोटरी का दाम एक से अनेक गुना बढ़ जाता है। इस मोटरी को रस एवं भाव का पारस पत्थर छुवा दिया जाता है। गान के उसी दो पंक्तियों को प्रचलित गद्य में बिना सुर के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहने पर उसमें [illegible] जाता है, वह छन्द और सुर से निमिष मात्र में खिसक जाता है। संसार के प्रतिदिन की धूलि रूप ही से ये कई तुच्छ बातें भाव के आवरण से आवृत्त हो जाती है।

मनुष्य के लिए इसकी एक मात्र आवश्यकता है। वह समस्त सांसारिक व्यापार द्वारा सर्वदा घनिष्ट रूप से आवृत्त होता है और अपने को वह छन्दलय में मण्डित करके अपने ऊपर नित्य सौन्दर्यमय भाव का रश्मिपात करके देखना चाहता है।

इसलिये जनपद में जैसे खेती वगैरह एवं नौका चालन हो रहा है। वहाँ लोहार के घर हल का फाल, बढ़ई के घर ढेकी एवं सोनार के घर टका दाम की मोटरी तैयार हो रही है। उसी प्रकार साथ-साथ भीतर ही भीतर साहित्य रचना का कार्य भी चल रहा है। उसका विश्राम नहीं है। प्रतिदिन जो विक्षिप्त-विच्छिन, खण्ड-खण्ड भाव से सम्पन्न हो रहा है, उसे साहित्य एक सूत्र से बाँधकर हमेशा के लिए प्रस्तुत करने की चेष्टा कर रहा है। गाँव में प्रतिदिन विचित्र काम भी चल रहा है एवं उसके बीच-बीच में चिर दिन की रागिनी बजने के निश्चित प्रयास भी चलते रहते हैं।

पद्‌मा में खेते हुए चलते-चलते रेत के मैदान में जब चकवा-चकवी का कलरव सुना जाता है, उससे कोकिल के कुहूतान को समझने का किसी को भ्रम नहीं होता। यह निश्चित है कि उसमें पंचम, मध्यम कोमल कड़ी का ठीक प्रकार सुर किसी प्रकार मालूम नहीं होता, किन्तु फिर भी उसे पद्‌मा के बालू मैदान का गान कहने में कुछ भी असंगत नहीं है। कारण की इसमें सुर बेसुर जो भी लगे, उस निर्मल नदी के हवा के रौद्र में असख्य प्राणी के सुख सम्भोग पूर्ण जीवन में आनन्द ध्वनि बज उठती है।

ग्राम्य साहित्य में कल्पना का तान अधिक हो या न हो उस आनन्द का सुर है। ग्रामवासीगण जिस जीवन को भोग करते आ रहे हैं। जो कवि उसी जीवन को छन्द ताल में बनाये रखता है वह कवि सारे गाँव के हृदय की भाषा दान करता है। पद्‌मा के बालू मैदान के चक्रवाक संगीत की तरह वह एकदम विशुद्ध सुर ताल की अपेक्षा नहीं करता। मेघदूत के कवि अलका तक गये हैं वे उज्ञैनी के राजसभा के कवि थे। हमारे गान का अख्यात कवि कठिन दायित्व में पड़ने पर भी पावना शहर से आगे अग्रसर नहीं हो पाता। यदि हो पाता तो उसके गाँव के लोग संग छोड़ देते। कल्पना की संकीर्णता से ही वह अपने प्रतिवेशी वर्ग को घनिष्ट सूत्र में बांध सका है, किन्तु समस्त जनपद का हृदय कलरव में ध्वनित हो उठा है। इसलिये बंगाल जनपद में 'छड़ा' (ग्राम्य गीत) कथा रूप में जो साहित्य ग्राम वासियों के मन को हमेशा दोलित करता रहा है। उसे काव्य रूप में ग्रहण करने के समय उसके साथ मन ही मन सारे गाँव, समस्त लोक को जोड़कर पाठ करना होता है। वही उसके भंग छन्द एवं अपूर्ण मेल को अर्थ एवं प्राण से भर देता है। ग्राम्य साहित्य बंगाल के गाँव की छवि, गाँव की स्मृति की अपेक्षा रखता है। इसीलिए बंगालियों के लिए उसका एक विशेष रस है। वैष्णव जब 'जय राधे' कहकर भिक्षा माँगने के लिए अन्तःपुट के आँगन में आकर खड़े होते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
हैं। तब कुतूहली गृहकर्त्ती एवं अवमुष्ठित बधुएँ उसे सुनने के लिए उत्सुक होकर आती है। बूढ़ी दादियाँ जो 'छडा' कहानी और गान से आकंठ परिपूर्ण हैं। ऐसे कितने शुक्ल पक्ष के ज्योत्सना में एवं कृष्ण पक्ष के तारा के आलोक में उन्हें परेशान करके जगाकर घर के बालक-बालिकाएँ, युवक-युवतियाँ एकाग्रमन से अनेक शत वर्ष से सुनती आ रही हैं, बंगाली पाठकों के लिए उसका रस गंभीर एवं अक्षय है।

पेड़ की जड़ें जैसे मिट्टी के साथ जड़ित होती है एवं उसका अग्रभाग आकाश की ओर बढ़ता गया है। उसी प्रकार सर्वत्र ही साहित्य का निम्न अंश अपने देश की मिट्टी में अनेक भाग जड़ित होकर ढका रहता है, वही विशेष रूप से संकीर्ण रूप से देशी, स्थानीय होता है। वह केवल देश के जन साधारण के द्वारा ही उपभोग्य एवं ग्राहय होता है। वहाँ दूसरे लोगों के प्रवेश का अधिकार नहीं होता। साहित्य का जो अंश सार्वभौमिक हे वह इसी प्रादेशिक निम्न स्तर के ढेर के ऊपर खड़ा है। इस प्रकार निम्न साहित्य एवं साहित्य में बराबर भीतरी एक योग है। जो अंश आकाश की ओर है उसके फूल-फल, डाल-पत्ते के साथ मिट्टी के नीचे की जड़ों की तुलना नहीं होती। फिर भी तत्वविदों के लिए उनका सादृश्य एवं सम्बन्ध किसी भी प्रकार दूर नहीं होता।

नीचे के साथ ऊपर का जो यह योग है वह प्राचीन बंगाल साहित्य की आलोचना करने पर स्पष्ट दिखाई देता है। अन्नदा मंगल एवं कवि कंकण के कवि यद्यपि राजसभा धनी सभा के कवि थे। यद्यपि वे दोनों विद्वान संस्कृत काव्य साहित्य के विशारद थे। फिर भी देशी प्रचलित साहित्य को काफी दूर नहीं छोड पाये। अन्नदामंगल एवं कुमार सम्भव के आख्यान में कम अन्तर है किन्तु अन्नदामंगल कुमार सम्भव के सांचे में गढ़ा नहीं गया है। उसके देव-देवी बंगाल के ग्राम्य हर गौरी के कवि कंकण चण्डी, धर्म मंगल, मनसा-मासान, सत्य पीर की कथा सभी ग्राम्य कहानी के आधार पर रचित है। उसी ग्राम्य 'छड़ों' का परिचय पाना ही भारत चन्द मुकुन्द राम रचित काव्य का यथार्थ परिचय पाने का रास्ता है। इसमें सन्देह नहीं कि राज सभा के काव्य में छन्दों का मेल होता है और काव्य कला सुसम्पूर्ण होती है। किन्तु ग्राम्य गीतों के साथ उसका मर्मगत विभेद नहीं था।

पहले ग्राम्य 'छड़े' गाँव के सम्भ्रान्त परिवार की लडकियों की भी साहित्य रस की तृष्णा मिटाने के लिऐ भिखारिनी एवं दादियों के मुख से घर-घर में प्रचारित होती। अब उनमें अनेक पढ़ना सीखी हैं। बंगाल के छापाखाना का साहित्य उनके हाथों में आया है। लगता है इस समय ग्राम्य 'छडे' समाज के अनेक नीचे के स्तर पर चले आये हैं।

छड़ों के विषय को आमतौर पर दो भागों में बाँटा जा सकता है। हर गौरी विषयक एवं कृष्ण राधा विषयक। हर गौरी विषय में बंगाली के घर की बात एवं कृष्ण राधा के विषय में बंगाली के भाव की बात व्यक्त होती है। जिस तरफ सामाजिक दाम्पत्य बन्धन और एक तरफ समाज बन्धन का अतीत प्रेम होता है। राधा-कृष्ण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सम्बन्ध छड़ों की जाति स्वतंत्र है। वहाँ वास्तविकता के क्षेत्र को मानसिकता में पहुँचना होता है। प्रतिदिन की घटना, सांसारिक व्यापार सामाजिक रहस्य कहाँ स्थान नहीं पाता। वही अपरूप ग्वाले का राजा बंगाली छड़ा का रचयिता एवं श्रोताओं के मानस का राज्य है।

स्थाने स्थाने फेरेन रारकल संगे केह नाइ।
भाण्डी वने धेनु चरान सुवल कानाइ।।
सुवल वलिछे शुन भाई रे कानाइ।
आजि तोरे भाण्डीवन विहारी साजाई।।
(जगह जगह घूमता ग्वाला, साथ में कोई नहीं।
भाण्डी वन में गाय चराते बलदेव कन्हाई।
बलदेव ने कहा सुनो भाई रे कन्हाई।
आज तुम्हे भाण्डी वन बिहारी सजाऊँ।।)

यह सजाने का प्रस्ताव सुनकर निकुंज में जहाँ जितने फूल –– सभी आग्रह पूर्वक व्याकुल हो गये-

कदम्बेर पुष्प वलेन सभा विद्यमाने
साजिया दुलिव आजि गोविन्देर काने।।
करवी पुष्प वलेन आभार मर्म के वा जाने-
आज आभाय राखवेन हरि चुड़ार साजने।।
अलक फुलेट कनक दाम वेल फुलेर गाँधनि-
आभार हृदये श्याम दुलावे चूड़ा मणि।।

कला निपुणता की प्रशंसा आरम्भ की। कोकिल सपत्नीक आकर कह गये 'किंकिणी किरीटी अति परिपाटी'-

डाहुक डाहुक टिया हुआ पारिव
झंकारे उड़िया याय।
(चिल्ला चिल्ला करके तोता वगैरह पक्षी
झंकार करके उड़ जाते।।)
वे झंकार करके क्या बात कहे?
सुबल रारवाल साजाये छे भालों
विनोद बिहारी राय।
(सुबल ग्वाला सजाया है अच्छा विनोद बिहारी राय।

इधर चातक-चातकी श्याम को मेघ के भ्रम से उड़-उड़कर घूम-घूमकर 'जल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
दो', 'जल दो', कहते हुए मडराने लगे। वन में शाखाओं पर पल्लव में हवा में, आकाश में भारी शोर मच गया।

कानाइ वालिछे प्राणेर भाइ रे सुबल
केमने साजाले भाइ बल् देखि वल्।
(कान्हा ने कहा प्राण भाई हे सुबल!
कैसे सजाये भाई बोलो देखूं बोलो।।)

कान्हा जानते हैं कि उनकी सज्जा सम्पूर्ण नहीं हुई है। कोकिल कोकिला एवं डाहुक-डाहुकी जो भी क्यों न बोले, सुबल की रुचि एंव नैपुण्य की प्रशंसा करने का समय नहीं हुआ।

नाना फुले साजाले भाइ वामे दाओ प्यारी।
तवे तो साजिवे तोर विनोद बिहारी।
(नाना फूल से सजाये भाई, बाँये दो प्यारी।
तभी सजेंगे तुम्हारे विनोद बिहारी।)

वृन्दावन का सर्वप्रधान फूल ही बाकी था। वह कभी तो पशु पक्षियों की नजर में नहीं आ सकी। किन्तु श्याम को खटकने लगा।

कुंज पाने ये दिके भाई चेये देखि आँखि।
सुखमय कुंजवन अन्धकार देखि।।
(कुंजवन में जिस दिशा में भाई आँख से देखता।
सुखमय कुंजवन में अंधकार दिखायी देता।।
तब लज्जित सुबल ने कहा-
एइ स्थाने थाको तुमि नवीन बंशी धारी।
खुँजिया मिलाव आज कठिन किशोरी।।
(इसी स्थान पर रहो तुम नवीन वंशी धारी।
खोजकर मिलाऊँगा आज कठिन किशोरी।।)
इधर ललिता- विशाखा सखियों के बीच राधिका बैठी है।
सुबल के देखिया सवाई हये हरषित-
एसो एसो वोसो सुवल एकी अचरित।।
(सुबल को देखकर सभी हुई हर्षित-
आओ-आओ बैठो सुबल यह क्या आचरज।।)
सुबल ने संवाद किया-
मन्द मन्द वहितेछे वसन्तेर वा, पत्र पड़े गलि।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कांदिया वलेन कृष्ण कोथाय किशोरी।।

(मन्द मन्द बह रही बसन्त की बयार, पत्र गिर गये।

क्रन्दन करके कहा कृष्ण ने कहाँ किशोरी।।)

कृष्ण की दुरवस्था की बात सुनकर राधा ने रोकर कहा

साधक रे हार गेंथेछि सइ

दिव कार गले।

झांप दिये मरिव आज यमुनार जले।।

(साध से हार गूँथी थी सखी,

दूंगी किसे गले में।

कूदकर मरुंगी आज यमुना के जल में।।)

महारानी अनावश्यक इस प्रकार एक दुःसाध्य दुःसाहसिक घटना घटाने के लिए एक क्षण में कृत संकल्प हो गयी। किन्तु अन्त में सखियों से रफा करके कहा-

येइ साजे आछि आमि इए वृन्दावने।

सेइ साजे याव आमि कृष्ण दरशने।।

दाँड़ा लो दाँड़ा लो सेइ वले सहचरी।

धीरे याओ फिरे चाओं राधिका सुन्दरी।।

(जिस सज्जा में हूँ मैं इस वृन्दावन में।

उसी सज्जा में मैं जाऊँगी कृष्ण दर्शन को।।

रूको हे रूको हे वही कही सहचरी।

धीरे जाओ लौटकर देखो राधिका सुन्दरी।।)

राधिका ने सखियों को बुलाकर कहा।

तोमरा गो पिछे ऐसो माथे करे दइ।

नाथेट कुशल होक, झरित् एसो सइ।।

(तुम लोग पीछे आओ सिर पर रखकर दही।

नाथ का कुशल हो, झटित आओ सखी।।)

राधा ने यद्यपि प्रथम आवेग में कहा था कि जिस साज में हूँ, उसी साज में जाऊँगी किन्तु वह संकल्प रहा नहीं।

हालिया माथाय वेणी वामे वाँधि चुड़ा

अलका तिलका दिये एँटे परे घड़ा।

घडार ऊपर तुले निलेन सुवर्नेर झटा।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सोनार विजय शोभ हाते ताड़ वाला।
गले शोभे पंचरत्न तक्ति कंठमाला।
चरणे शोभिछे राइयेर सोनार नुपूर।
कटिते किंकिणी साजे, वाजिछे मधुर।।
चिन्ता नाई चिन्ता नाइ विशाखा एसे वले।
धवलीर वत्स एकटि तुले लओ कोले।।
(हिलती हुई माथे की वेणी बाँटो बाँधी चूड़ा
अलका तिलक लगाकर वक्र हुआ है धड़।
धड़ के ऊपर उठा ली सुवर्ण झझरा।।
सोने का विज शोभित है हाथ में ताड़ का बाला।
गले में शोभित पंचरत्न ताबीज कंठ माला।।
चरण में शोभित रानी के सोने का नुपूर।
कटि में किंकणी सज्जित बजता है मधुर।।
चिन्ता नहीं चिन्ता नहीं विशाखा आकर कहती।
धौली का एक बछड़ा उठा लो गोद में।।)

सभी सखियाँ दही का भाण्ड सिर पर लेकर एवं राधिका धौली के एक बछड़े को गोद में लेकर ग्वालिनों के दल के साथ ब्रज के रास्ते से श्याम दर्शन के लिए चली। कृष्ण तब राधिका का रूप धारण करते-करते अचेत हो गये।

साक्षाते दौडाये राइ वलितेछे वाणी-
की भाव पडिछे मने श्याम गुणमणि।
ये भाव पड़ेछे मने सेइ भाव आमि।।
(साक्षात खड़े होकर राम बोल रहे हैं वाणी-
कौन भाव हो रहा है मन में श्याम गुणमवि।
जो भाव हो रहा है मन में वही भाव मैं।।)

राधिका ने सविनय सगर्व कहा तुम्हारे अन्तर का भाव मैं बाहर प्रत्यक्ष विराजमान हूँ।

गाओं तोला चक्षु मेलो ओहे नीलमणि।
काँदिये काँदाओं केन, आमि विनोदिनी।।
अंचले ते छिल माला दिल कृष्णेर गले।
राधा कृष्णेर युगल मिलन भाण्डीर बने।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(शरीर उठाओ आँख खोलो ओ रे नलीमणि।

रोकर रूलाते हो क्यो, मैं विनोदिनी।।

अंचल में था माला दिया कृष्ण के गले में।

राधा कृष्ण का युगल मिलन भाण्डी के वन में।।)

भाण्डी वन विहारी की सज्जा सम्पूर्ण हुई; सुबल के हाथ का कार्य सिद्ध हो गया।

इसमें विशेष करके बंगाल का ग्राम्य दृश्य गृहीचित्र कुछ भी नहीं है। ग्वालिनी जिस प्रकार सजती है नुपूर, किंकिणी बजाकर दही माथे पर बछड़ा गोद में लेकर वन पथ में चल रही है। उसे बंगाल के ग्राम पथ पर प्रतिदिन अथवा कदाचित देखने को नहीं मिलता। ग्वालगण मैदान में बरगद की छाया में अनेक प्रकार का खेला करते हैं। किन्तु फूल को लेकर उनका और उनको लेकर फूल की इस प्रकार मदमत्तता सुनी नहीं होती। यह सब भाव की सृष्टि है। कृष्ण राधा का विरह मिलन समस्त विश्ववासी के विरह मिलन का आदर्श है, इसमें भारत वर्ष का ब्राह्मण समाज या मनुसंहिता नहीं है। इसका आगा-पीछा ग्वालों का काण्ड है। जहाँ समाज बलवान है वहाँ वृन्दावन के गोचारण के साथ मथुरा के राज्य पालन का एकाकार होना अत्यन्त असंगत है। किन्तु कृष्ण राधा की कहानी जिस भाव लोक में विराज करती है वहाँ इसकी किसी कैफियत की आवश्यकता नहीं होती। यहाँ तक कि वहाँ चिर प्रचलित समस्त समाज प्रथा का अतिक्रम करके वृन्दावन की ग्वालवृत्ति मथुरा के राजत्व की अपेक्षा ज्यादा ध्यान देने योग्य प्रमाणित हुई है। हमारे देश में जहाँ कर्म विभाग, —— शासन एवं सामाजिक उच्च नीचता का भाव जन साधारण के मन में इस प्रकार दृढ़बद्ध मूल है। वहाँ कृष्ण राधा की कहानी में इस प्रकार का आचार विरुद्ध बन्धन विहीन भाव की स्वाधीनता कितनी आश्चर्य जनक है।

हम उसे चिर अभ्यास क्रम से अनुभव नहीं करते। कृष्ण के मथुरा में राज्य करने जाने पर राधिका ने रोकर कहा-

आर कि एमन भाग्य हवे, ब्रजे आसवे हरि।

से गिछे मथुरापुरी, मिथ्ये आशा करि।।

(और क्या ऐसी भाग्य होगी, ब्रज में आयेंगे हरि।

वे गये हैं मथुरा पुरी, झूँठे आशा करूँ।।)

राजा को पुनः ग्वाल बनाने की आशा दुराशा है, यह बात सबको स्वीकार करनी होगी। किन्तु वृन्दा असली बात समझती है, वह जानती है, निराशा होने का कोई कारण नहीं। वह जानती है कि वृन्दावन-मथुरा में काशी-कांची का नियम ठीक से खपता नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वृन्दे वले आमि यदि एने दिते पारि
तवे मोटे की धन दिवे
बल तो किशोरी।।
शुने वाणी कमलिनी येन पड़िल धन्ये-
देह प्राण करेछे दान कृष्ण पदार विन्दे।।
एक कालेते याँक संपेछि विराग हलेन ताँइ।
यम सम कोनो देवता राधिकार नाइ।।
इहा वइ निश्चय कइ कोथा पाव धन।
मोर केवल कृष्ण नाम अंगेर भूषण।।
राजार नन्दिनी मोरा प्रेमेर भिखारि-
बँधुर काछे सेइ धन लये दिते पारि।।
वलछे दूती, शोन श्रीमती, मिलवे श्यामेर साधे।
तखन दुजनेर दुह युगल चरण ताइ दियो मोर माधे।।
(वृन्दा ने कहा मैं यदि ला पाऊँ
तब मुझे दोगी कौन धन
बोलो तो किशोरी।।
सुनकर वाणी कमलिनी जैसे पड़ी समस्या में-
देह प्राण किया है दान कृष्ण पदार विन्द में।।
एक समय से जिसे सौंपा है विराग हुए वही।
यम सम कोई देवता राधिका के नहीं हैं।।
यही कहती हूँ निश्चय करके कहाँ पाऊँगी धन।
मेरे केवल कृष्णनाम अंग के भूषण।।
राजा की नन्दिनी मैं प्रेम की भिखारी-
वधू के पास से वही धन लेकर दे सकती हूँ।।
कहती दूती, सुनो श्रीमती, मिलोगी श्याम के साथ।
तब दोनों लोगों का दो युगल चरण वही देना मेरे माथे पर।।)

रास्ते में-

हास्य रसे एक जनके जिज्ञासिलेन तवे,
कओ देखिकार अधिकारे वसत कर सवे।
से लोक वसले तखन राजा कृष्णचन्द्र राम,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेघेर धारा रौद्रे येमन लागलो दूतीर गाय।।

ननीचोटा राखाल छोड़ा ठाट करेछे आसि।

चोर विने ताके कवे डाकछे गोकुल वासी।।

(हास्य रस में एक जन से पूछा तब,

कहो जानूँ किसके अधिकार में रहते हो सभी।।

उस व्यक्ति ने कहा तब राजा कृष्ण चन्द्र राय।

मेघ की धारा में रौद्र जैसा लगा दूती के शरीर में।।

माखन चोर ग्वाल छोकड़ा ठाट बनाया है आकर।

चोर बिना उसे कब पुकारते हैं गोकुल वासी।।)

कृष्ण की यह रायबहादुर खिताब दूती को अत्यन्त कौतुकपूर्ण लगी कृष्णचन्द्र राय, यह तो असली नाम नहीं है। यह तो मूढ़ लोगों को भुलाने का एक आडम्बर है। असली नाम वृन्दा जानती है।

चललेन शेषे कांगाल वेशे उतरिलेन द्वारे।

हुकुम बिने राति दिने केओ ना येते पारे।।

(चले अन्त में कंगाल वेश में उतरे द्वार पर।

हुक्म बिना रात्रि दिन कोई नहीं जा पाता।।)

बहुत कष्ट से हुक्म पाकर 'वृन्दावति गयी सभा के बीच में।

सम्भाषण करि इती थाकल कत क्षण।

एक दृष्टि चेये देखे कृष्णेर वदन।।

घड़ा चूड़ा त्याग करिये मुकुट दिये छे माथे।

सब अंगे राज आभरण, वंशी नाइको हाते।।

सोनार माला, कण्ठहार बाहुते वाजुवन्द।

श्वेत चामरे वतास पड़े देखे लोग छन्द।।

निशान उडे, डंका मारे, वलछे खबरदार।

ब्राह्मण पण्डितेर घटा व्यवस्था विचार।।

आर एक दरखास्त करि शुन दामोदर।

यमुनाते देखे एलेम एक तरी मनोहर।।

शून्य हमें भासछे तरी ओइ यमुना तीरे।

काण्डारी अभाषे नौका घाटे घाटे फिरे।।

पूर्वे एक काण्डारी छिल सर्व लोके कय।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
से चोर पालालो कोथा ताके धरते हय।।
शुनते पेलेय हेथा एलेम मथुरा ते आछे।
हाजिर कर यदि जानते पाणे पाछे।।
मैये हये कय कथा, पुरुषेट डरायगा।
सभा क्षुद्ध निःशब्द के ओना करे रा।।
व्रज पुरे घर वसति मोर।
भाण्ड भेंगे ननि खेये पलाये छे चोर।।
चोर धरिते एइ सभाते आसछे अभागिनी।
केमन राजा विचार कर जानव ता एखनी।।
(सम्भाषण करके दूती रुकी कुछ क्षण।
एक दृष्टि से देखती रही कृष्ण का वदन।।
धवल चूड़ा त्याग करके मुकुट दिया है माथे पर।
सभी अंगों में राज आमरण वंशी नहीं है हाथ में।।
सोने की माला, कंठहार बाहु में बाजूबन्द।
श्वेत चामर से हवा की जाती देखकर लगता मुश्किल।।
निशान बजता, डंका पड़ता है कहते हैं खबरदार।
ब्राह्मण पण्डित की घटा व्यवस्था विचार।।
और एक दरख्वास्त करती सुनी दामोदर।
यमुना में देखकर आयी एक तरणी मनोहर।।
शून्य होती जाती तरणी उसी यमुना के किनारे।
नाविक के बिना नौका घाट घाट पर घूमती।।
पूर्वे एक नाविक था सभी लोग कहते।
वह चोर भागा कहाँ उसे पकड़ना होगा।।
सुनी हूँ यहीं आकर मथुरा में है।
हाजिर न करो यदि जान पाओगे बाद में।।
लड़की होकर कहती बात, पुरुष से डरता शरीर।
सभा पूरी निःशब्द, कोई नहीं करता शब्द।।
वृजपुरी में घर बस्ती मेरी
भाण्ड तोड़कर मक्खन खाकर भाग गया है चोर।।
चोर पकड़ने इसी सभा में आ रही है अभागिनी।
कैसे राजा हो विचार करो जानूँगी उसे अभी।।)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वृन्दा ने कृष्ण चन्द्र राय के राज सम्मान की रक्षा करके ठीक डण्डे की तरह बातें कीं - कवि की रिपोर्ट देखने पर अन्ततः वही लगता है तब इसमें कुछ स्पर्धा भी थी। वृन्दा मथुरा के ऊपर अपने वृन्दावन के मिजाज को फैलाने से बाज नहीं आयी। हानि यदि न करों तो जान सकोगे बाद में' यह बात खूब कठोर बात है।

उसे सुनकर सभा के सभी लोग निःशब्द हो गये। मथुरा के महाराज कृष्ण चन्द्र राय ने कहा-

व्रजे छिले वृन्दावासी बुझि अनुमाने।
कोन दिन वा देखा साक्षात् छिल वृन्दावने।।
तखन वृन्दा कच्छेन की जाति ता हवे कदाचित।
विषय पेले अनेक भोले महतेर रीत।।
(व्रज में थी वृन्दावासी समझता हूँ अनुमान से।
किसी दिन देखा - साक्षात् था वृन्दावन में।।
तब वृन्दा ने कहा, क्या जानूँ वह होगा कदाचित्।
विषय (अधिकार) पाने पर अनेक भूल जाते हैं, बड़ों की यही रीति।।)
कृष्ण द्वारा वृन्दावन के कुशल समाचार पूछने पर वृन्दा ने कहा
हाते ननि डाकछे रानी गोपाल कोथा रय।
धेनु वत्स आदि तब तृण नाहिं खाय।।
शतदल भासतेछे सेइ समुद्र माझे।
कौन घाट धुतुरा पेये एत डंका बाजे।।
(हाथ में मक्खन लेकर पुकारती रानी गोपाल कहाँ हो।
धेनु वत्स आदि तब तृण नहीं खाते।।
शतदल तैरते उस समुद्र में।
कौन नाचीज धतूरा पाकर इतना डंका बजाता।।)

मथुरा के राजत्व की तुलना वृन्दा ने धतूरे के साथ की है। उसमें मत्तता (गर्व) है, किन्तु वृन्दावन का सौन्दर्य और सुगन्धि कहाँ है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि इसके बाद वृन्दा का दैन्य व्यर्थ नहीं हुआ-

दूती कृष्ण लये विदाय हये व्रजपुरे एल।
पशुपक्षी आदि यत परिताण पेल।।
व्रजेट धन्य लता तमाल पाता धन्य वृन्दावन।
धन्य धन्य राधा कृष्णेर युगल मिलन।।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(दूती कृष्ण को लेकर विदा लेकर व्रजपुर में आयी।
पशुपक्षी आदि जितने थे परिताण पाये।।
व्रज की धन्य लता तमाल पत्र धन्य वृन्दावल।
धन्य धन्य राधा कृष्ण का युगल मिलना।।)

रवीन्द्र नाथ ने कृष्ण राधा सम्बन्धी ग्राम्य गीत के विश्लेषण के बाद पश्चिम यानी हिन्दी प्रदेश की राम कथा से तुलना की है। उनका कहना है कि बंगला ग्राम्य गान में हर गौरी एवं राधा कृष्ण की कथा के अलावा सीता राम एवं राम रावल की कथा भी पायी जाती है। किन्तु उनकी तुलना में अल्प है। यह बात स्वीकार करनी ही होगी कि पश्चिम में जैसे रामायण की कथा ही जनसाधारण में काफी मात्रा में प्रचलित है। वहाँ बंगला की अपेक्षा पौरुष की चर्चा अधिक है। हमारे प्रदेश में हर गौरी-कथा में स्त्री-पुरुष एवं राधा कृष्ण की कथा में नायक-नायिका के संबंध नाना रूप में वर्णित हैं। किन्तु उनका प्रसार संकीर्ण है, उसमें सर्वांगीण मनुष्य का खाद्य नहीं है। हमारे प्रदेश के राधा-कृष्ण की कथा में सौन्दर्य वृत्ति एवं हर गौरी की कथा में हृदयवृत्ति की चर्चा हुई है। किन्तु उसमें धर्मवृत्ति की अवतारणा नहीं हुई है। उसमें वीरत्व, महत्व, अविचलित भक्ति एवं कठोर त्याग को स्वीकार करने का आदर्श नहीं है। राम-सीता का दाम्पत्य हमारे प्रदेश के प्रचलित हर गौरी दाम्पत्य की अपेक्षा बहुत गुना श्रेष्ठ उन्नत एवं विशुद्ध है, वह जितना कठोर गंभीर है उतना ही स्निग्ध कोमल है। रामायण कथा में एक ओर कर्तव्य का दुरुह काठिन्य है तो दूसरी ओर भाव का अपरिसीम माधुर्य एक साथ सम्मिलित है। उसमें दाम्पत्य सौभ्रात्य, पितृभक्ति, प्रभुभक्ति प्रजा वात्सल्य प्रभृति मनुष्य के जितने प्रकार के उच्च अंश के हृदय बन्धन है, उसका श्रेष्ठ आदर्श परिस्फुट हुआ है। उसमें सब प्रकार के हृदयवृत्ति के महाधर्म नियम के द्वारा पग-पग पर संयमित करने का कठोर शासन प्रचलित है। हर प्रकार से मनुष्य को मनुष्य बनाने की ऐसी उपयोगी शिक्षा और किसी देश में किसी साहित्य में नहीं है। बंगाल की मिट्टी में उस रामायण की कथा हर गौरी और राधा कृष्ण की कथा के ऊपर सिर नहीं उठा पायी, वह हमारे प्रदेश का दुर्भाग्य है। जिसने राम को युद्ध क्षेत्र में एवं कर्मक्षेत्र में नर देवता का आदर्श माना है। उसके पौरुष कर्तव्य निष्ठा एवं धर्म परता का आदर्श हमारी अपेक्षा उच्चतर है।

❑ प्रोफेसर, हिन्दी भवन
विश्वभारती शान्तिनिकेतन-731235
(प. बं.) सचल संवादः 09434375497

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रचनाकार और चिन्तक डा. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय

डा. राममूर्ति त्रिपाठी

डॉ. उपाध्याय के व्यक्ति और लेखक - दोनों रूपों को मुझे नजदीक रहकर देखने- परखने का अवसर मिला है। संसारातीत तत्त्व निरा तम या निरा प्रकाश हो सकता है, पर संसार दोनों के घोलमेल से अस्तित्व में आया है। फलतः संसारी वस्तु हो या व्यक्ति - ये दोनों घटक उसमें मौजूद होंगे ही, अनुपात में अन्तर हो सकता है। प्रकाश जब अन्धकार को अपने कब्जे में ले लेता है तब वस्तु या व्यक्ति अच्छा माना जाता है। डा. उपाध्याय के भोक्ता और सृष्टा में भी एक आनुपातिक स्थिति में दोनों अनिवार्य घटकों का योग सहज सम्भव है, परन्तु इतना मैं निर्भ्रान्त रूप से कह सकता हूँ कि वह ''कठमुल्ला'' नहीं है। वह अपने दृष्टा और भ्रष्टा को चिन्तन के शाण पर निरन्तर चढ़ाए रखते हैं ताकि वह संस्कृत होता रहे। उसकी ऊर्ध्वमुखी गति में कहीं अवरोध न आए। संस्कार का आशय ही है मल को हटाकर निहित दीप्ति का व्यक्त होना- अतिशय का प्रकाश में आना। संस्कार से वाह भारतीय हैं - पर विचार में उनके मस्तिष्क का दरवाजा हर तरह की स्वस्थ वायु के लिये खुला रहता है। विचारों में मार्क्सवादी होते हुए भी - भौतिकवादी दर्शन से प्रभावित होते हुए भी - ''अतिभौतिक'' के मानने न मानने की कोई जिद नहीं हैं उनमें। मार्क्स स्वयं मानता है कि वह वैज्ञानिक मान्यताओं में आस्था रखता है और विज्ञान अभी राह में है। अतः वह अपनी मान्यताओं में विज्ञान की तरह परिवर्तन कर सकता है - पर अन्तिम रूप से उसका अपना एक ''गन्तव्य'' है और तदर्थ ''मार्ग'' भी। डा. उपाध्याय की इसमें आस्था है। उनके चिन्तनपरक और रचनात्मक लेखन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि वह मानवता के पक्षधर हैं और तदर्थ वह कुछ भी छोड़ने या ग्रहण करने के पक्ष में हैं। ऐसा व्यक्ति ''कठमुल्ला'' नहीं हो सकता। वह ''जनवाद'' के विरोध में ''प्रगतिवादी'' या ''प्रगतिवाद'' के विरोध में ''जनवादी'' नहीं है। भारतीय संस्कृति की पहचान जिस समन्वयी वृत्ति में है- उसको पाने की तड़प उनमें कहीं न कहीं है। कट्टर शुद्धतावादियों की तरह उनमें परहेज या नफरत की ''अति'' नहीं दिखाई पड़ती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
लेखक और चिन्तक को "दृष्टि सम्पन्न" और "समकालीन" होना चाहिए। "दृष्टि" की गहनता और व्यापकता से उसकी "समकालीनता", "चिरन्तनता" के साथ जुड़ जाती है। डा.उपाध्याय के पास जिद रहित एक गतिशील दृष्टि है इसीलिए वह ज्ञान के क्षेत्र में छूत नहीं मानते। यों वे ज्ञानेतर क्षेत्र में भी ऐसा नहीं करते। वह त्याग या ग्रहण से पूर्व परिचय प्राप्त करते हैं। तब त्याग या ग्रहण करते हैं- "संग्रह त्याग न बिनु पहचाने।" इसीलिए जहाँ वह "अगम-निगम" जैसे भारतीय वाङ्मय का मनन - मन्थन करते हैं, वहीं पाश्चात्य विचारधाराओं से भी परिचित होने का, परिचित होते रहने का प्रयास करते रहते हैं। इसीलिए उनकी लेखनी जहाँ एक ओर मध्यकालीन साहित्य में तांत्रिक प्रभाव की खोज करती है, वहीं दूसरी ओर समकालीन साहित्य पर भी अपनी मान्यता प्रस्तुत करती है। पौरस्त्य और पाश्चात्य ज्ञान - विज्ञान से मण्डित चिन्तक ही भारतीय काव्यशास्त्र की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी व्याख्या लिख सकता है। उनकी यह कृति पर्याप्त चर्चित भी हुई है। ज्ञानार्जन और अर्जित ज्ञान के लोक-समर्पण की अद्‌भुत वृत्ति है इनमें। खाते-पीते, चलते-सोते, उठते-बैठते निरन्तर ज्ञानार्जन करते रहने की इनमें आदत पड़ गई है। यह वृत्ति व्यासंग या आसक्ति की सीमा तक है। इतना तो मैं अपने संसर्ग जन्य अनुभव से भी कह सकता हूँ। प्रायः देखा जाता है कि प्रशासन के दायित्व निर्वाह में कभी - कभार सारस्वत उपासक भी सारस्वत सेवाओं से कट जाता है। पर डा. उपाध्याय इसके अपवाद हैं। कुलपति का पद सामान्य झंझावातों से अनाक्रान्त नहीं है - फिर भी संयत और सन्तुलित रहकर अपनी सारस्वत सेवा को वह बरकरार रखे हुए हैं। यह उनकी महाप्राणवत्ता और जीवन्तता का ज्वलन्त निदर्शन है।

डा. उपाध्याय आगरा स्कूल के स्नातक हैं। जहाँ पं जगन्नाथ तिवारी, डा. रामविलास शर्मा तथा डा. शिवदान सिंह चौहान जैसी हस्तियों की छाया और सान्निध्य लाभ रहा है। बाबू गुलाब राय के "साहित्य सन्देश" से भी उनकी सम्पृक्ति रही है। निश्चय ही इन सबसे सम्पर्क ने उनकी सारस्वत दिशा का निर्धारण तथा परिष्कार किया है। आज वह स्वयं इस स्कूल के एक स्तम्भ बन गए हैं।

डा. उपाध्याय एक संवेदनशील मनुष्य हैं, चिन्तक हैं - साथ ही साथ कवि और कथाकार भी हैं। उनमें अभिव्यक्ति के खतरे उठाने का अदम्य साहस है। जो उनकी निर्भीक आलोचनाओं में तो परिलक्षित होता ही है। उनकी रचनाओं में भी प्रतिबिम्बित होता है। रचनाकार वह हो नहीं सकता जिसमें "राग" जमाव के रूप में विद्यमान न हो। यही "राग" अपने में "आग" समाविष्ट किए हुए है। जिसमें "राग" और "आग" न हो वह ठंडा शव है- और जिसमें ये ही तत्त्व ऊर्ध्वमुख हो जाएँ - वह उसकी "शक्ति" (इकार) बनकर उसे "शिव" बना देते हैं। वही जगत्

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की ज्वाला का हलाहल पीकर, लोक को अमृत का पान करा सकता है। एक तरफ सौन्दर्य बोध उनके राग को दीप्ति करता है - उनकी चेतना के आलम्बन की परिधि का विस्तार करता है। तो दूसरी ओर शोषित पीड़ित अवाम की अमानवीय यातना से करूणा क्रोध में रूपान्तरित हो जाती है। उनकी रचनाएँ उसकी साक्षिणी हैं। वह कहते हैं कि अनुभूति के गहरे अहसास से रचना जन्म लेती है। और तभी असरकारी होती है। यह लिखने के लिये सायास लेखन नहीं करते अपितु नव अनुभूति अपनी विशिष्ट प्रक्रिया में सर्जनात्मक बन जाती है तब स्वतः रचनात्मक रूपान्तरण कर जाती है।

मैंने उनके उपन्यास भी पढ़े हैं। ये उपन्यास ''अतीत'' से ''वर्तमान'' तक की भूमियों पर रचे गए हैं। पर उनकी विश्वदृष्टि और जीवन दृष्टि तह में सर्वत्र परिचालक का काम करती है। रचनाकार में यह दृष्टि सामान्य ही उस साहित्यिक का स्तर प्रदान करती है। जिस प्रकार नियंत्रण कक्ष से असंबद्ध वायुयान अपनी राह और मंजिल से या तो भटक जाता है या पथच्युत हो जाता है वही हाल रचनाकार का भी है। उसका प्रातिम यान ''दृष्टि'' से कटकर मेरूदण्डविहीन हो जाता है। चाहे उनका उपन्यास ''रीछ'' हो या ''जोगी मत जा'' वर्तमान से सामग्री लेता हो या अतीत से - मूल दृष्टि छूटती नहीं। समाजवादी यथार्थवाद का रंग सर्वत्र उभार पर है। यथार्थवाद का यह रूप वर्तमान के विकृत रूप को बदलने का रूप तो सुझाता ही है- उस बदलाव को उसकी सारी सम्भावनाओं के साथ मूर्त भी करता है। मार्क्सवादी विचारों ने कलात्मक सृष्टि को ऊँचे स्तर पर उठा ले जाने के लिये इसे आवश्यक माना है। डा. उपाध्याय के मन को उन विशिष्ट व्यक्तियों के बिम्ब घेरते हैं जिन्होंने अपने समय में आत्मगत उपलब्धियों के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किये हैं और भगीरथ प्रयत्न द्वारा सदैव बुराई, पराजय, पतन और पाप के विरूद्ध लड़े हैं। साथ ही लोमहर्षक संघर्ष के बाद विजयी बने या उदात्त त्रासदी के शिकार हो गये। डॉ. उपाध्याय की सर्जक चेतना जब मूल्य - भ्रंश, बढ़ते आत्मनिर्वासन और पूँजीवादी उपभोक्ता समाजों में मनुष्य के पदार्थीकरण, अमानवीकरण, आपाधापी और अधःपतन को देखती है तो भर्तृहरि जैसे संघर्षशील व्यक्ति उनके मन को घेर लेते हैं और एक प्रेरक के रूप में अपनी युगोचित पुनः सृष्टि करना चाहते हैं। इस सन्दर्भ में वह ''धर्म'' के तथाकथित और वास्तविक रूप की चर्चा पर भी उतर आते हैं। वह ''धर्म'' के संबंध में यह मानते हैं कि मठों या पोपशाही से सिक्त चर्चो में धर्म का जो रूप उभरता है - वह घातक होने से त्याज्य है। धर्म का जो साम्प्रदायिक रूप उभरता है - वह घातक होने से त्याज्य है। धर्म का वह रूप जो जन-स्तर पर मनुष्य को ऊँचा उठाने वाला है - ग्राह्य है। ''धर्म'' इस व्यापक और कल्याणकारी चेतना उत्थानक अर्थ में अफीम नहीं है, अमरत है। डॉ. उपाध्याय पाठक को अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रचनाओं के दर्पण में कुरूप-सुरूप सबका साक्षात्कार कराते हैं। ताकि पाठक एक से सावधान हो दूसरे से प्रेरणा ग्रहण कर सके।

डॉ. उपाध्याय की भाषा और प्रस्तुति विषयानुरूप होती है। एक उदाहरण रचना - ''जोगी मत जा'' से लें और दूसरा आलोचना से। ''व्यक्ति-विवेककार'', महिमभट्ट ने ''तत्वोक्तिकोश'' नामक ग्रन्थ में रचना प्रक्रिया के दौरान प्रातिभ सृष्टि की बात करते हुए कहा है-

रसानुगुणा शब्दार्थ चिन्तावित्तामितचेतसः।

क्षणं स्वरूपस्पर्शोत्था प्रज्ञैव प्रतिभा कवेः।।

सा हि चक्षुरनंगवतस्तृतीयमिति गीयते।

येन साक्षात्करोत्येव भावांस्त्रैलोक्यवर्तिनः।।

सर्जनात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति के अनुरूप शब्दार्थ की चिन्ता में एकाग्रचेता रचयिता की वह प्रज्ञा प्रतिभा कही जाती है। जो वर्ण्यवस्तु के स्वरूप का साक्षात्कार कर लेती है। वही रचयिता शिव की तीसरी आँख है। इस आँख से वह देश-काल के व्यवधान को हटाकर त्रिलोकवर्ती भावों का साक्षात्कार कर लेता है। वर्ण्य वस्तु प्रत्यक्षायमाण हो उठती है और ग्राहक की कारयित्री प्रतिभा के समक्ष भी ऐसा ही होता है। ''जोगी मत जा'' का प्रारम्भ सूर्यास्त के प्रत्यक्षायमाण वर्णन से होता है।

''सूर्यास्त का समय था। प्रकृति एक ओर तो क्षितिज के चित्रपट पर लाल रंग उड़ेल रही थी, अदृश्य सागर में सोने के घट जैसे सूर्य को डुबा रही थी और दूसरी ओर वह श्याम रेखाओं को काले रंग से गाढ़ा करती हुई दिन के दृश्यों को काटती हुई सोच रही थी कि चित्र को कुछ क्षण यथावत् रखा जाए जिससे वह कृष्ण वर्ण से पूरा फलक पुत जाए तब उस श्यामपट्ट पर आकाश में झिलमिलाते नयन - चित्रित कर शून्य को सुलोचन बना दिया जाए और फिर कुछ क्षण पश्चात् राजहंस की तरह चन्द्रमा को आकाश के कुमुदवन में छोड़ दिया जाए. . . . . ।'' कितना शोभन संश्लिष्ट बिम्ब है।

डॉ. उपाध्याय अधिकार के साथ भारतीय काव्य शास्त्र और मार्क्सवादी काव्यशास्त्र पर बोलते हैं। ''समकालीन सिद्धान्त और साहित्य'' में संकलित उनके विभिन्न निबन्धों को लिया जा सकता है। एक तरफ ''सृजन प्रक्रिया में सापेक्षतावाद'' है तो दूसरी तरफ ''आज का लेखकः एक जीवन्त अन्तर्विरोध'' भी है। एक में नाट्यशास्त्रीय चिन्तन की शास्त्रीय भाषा है तो दूसरे में मार्क्सवाद की पारिभाषिक शब्दावली और गर्म भाषा।

उनके सर्जनात्मक और चिन्तनात्मक लेखन में आवेग और आवेश बना रहता है जो आग-गर्म राग के ज्वालामुखी से लावा की तरह उबलता रहता है- बाहर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उफनकर गिरता रहता है। पर, विस्मय यह है कि इस आवेग और आवेश में भी उनका चिन्तक तमतमाया रहता है- वह दबता नहीं है। वह कठमुल्लों की तरह ''भारतीय संस्कृति'' शब्द को निरर्थक नहीं मानते - सार्थक मानते हैं और उसके जिन घटकों का उल्लेख करते हैं, उन्हें आन्तरिक और बाह्य आयामों में विभक्त करते हैं। आन्तरिक आयाम में परिगणित हैं- (1) मानव का केन्द्रीय महत्त्व (2) आन्तरिक वैराग्य (3) राग - तत्व की विजय का अभ्यास - राग का दमन नहीं प्रत्युत आगम सम्मत शोधन (4) सत्य की खोज में व्यक्तिगत अधिकार - भेद की भावना, (5) बाह्य आयामों में - अतिथि पूजा (6) आनृण्य का भाव (ऋण शोधन) (7) जीवन को कर्मयोग बनाना, (8) मूल्यों की खोज, (9) तर्क को स्वीकार करना इत्यादि।

डॉ. उपाध्याय अपनी बात बड़ी दृढ़ता के साथ कहते हैं और उसका कारण उनकी ''दृष्टि'' के प्रति निष्ठा है। वह अंगद की तरह भूमि पर अपनी वैचारिक यात्रा का पैर जमकर टिकाते हैं और आत्मविश्वास के साथ यात्रा करते हैं।

❑

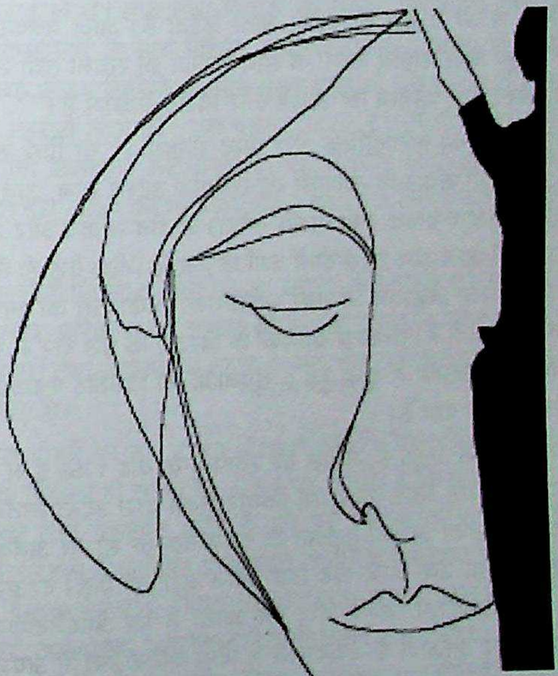

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साहित्यिक पत्रकारिता और मुख्यधारा की पत्रकारिता एक दूसरे की पूरक

डा. शिव शरण कौशिक

यद्यपि अब तक साहित्यिक पत्रकारिता के प्रत्यय तथा अवदान पर अलग से कोई गम्भीर विमर्श नहीं हुआ है तथा साहित्यिक पत्रकारिता की परम्परा बहुत सजग और समृद्ध रही है। मुख्य धारा की पत्रकारिता में जितनी तात्कालिकता होती है, साहित्यिक पत्रकारिता में उतनी ही गम्भीरता और दीर्घजीविता। फिर भी दोनों के केन्द्र में मनुष्य और समाज ही होते हैं। जिस प्रकार पत्रकारिता का समाज के साथ-साथ साहित्य से भी प्रत्यक्ष या परोक्ष नाता जुड़ता है। आज पत्रकारिता देश और दुनिया में राष्ट्रीय अन्तरराष्ट्रीय चेतना के साथ समाज की सूचना तथा संवेदना को एक दूसरे तक, विश्व तक पहुँचाने का उत्कृष्ट और विराट माध्यम है।

मुख्य धारा का इलैक्ट्रॉनिक और प्रिन्ट मीडिया हो या फिर साहित्यिक पत्र-पत्रिकाएँ, इन सभी संचार के माध्यमों का सामान्य उद्देश्य ज्ञान, अनुभव और भावों को एक दूसरे (लेखक-वाचक तथा पाठक -श्रोता) के बीच सक्रिय और सतत् साझेदारी है। यह साझेदारी आम और खास दोनों वर्गों के लिए है। ठीक वैसे ही जैसे मुख्य धारा की पत्रकारिता आम जनभाषा में तथा साहित्यिक पत्रकारिता की भाषा कुछ विशिष्ट या समीक्षात्मक होती है। संचार प्रौद्योगिकी के विस्तार के इस दौर में सभी प्रकार की पत्र-पत्रिकाओं की संख्या में वृद्धि हुई है सूचनाओं का विस्फोट पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है।

हमारे देश में 1556 ई. में प्रेस की स्थापना के बाद 1768 ई मे पत्रकारिता का आरम्भ हुआ। 30 मई 1826 को युगल किशोर शुक्ल द्वारा उदन्त मार्तन्ड का प्रकाशन प्रारम्भ किया जिसका अग्रेंजी हुकूमत के दमन चक्र के सामने अनेक मुसीबतों का सामना करना पडा उन्हें डाक छूट तक प्रदान नहीं की गई। दरअसल स्वाधीनता आन्दोलन में पत्रकारिता मिशन थी। हम· जानते हैं कि औपनिवेशिक पाबंदियों के चलते साहित्यकार आजादी के आन्दोलन में किन कठिनाईयों में अपने पत्र निकालते थे। उन्हें धनाभाव प्रकाशन की कठिनाईयाँ तथा वितरण की मुश्किलों के साथ-साथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंग्रेजी सरकार की दमनकारी घटनाओं से भी सावधान रहना पड़ता था। आजादी की अलख जगाने के साथ-साथ हिन्दू-मुस्लिम एकता को बनाए रखना तथा पूरे देश में शिक्षा का प्रसार करना इन पत्र-पत्रिकाओं का मुख्य मिशन था। स्वाधीनता आन्दोलन के युग में साम्प्रदायिक एकता का अपनी संपादकीय सामग्री में तथा अग्रलेखों में प्रमुखता देने वाली अनेक पत्र पत्रिकाएँ थी जिनमें 'स्वतन्त्र भारत', 'बलिदान', 'विशाल भारत', 'मानव धर्म', 'राष्ट्र पताका', 'प्रताप', 'अभ्युदय' आदि महत्वपूर्ण हैं। राष्ट्रीय चेतना के विकास में 'बंगदूत', साप्ताहिक कलकत्ता, प्रजामित्र, कविवचन सुधा, भारत बन्धु जैसे अनेक पत्रिकाओं ने उल्लेखनीय योगदान दिया तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द राष्ट्रीय आन्दोलन में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के अगुवा रहे।

असल में अंग्रेजों की 'फूट डालो राज करो की' नीति को ध्यान में रखते हुए देशभर के विद्वान हिन्दू-मुस्लिम सद्भावना के प्रति बहुत गम्भीर थे। डॉ. रामविलास शर्मा अपनी पुस्तक स्वाधीनता संग्राम बदलते परिप्रेक्ष्य में इसे रेखांकित करते हुए लिखते हैं कि ''हिन्दू और मुसलमान जिस तरह मिलकर अंग्रेजों के खिलाफ 1857 ई. में लड़े उस तरह उनके खिलाफ न उससे पहले लड़े और न बाद में।'' (पृष्ठ-7) दूसरी ओर यह नवजागरण का युग था। समाज सुधार की बहुत सी धाराएँ देश में फूट चुकी थीं। भारतेन्दु बाबू ने तो स्त्री-शिक्षा के चहुँमुखी प्रसार के लिए 'बालाबोधिनी' पत्रिका के कई अंक निकाले थे। ज्ञान तथा विचारों को तथ्यों, विश्लेषणों चित्र-बिम्बों तथा समीक्षात्मक टिप्पणियों के साथ विशाल जनमानस तक पहुँचाना ही तो पत्रकारिता का उद्देश्य है। यह उद्देश्य साहित्यिक और मुख्य धारा की पत्रकारिता में समान रूप से मौजूद होता है। इससे आगे और एक वृहत्तर उद्देश्य है पत्रकारिता का, वह है जनता की भावनाओं को समझना उन्हें प्रकाशित करना तथा व्यवस्था की गड़बडियों का खुलासा करना। इस उद्देश्य का भी दोनों प्रकार की पत्रकारिताएँ समान रूप से पालन करती हैं।

हम जानते हैं कि शिक्षा किसी सभ्य समाज के विकास की मूल धुरी है। साथ ही यह सकारात्मक परिवर्तन का आधार भी है। जन संचार के माध्यमों को नागरिकों को अपने अधिकारों तथा सार्वजनिक महत्त्व के मसलों पर शिक्षित करने का उल्लेखनीय साधन माना गया है।

यहाँ मेरा कहने का यह आशय बिल्कुल नहीं कि पत्रकारिता या जनसंचार के साधन शिक्षा का विकल्प हो सकते हैं। लेकिन यह अवश्य है कि जनता के ऐसे मुद्दे जो उसके जीवन को सीधे प्रभावित करते हैं, उन पर पत्रकारिता का 'फोकस' अधिक रहता ही है। और रहना ही चाहिए। आज बहुत से दैनिक समाचार पत्र जैसे जनसत्ता, राष्ट्रीय सहारा, दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, नवभारत टाइम्स तथा इण्डिया टुडे, रविवार, शुक्रवार, आउटलुक, अहा जिन्दगी जैसी साप्ताहिक पत्रिकाएँ अपने साहित्यिक परिशिष्ट निकाल रही हैं, जिनमें सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संदर्भों का समावेश मिलता है। आज मुख्य धारा का मीडिया (प्रिन्ट और इलैक्ट्रॉनिक दोनों) जनमानस से जुड़े विमर्शों की लम्बी श्रृंखलाएँ चलाता है। दैनिक समाचार पत्रों के संपादकीयों के अधिकांश लेखक तो अब साहित्यिकार या बड़े लेखक समीक्षक ही होते हैं। अखबारों में संपादक का स्थान तो अब साहित्कारों, अर्थशास्त्रियों-समाजशास्त्रियों ने ही ले लिया है। और लेखकों साहित्यकारों को भी मुख्यधारा की पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लोकप्रियता और अधिक पाठकों तक पहुँचने का अवसर सुलभ होता है।

आज बहुत सी पत्रिकाएँ ऐसी भी है जो समाचार विश्लेषणों, सामाजिक आर्थिक आलेखों के साथ-साथ कहानी, कविताएँ, संस्मरण, यात्रावृत्त, आत्मकथ्य, आलोचनात्मक लेख, सिनेमा तथा पुस्तक समीक्षाएँ भी प्रमुख रूप से समाहित करती हैं। दूसरी ओर खबर केन्द्रित पत्रकारिता के साथ ही आज साहित्यिक पत्रकारिता भी अपने को विशुद्ध साहित्यिक करने का दावा नहीं कर सकती। बल्कि वे भी किसी एक विषय या साहित्यिक अभिव्यक्ति मात्र तक सीमित नहीं रह सकती। उनमें भी हम सम्पादकीयों से लेकर प्रतिक्रियाओं तक जीवन के ज्वलंत और विविध प्रश्नों की अभिव्यक्ति को समान रूप से देख सकते हैं। यानि वे भी जीवन तथा जगत के सभी क्षेत्रों को कवर करती हैं। इस लिहाज से साहित्यिक पत्रकारिता भी मुख्यधारा की पत्रकारिता की सहगामनि बनकर उसकी सहायता ही करती है। आज की साहित्यिक पत्रकारिता ने भी अपने सांस्कृतिक अवदान के साथ हमारी राष्ट्रीय-अन्तराष्ट्रीय राजनीति, समाज, धर्म, शिक्षा अर्थ तथा विज्ञान जैसे विविध क्षेत्रों में अपनी गम्भीर, तथ्यपरक और विश्लेषणात्मक उपस्थिति दर्ज की है। इसलिए उसका मुख्यधारा की पत्रकारिता से अन्तःसम्बन्ध प्रकट भी है और प्रच्छन्न भी। इस तरह साहित्यिक पत्रकारिता भी पाठक को फुर्सत के क्षणों में दुनिया के हालचाल तथा दुनिया की हलचल से अवगत कराती है।

पत्रकारिता चाहे साहित्यिक हो या मुख्यधारा की दोनों का ध्येय अपने देश के नागरिकों को बेहतर और जिम्मेदार बनाना होता है। इसमें हो सकता है कि साहित्यिक पत्रकारिता विशेषज्ञ की भूमिका निभाती हो, जैसा कि हम जानते हैं कि साहित्यिक पत्रकारिता से जुड़े लोग, लेखक, संपादक अधिक विद्वान भाषा के जानकार तथा विशेष विधाओं के निष्णात व्यक्ति होते हैं लेकिन मुख्यधारा की पत्रकारिता इसमें बहुज्ञता की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हम जानते हैं कि भारतेन्दु से लेकर प्रेमचन्द, अज्ञेय, धर्मवीर भारती, जैनेन्द्र जैसे लोग साहित्यकार-पत्रकार दोनों थे। आज भी हम देखें तो खुशवन्त सिंह, कमलेश्वर, मृणाल पाण्डे, कुलदीप नय्यर जैसे अनेक नाम हैं जो साहित्यिक लेखन और पत्रकारिता दोनों से समान रूप से जुड़े रहे हैं। कहा जाता है कि विचारों की प्रखरता और सरोकारों की विविधता के लिए आज दोनों तरह की पत्रकारिता की महती आवश्यकता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज जब समाचार पत्रों का संसार निरन्तर विस्तार पा रहा है। समाचार और जानकारी जुटाने के साधन दिन दूनी और रात चौगुनी रफ्तार से बढ़ रहे हैं तथा समाचारों के प्रस्तुत करने की चालाक तकनीकें बढ़ रही हैं। इसी के समानान्तर साहित्यिक पत्रकारिता भी प्रकाशन की सुलभता और विज्ञापन की उपलब्धता के घोड़ों पर सवार होकर चल पड़ी हो तब यह जरूरी है कि हम इस चकाचौंध में 'दूर और पास' दोनों की चीजों को प्रामाणिक और उपयोगी स्वरूप में देख, सुन और पढ़ सकें। विश्वसनीयता के उच्च मापदण्ड दोनों ही तरह की पत्रकारिता में आवश्यक हैं। फिर भी मुख्यधारा की पत्रकारिता में यह स्वीकार करना होगा कि इन मूल्यों की जितनी चिन्ता साहित्यिक पत्रकारिता करती है उतनी मुख्यधारा की पत्रकारिता नहीं।

हाँ, एक बहुत बड़ा अन्तर साहित्यिक पत्रकारिता और मुख्यधारा की पत्रकारिता के बीच सर्वविदित है कि मुख्यधारा का मीडिया-संस्थान आज एक प्रचण्ड वेगवान कॉरपोरेट जगत है और उनके लिए अब पत्रकारिता 'मुनाफा' पहले है और 'मिशन' बाद में। उन्हें आज 'फण्ड' की कोई समस्या नहीं है। जबकि साहित्यिक पत्रकारिता के समक्ष धनाभाव ही उनके प्रसार और प्रकाशन की सबसे बड़ी बाधा होता है। यद्यपि आज कुछ बड़े संस्थान और प्रकाशक भी साहित्यिक पत्रिकाओं के प्रकाशन का बीड़ा उठा रहे हैं। दूसरा यह कि मुख्यधारा की पत्रकारिता का आधार मूलतः सूचनाएँ हैं। जबकि सूचनाएँ ज्ञान नहीं होती जिसकी पूर्ति साहित्यिक पत्रकारिता करती है। सूचनाओं का अतिरेक हमें विचार शून्य बनाता है जबकि हमारी बौद्धिक चयन प्रक्रिया हमें रचनाशील और गतिशील बनाती है। आज बड़ी पूँजी का बड़ा मीडिया मुनाफे को चरम लक्ष्य मानते हुए अपना कार्य करता है। संवेदनाओं तथा जन सरोकारों को भी वह खबरनुमा, रोचक और उत्तेजक बनाता है जिससे पाठक या दर्शक उसकी ओर आकृष्ट होने लगता है। आज 'न्यूज इंडस्ट्री' जैसे शब्द भी प्रचलन में आये हैं। लेकिन न्यूज इंडस्ट्री में उत्पादित (कृत्रिम) समाचार को हम समाचार कैसे मानें, इस पर अंकुश का काम आज साहित्यिक पत्रकारिता से जुड़े लोग समय-समय पर संपादकीय लेखों द्वारा करते रहे हैं।

इसलिए जरुरी है कि साहित्यिक पत्रकारिता के महत्व को हम समझें उसके मिशनकारी स्वरूप का आदर करें और समाज के साथ बावस्तगी का विस्तार करें।

❑ जे-426/1 संगम विहार

नई मण्डी रोड, दौसा (राज.)303303

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

‖ कहानी ‖

एक नया सफर

डॉ. दया दीक्षित

"मैंम ये देखिये! और आप लोग भी गर्ल्स! प्लीज, कम ऑन! हाँ ये कंदारिया महादेव हैं। चंदेल राजाओं ने महादेव का यह मन्दिर बनवा कर अपनी भक्ति का परिचय दिया है। वैसे भी खजुराहों में मैंम, आपकी तरह जितना निर्दोष सौन्दर्य है, वह स्थापत्य की बेजोड़ मिसाल और चंदेलों की शिव, सुंदरम, प्रियता की बेमिसाल बानगी है!" गाइड की ये बातें सारी पर्यटक मंडली मुँह बाए सुन रही थी, और आँखें फाड़-फाड़कर चंदेल राजाओं की कलाप्रियता के नायाब प्रस्तरशिल्प को देख रही थी। मनुष्य जीवन के चारों पुरुषार्थ प्रस्तर प्रतिमाओं में जीवन्त हो अपने निर्माताओं के दार्शनिक विचारों का उद्घोष कर रहे थे।

गाइड आशिकाना भंगिमाओं को आँखों में भर ज्योति को देख रहा था! हैड वार्डेन की चौकस नजर तथा ध्यान इस ओर नहीं था। वे तो इसी में व्यस्त, पस्त थीं कि कहीं कोई लड़की इधर-उधर न हो जाए। या मरे विदेशी यात्री ही न खींच लें। अपने साथ फोटो खिंचवाने। उधर गर्ल्स आपस में कह रहीं थी - "देख, गाइड लाइन मार रहा है ज्योति मैम पर!"

- "तू क्यों जल रही है, तेरे ऊपर नहीं, इसलिए?"

- "ओ S S S यू S S S" कह गाल पर चिकोटी भरी उस लड़की ने जिससे वह कहा गया था।

गाइड बताता चल रहा था-

"मैम, यू नो, विंध्य पर्वत की सबसे मनोरम विंध्य पर्वत श्रृंखलाएँ हैं यह। वैरी ब्यूटीफुल एरिया!"

"बिलकुल आप की तरह" एक लड़की ने गाइड की नकल उतारी, बाकियों में हँसी छा गई। हैड वार्डेन को लड़कियों का यह लहजा नागवार लगा। उन्होंने अपना एकमात्र जुमला, हथियार की तरह दागा - "गर्ल्स, प्लीज मेनटेन डिसिप्लिन।" हँसती खिलखिलाती लड़कियों में से चुप होते-होते कहीं से स्वर मुखरित हुआ - "कैसे पटती होगी हस्बैंड से?" वो बेचारा रात में भी यही सुनता होगा- "प्लीज मेनटेन डिसिप्लिन।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गनीमत थी कि वार्डेन ने नहीं सुना। वे सुन भी लेतीं तो क्या कर लेतीं! ज्यादा से ज्यादा यह कि दो चार तीखी कड़वी बातों के साथ 'मेनटेन डिसिप्लिन' का डोज दे देतीं। लड़कियों को इससे ज्यादा की आशंका नहीं थी। वे आने वाले भविष्य के खुशफहम ख्वाबों में मस्त, जिन्दगी की हर बेनूरी से दूर, निश्चित अल्हड़ यौवन से भरपूर इस सांस्कृतिक यात्रा का आनन्द लूट रही थीं। लड़कियों के इस टूर को दस दिनों में आगरा, झाँसी, खजुराहो, पन्ना, बनारस, सारनाथ और दिल्ली के दर्शनीय स्थलों की सैर सम्पन्न करनी थी।

ज्योति ने अनुभव किया था कि इन दिनों में चुलबुले और स्मार्ट गाइड की खोजी निगाहें, हर कहीं उसे अपनी गिरफ्त में ले ही लेती थीं। चाहे वह ग्रुप में हो या किसी कोने में, या गर्ल्स से घिरी हुई, या कभी होटल के एकांत लॉन में या कक्ष में या हैड वार्डेन के साथ। अनित्य यानि गाइड की ये सरगर्मी उसे अद्‌भुत और रोमांचक लगती थी। अनित्य का आकर्षण उसमें भी जागने लगा था। इस लंबी यात्रा में वह गाइड तो था ही, ड्राइवर भी था। टूर की मिनी बस में ज्योति अधिकतर उसके बराबर वाली सीट पर बैठती थी। हैड वार्डेन की बगल में बैठना ज्योति के लिए त्रासद था, वह उनके उपदेशात्मक इंस्ट्रक्शन्स और लंबे-लंबे खर्राटों से बेहद ऊब जाती थी। वार्डेन को यह कतई गँवारा न था कि ज्योति गर्ल्स के बीच में बैठ उनकी गपशप और चुहलबाजी में शामिल हो गर्ल बन जाए। डिसिप्लिन मेनटेन करने का मामला था! सफर के दौरान जब गर्ल्स आपसी चुहल, गानेबाजी या गपशप में डूबी होतीं, जब वार्डेन खर्राटों में, तब ज्योति और अनित्य बातों में मशरूफ हो जाते!

तरह-तरह की बातें! अपनीं, पराई। गीतों, फिल्मों की। जिन्दगी और समाज की, दुनियाँ जहान की . .. . . अनित्य ने बताया था कि वह इंदौर का है। अभी हाल में एम.बी.ए. किया है। अपनी ट्रेवल एजेंसी है। इंडिया टूर से लेकर वर्ल्ड टूर तक का पैकेज है उसकी एजेन्सी में। यह भी कि गर्ल्स या लेडी पार्टी को वह खुद ऐंटरटेन करता है। अधिकतर और अक्सर। ज्योति ने भी उसे बताया था कि फिलॉस्फी और योगा में रिसर्च के बाद फिलहाल असिस्टेंट वार्डेन है युनिवर्सिटी गर्ल्स हॉस्टल की।

कभी कभी वे आपस में बहुत खुली बातें करते थे। ऐसी ही बातों के बीच अनित्य ने पूछा एक बार - "ज्योति जी, क्या एक ही लड़की का एक समय में कईयों के साथ सैक्स और अफेयर हो सकता है?" वैसे यह मुद्दा एकाध जुमले में निपटने वाला नहीं! एक लंबे समय की तेज वैचारिक बहस की माँग करता है! और हमारे समय की अवधि मैंम के खर्राटों पर टिकी है। न जाने कब हैड मैंम के खरटि 'मेनटेन डिसिप्लिन' का चाबुक बरसा कर हमारी बात ही बंद करवा दें, सो एकाध मिनिट में त्वरित प्रतिक्रिया दें इस पर! उसकी प्रश्नीली बातों पर थोड़ी देर चुप रही ज्योति। फिर खोई-खोई सी नजरों से रास्ते के दोनों तरफ के किनारों पर लगे वृक्षों में फूले अग्निज्वाल जैसे पलाश के सुर्ख लाल फूलों को देखती, बोली "अनित्य मैं दूसरों की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं अपने अनुभव की बात कहती हूँ। तुम शायद एक चावल से पूरी हाँडी का अन्दाज लगा लो, पर मैं अपने अनुभव को सम्पूर्ण नारी मनोविज्ञान का प्रतिनिधि नहीं कह सकती! मेरा सच यही है कि, एक समय में एक से ही अफेयर हो सकता है, अगर चाहत घनी है तो। यह घनापन इतना पवित्र, पावन होता है कि किसी दूसरे से सैक्स या अफेयर की सोच ही नहीं सकता! हाँ घनापन नहीं, तो बात और है। या फिर वफ़ा का सिला अगर जफ़ा से मिलता है, तो बात दीगर है। पर ऐसों के लिए मैं मानती हूँ कि भावुकता एक नियामत है। इस नियामत की इतनी इनायत तो होती ही है कि वक्त का मरहम लगाकर हृदय का बड़े से बड़ा जख्म मिटा देती है। नामो निशां तक नहीं रहने देती! हृदय फिर तारोताजा!''

- 'दूसरा जख्म खाने या वार झेलने को? अनित्य ने कहा।'

- 'जरूरी तो नहीं कि पुराना तजुर्बा अपनी पुनरावृत्ति करे?' ज्योति ने प्रतिप्रश्न किया।

- 'हाँ ये तो है।' धीरे-धीरे बोला अनित्य - ''ज्योति आपने अपनी बात कही! मेरी तो यह है कि सैक्स कईयों के साथ और अफेयर हो ही नहीं पाया! या कोई मिली नहीं ऐसी कि लगे, हाँ, मंजिल यही है।''

- 'लगाव के बिना सैक्स एक पाशविक क्रिया भर है!' ज्योति ने कहा।

- 'मैंने कब इंकार किया है, पर मेरे कहने का यह ढंग है कि नींद और भोजन की तरह यह भी आदिम आवश्यकता है बस! और कुछ नहीं। इसे पूरी करना जरूरत पूरी करना है। जैसे भी हो। 'नींद न देखै, टूटी खाट, भूख न देखै जूठी भात, काम न देखै जात कुजात . .. ..''

यह कहते-कहते अनित्य ने देखा बहुत करीब से ज्योति को! अनित्य की मूक याचना भरी आँखों में तैरते लाल डोरों को देख ज्योति की धड़कनें बढ़ गईं। साँसें तेज हो गईं। कुछ न कह कर वह चुप हो गई। न जाने कितनों से कहा होगा इस गाइड ने यह सब। कितनी आसानी से इसने कह दिया कि 'जैसे भी हो' मात्र जरूरत पूरी करना भर है सैक्स। क्या पुरुष ऐसा ही होता है। भावात्मक रूप से कहीं नहीं बँधने वाला, उससे भी नहीं जिसके तन से गुजरते 'ब्रह्मानन्द सहोदर' को प्राप्त करता है! स्त्री और पुरुष में कितना फर्क है यह। स्त्री! उफ्! कितना बँध जाती है, अगर व्यावसायिक वृत्तिगत विवशता न हो तो! पर उनमें से भी कई ऐसी निकल ही आती हैं, जो एक पुरुष की सरपरस्ती में सारी उम्र निकाल देती हैं। इतिहास भरा पड़ा है ऐसी नज़ीरों से।

उसे याद आया हितेन्द्र! मृत्यु से दो महीने पहले पिता ने अपने ऑफिस में कार्यरत हितेन्द्र से उसका ब्याह कर दिया था। हितेन्द्र तो तरक्की पा गया मुझे पायदान बनाकर! किस तरह उसने साफ कह दिया था कि यही क्या कम है, तुम्हें स्पष्ट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बता कर छोड़ रहा हूँ। तलाक के लिए कहना मत, मेंटीनेंस नहीं दूँगा अपनी कमाई से। तलाक लोगी भी कैसे? क्या सबूत है। कि मैंने तुमसे शादी की है। आर्यसमाज वालों को खुश करके रजिस्टर से वह पन्ना अपने कब्जे में कर जला भी चुका हूँ, जिसमें तुम्हारे बाप ने शादी रजिस्टर करवाई थी। और सुन ले यह भी कान खोल कर, मुझे तुझमें कोई दिलचस्पी नहीं! सुन रही है! मैं जा रहा हूँ! मुझे नफरत है तुझसे, तेरी आवाज तक से। अब कभी मुझसे बात मत करना न दखल देना मेरे जीवन में, वरना वो हाल करूँगा साली तेरा कि तू सोच भी नहीं सकती। ये शब्द नहीं थे। बारूद थी। जिसे दाग कर चलता बना हितेन्द्र। एकदम जड़ हो गई थी ज्योति इस आकस्मिक अनहोनी पर! आज से पहले उसने इतना विकराल रूप नहीं देखा था हितेन्द्र का! वह तो तन-मन से उसकी हो गई थी। उसे समझ ही नहीं आया कि क्यों हितेन्द्र उसे इस तरह से बिना किसी अपराध के छोड़कर जा रहा है। उसने जाते हुए हितेन्द्र के पाँव पकड़ लिए थे। झटके से उसे धक्का देकर, नफरत का नश्तर चुभाकर किस तरह चला गया था। हितेन्द्र! और वह लुटी पिटी सी बदहवास अपनी बर्बादी पर रोती रही, पागलों जैसी हालत हो गई थी, पर नफरत नहीं कर पाई थी हितेन्द्र से। हरदम उसी के ख्यालों में गुम, ठगी सी सोचती थी- तुम्हें मेरी नहीं, मगर मुझे तो तुम्हारी जरूरत है। बहुत ज्यादा है, लौट आओ .. .. पर नहीं लौटा वह। ज्योति का घायल हृदय विषाद में डूब जाता बार-बार। दिल का रेशा-रेशा तड़प उठता सोचकर - ''किसी को अपनी जरूरत न हो तो क्या कीजै . . .. ।'' उसे मेरी जरूरत नहीं है। वह मेरी आवाज तक से घृणा करता है। क्यों? क्यो? मेरा क्या गुनाह है? क्या बेगुनाही मेरे लिए सबसे बड़ा गुनाह है! तन-मन का रिश्ता क्या इतनी आसानी से टूट सकता है .. . . ? तुमने कैसे तोड़ दिया हितेन्द्र? मुझे भी कोई रास्ता बता दो, या अपने जैसी हृदयहीनता की दीक्षा दे दो . .. . । मैं क्यों, क्यों उससे नफरत या घृणा नहीं कर पाई, उसने मेरा परित्याग किया, पर मैं कभी उसको तिरस्कृत नहीं कर सकी। आज भी। हाँ आज तक! इतना अंतरंग हो गई थी। कि द्वैत न रहा! वरना तो हितेन्द्र को वह विवाह से पहले जानती तक नहीं थी। और ब्याह भी कैसा! आज बताया, कल शादी कर दी। पिता की मृत्यु के फौरन बाद हितेन्द्र ने गिरगिटी चोला पहन वैवाहिक जीवन को हमेशा के लिए खत्म कर दिया.. . .. सोचते-सोचते न जाने कब ज्योति की आँख लग गई।

आज उनका टूर खजुराहो से जा रहा था पन्ना। पन्ना, मध्यप्रदेश का हृदयस्थल! अत्यंत सुरम्य। मनोरम पहाड़ियों से घिरा। हीरे की खदानों के लिए विश्वप्रसिद्ध। भव्य ऐतिहासिक मंदिरों की राजधानी। चारों ओर हरी भरी वन सम्पदा। उपत्यकाओं से गिरते झरनों का दर्पण जैसा स्वच्छ चमकीला जल! किरणें बिखेरते घाटियों के गर्भ में गिरते प्रपात, झरने। लड़कियाँ प्रकृति के दिलकश नजारों को अपने कैमरों, मोबाइलों में कैद करने लगीं। घुमावदार पहाड़ी की सँकरी सड़क के एक ओर बस रुकी। अनित्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के संकेत पर सब नीचे उतरे। अनित्य वहाँ स्थित पांडव प्रपात के बारे में अपनी मनमोहक शैली में बता रहा था- "ये पांडव फाल है। युगों पुराना। इसके आगे वह कुछ और कहता कि मोबाइल की रिंगटोन ने उसका ध्यान भंग किया। स्विच ऑन करके उसे कहा- 'हैलो! मुझे तुझसे कोई बात नहीं करनी।' उसने नंबर काट दिया। हाँ तो मैं क्या कह रहा था .. . . यह झरना, पांचाली और पांडवों के अद्भूत प्रेम का अमिट निशान है। पांडवों ने अपनी हृदय साम्राज्ञी द्रौपदी के लिए पहाड़ों के वक्ष से जल निकाला था।" अचानक रिंगटोन ने फिर बाधा दी। मोबाइल निकला खीझकर वह बोला- "बेशर्म कहीं की! मैं अनित्य हूँ। मुझे नित्य मत समझ अपने लिए!" . .. . डिस्कनैक्ट कर मोबाइल जेब में रख लिया - अग्निवर्णा द्रौपदी थी ही ऐसी विलक्षण नीति प्रवीणा और विदुषी कि पांडव उसे बेहद प्रेम करते थे। बेहद सुन्दर थी। कहते कहते उसने ज्योति को देखा, आँखें कह रही थीं- "बिल्कुल आप की तरह, ज्योति मैम!" और ज्योति मुस्कराई हौले से। उसे लगा, जैसे चारों तरफ खुशरंगों के मौसम से घिरी है वह। जब-जब फूल खिले की नायिका का ध्यान हो आया उसे। फिल्म की नायिका नायक से कहानी सुन रही थी- एक था गुल और एक थी बुलबुल .. . . ।वह भी तो अनित्य से कहानी सुन रही है .. . . । मगर अनित्य का इस तरह किसी को डॉटना अपमानित करना उसे ठीक नहीं लगा, न जाने क्यों उसे हितेन्द्र याद आ गया। व्यथित हो उसने अनित्य से कहा- "आपको इस तरह से किसी का अपमान नहीं करना चाहिये था।"

उत्तर में अनित्य ने कहा- ज्योति जी, मैंने किसी का अपमान नहीं किया। आज तक न जाने कितने टूरिस्टों को घुमा चुका हूँ। उन्हीं में से हैं कुछ, बेवकूफ और मूर्ख हैं जो वक्त बेवक्त बेकार की बकवास करती रहती हैं। इन बेशर्म परिंदों को नहीं मालूम बीत गई सो बात गई। तमीज तहज़ीब से बोलना मेरा पेशा, उनको गफलत में डाल देता है। बोलूँगा नहीं तो खाऊँगा क्या? कोई इसी को दिप पे ले ले तो क्या करूँ भई! मैम आप ही बताइये?

आज उनका सफर खत्म हो गया था। बस वापस बरेली आ लगी। गाड़ी से सामान निकालती गर्ल्स ज्योति से कह रही थीं कि हम शार्ट कट से हॉस्टल जायेंगे। मगर शॉर्ट कट की बीहड़ वीरानी का ख्याल आते ही बोल पड़ी हैड वार्डेन- "नहीं, शॉर्ट कट से नहीं, हम मुख्य मार्ग से जायेंगे।"

- "मैम, मुख्य मार्ग में ब्वायज हॉस्टल है! लड़के छेड़ने लगते हैं गर्ल्स को" ज्योति ने लड़कियों की तरफ से कैफियत दी।

- "मुझे तो कोई नहीं छेड़ता" हैड वार्डेन के इतना कहते ही लड़कियाँ हँसी से लोटपोट होने लगीं। इन्हीं में से किसी ने कह ही तो दिया - "दादी, नानी को छेड़ने का साहस किसमें होगा भला .. .. "

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फब्ती सुन हैड वार्डेन को अपनी चूक समझ में आई! पर तीर तो छूट चुका था, वे झेंप कर रह गईं।

मुख्य मार्ग में खुदाई चल रही थी। पापड़ बची हुई जगह घेरे हुए थे यही कारण था कि टूरिस्ट बस गर्ल्स हॉस्टल नहीं जाकर उससे कुछ दूर रुकी थी। एक ओर ''सावधान कार्य प्रगति पर है'' का बोर्ड लगा हुआ था। वार्डेन ने ज्योति को गर्ल्स के साथ जाने का आदेश दिया स्वयं अनित्य के साथ यात्रा खर्च आदि का हिसाब करने के लिए वहीं रुक गई। ज्योति जाते-जाते ठिठक कर रुकी। विदा की इस बेला में वह अनित्य से कुछ कहना चाह रही थी। अनित्य भी यही चाहता था! मगर वार्डेन यह सब क्या समझती? ज्योति को ठिठकी सी देख उन्होंने आँखे तरेर कर कहा- 'ज्योति! पुअर गर्ल - मेनटेन योर डिसिप्लिन।' जाओ, लड़कियों को देखो। पहले अटेंडेंस लेना सबकी, तब उन्हें रूम्स में जाने देना! और हाँ, आज का मीनू बनवा लेना मैस में।'' बेबस सी ज्योति आँखों से ही अनित्य से बहुत कुछ कह सुनकर हॉस्टल चल दीं।

लेटरपैड पर झुकी ज्योति पत्र लिख रही थी।

मेरी पुकार, कलम का हाथ थाम, तुम्हारे नाम की इबारत लिख रही है और लबों से फिसल कर हाथों की उँगलियों पर आते हैं अक्षर तुम्हारे नाम के अनित्य, मैं कैसे कह सकती हूँ, 'मेरे प्रिय' तो सिर्फ अनित्य ही। तुम्हारा पत्र मुझे देने आई थी गायत्री। तुम्हें तो यही मालूम था न कि मैं यूनिवर्सिटी के विवेकानन्द गर्ल्स हॉस्टल बरेली में ही हूँ। हाँ, ऐसा तो है ही। पर यह जून का महीन है। जून में गर्ल्स चली जाती हैं, मैस बंद हो जाता है, तो कुछ दिनों के लिए वार्डेन मुझे छूट दे देती हैं कि मैं गाँव हो आऊँ। और मैं गाँव आ गई हूँ। अब! गायत्री मेरे गाँव की ही है। हॉस्टल में आया का काम करती है।

अनित्य तुम्हारा शिकवा वाजिव है कि तुम्हारा नम्बर होते हुए भी, मैंने तुम्हे फोन नहीं किया। कैसे करती? मैंने कई बार देखा था तुम्हे फोन सुनते, फोन करने वालों को हिकारत से डाँटते! तुमने तो मेरे मोबाइल में अपना नम्बर फीड भी कर दिया था। पर, मैं तुम्हे कैसे फोन करती। जितना तुम्हारे बारे में सोचती, उलझ कर रह जाती। ये सच है, तुमसे छुपा नहीं सकती कि समय की कलम ने मेरे ख्वाबों, ख्यालों में, रात और दिन में, पल-छिन और बीतती घड़ियों में सिर्फ और सिर्फ तुम्हारा ही नाम लिख दिया और मैं तो सोते जागते तुम्हें तुम्हारी बातों में दुहराती रही। कह सकते हो कि अनित्यमय हो गई। और यही दुहराव मेरे लिए शंकाओं, संदेहों का प्रबल विषधर भी साबित हुआ। जिस शिद्दत से तुम्हारी याद आती, उतनी ही बेचैनी से तुमसे बातें करने के लिए तुम्हारा नम्बर ढूँढ़ती, मगर तत्क्षण ही मोबाइल बंद कर देती। क्या पता, तुम्हारा वह हँसना बोलना तुम्हारी प्रोफेशनल मजबूरी हो, जैसा तुमने कई बार स्वीकार किया है कि तुम्हारी शहद मिश्री की सी बातें मात्र पेशागत शिष्टचार भर हैं, तुम्हारी यह स्वीकारोक्ति बराबर मेरी हिम्मत तोड़ती रही। मुझे यह भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगा कि अब तक तो तुम मुझे भूलभाल कर किसी अन्य ट्रिप को लेकर निकल पड़े होगे कहीं और। कहीं ऐसा न हो कि मैं तुम्हे फोन करूँ, और तुम बार-बार काट दो, या बेरुखी और तिरस्कार भरी बातें करो, जैसे तब तुमने इन लड़कियों से की थी। मेरा सर्वांग काँप उठा यही सब सोचकर। मुझे अपने मोबाइल से ही डर लगने लगा, उसे देखती, तो हाथ रोकते-रोकते भी तुम्हारा नम्बर डायल करने लगते, मैं तंग आ गई। हार कर मैंने तुम्हारा नम्बर डिलीट कर दिया, जब नम्बर ही नहीं होगा, तो बात कैसे कर पाऊँगी! मोबाइल से तो डिलीट कर दिया काश दिल से भी डिलीट कर सकती तुम्हें? या तुम्हारे घर के नम्बर को, जो मंत्र की तरह मुझे अनायास याद रह गया है। इसी डर से कि कहीं उसी पर आपको फोन न कर बैठूँ, मैंने मोबाइल ही हटा दिया, विश्वास कीजिए कि उसे हॉस्टल के कमरे में ही छोड़ आई हूँ।

आप क्या समझते हैं? क्या इतना कर देने के बाद भी मैं बेचैन नहीं थी? थी, बहुत ज्यादा थी? रो-रो कर मेरे कितने दिन बीते, आपको क्या पता? मेरे आँसुओं के गवाह वे राहें, चौराहे, बाजार हैं, जहाँ काम काज मुझे बरबस ले जाता था। घर की कुर्सी, मेज, चौखट, दीवारें, पलंग बिस्तर हैं, जो आपकी यादों के नश्तर से लहुलुहान हो मेरे साथ-साथ रोये। बार-बार यही प्रश्न कि क्या इस जीवन में आपको फिर से देख पाऊँगी? क्या तुम्हारी आवाज सुनाई देगी अब कभी? मेरे अधूरे टूटे स्वप्न, क्या कभी फिर से मेरे जीवन में साकार हो पाएँगे? अभी-अभी मिले तुम्हारे इस पत्र ने मुझे जिन्दगी जीने की राह दिखा दी। मैं तुमसे पहली और आखिर बार पूछती हूँ कि क्या मेरे जीवन में चिरंतन सहचर बन सकोगे? इस आखिरी प्रश्न का उत्तर अवश्य देना। मेरी जिन्दगी या अदृश्य मौत जैसा मंजर अब तुम्हारे हाथ है!

अनित्य, तुम्हे तो बता चुकी थी कि कैसे तन-मन से टूट चुकी थी एक बार! अब उसकी पुनरावृत्ति नहीं चाहती। कतई नहीं। पीड़ा की आग में तिल-तिल जलना नहीं चाहती, न झूठे सब्जबाग देखना चाहती हूँ, तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ, मुझे स्पष्ट बता देना!

किसी की होकर भी, किसी की नहीं . . . .

- ज्योति

आज अनित्य को ज्योति का पत्र मिला या चाहतों का खजाना? उसके छोटे से ऑफिस में रौनक सी आ गई कर्मचारियों के चेहरों पर। आती भी क्यों न? अपने हँसते खेलते खिलंदड़े बॉस को आज अर्से के बाद वे पुराने खुशमिजाज खुशरंग में देख रहे थे।

निर्मित कह रहा था- ''गजब हो गया यार, डाक देखकर बॉस उछल पड़े थे। डाकिये को पाँच सौ का नोट देते मैंने खुद देखा! मुझसे कहने लगे वर्ल्ड टूर का कांट्रेक्ट मिला है।''

''अरे नहीं यार, मुझसे तो यह कहा कि एजेन्सी को बैस्ट टूरिज्म का एवार्ड मिल गया है।'' शेखर ने कौतुहल में आकर कहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

- ''अमां, यह कुछ नहीं'' किसी ने कहा।

- ''तो तुम्ही बता दो? दूर की कौड़ी?''

- ''हाँ बता रहा हूँ, समझ लो कि मालिक की जिन्दगी में बहारों का मौसम आ गया है।'' उन्हें अपनी मंजिले मकसूद मिल गई है।

- ''हें ऽ ऽ ऽ ...... कहकर सब हर्ष मिश्रित आश्चर्य में मगन हो गए।''

अनमनी मुरझाई सी ज्योति ने उदास हाथों से द्वारे की साँकल खोली! हैरान हो गई! यह क्या हो गया है उसे! अब तक खिड़की दरवाजों में अनित्य के आकार को देखते देखते क्या अब हर पुरुष में ही अनित्य दिखने लगा है! अभी कल ही तो, बुआ के देवर आए थे, और वह उन्हें अनित्य समझ उमंग में आ कैसी हुलस कर बोली थी- ''अरे आप!'' जब उन्होंने भी हँस कर कहा कि भई दरवाजे पर ही खड़ी रहोगी, या भीतर भी आने दोगी! तब उसे भान हुआ था वस्तुस्थिति का, यह उसका अनित्य नहीं कोई और है! और आज फिर? उसका हाथ माथे पर चला गया। मुख से धीमी सी आवाज निकली- हे भगवान! और वह परे हट गई। आगंतुक कक्ष के बीचों बीच पड़ी खटिया पर आराम से बैठ गया। फिर उसने पानी माँगा, प्यासा है शायद। वह भीतर गई। पानी का गिलास देकर, दूसरे हाथ से अपनी आँखों के पानी को पोंछने लगी। आजकल वजह बेवजह उसे रुलाई आ जाती है। बात यहीं तक नहीं थी, आगंतुक ने जो कुछ कहा वह ज्योति को इस रूप में सुनाई दिया-

''मैं तुम्हें लेने आया हूँ ज्योति! देखो में अनित्य नहीं तुम्हारी जिन्दगी का नित्य संग साथ हूँ।''

''क्या कहा आपने'' ज्योति का अविश्वास बोला। आगंतुक ने फिर से अपने कहे की पुनरावृत्ति की। ज्योति की हालत अजब हो गई। नहीं, यह स्वप्न नहीं। भ्रम नहीं। झूठ नहीं। कोई और नहीं ..... ये तो ..... ये तो ..... साँस-साँस में धड़कता अनित्य है। ज्योति ने आँखें मल डालीं। गाल को चिकोट लिया। हाँ हकीकत है। यह तो अनित्य ही है, मगर ऐसा? आश्चर्य में पड़ गई वह - अनित्य क्या वही है? वह तो ऐसा नहीं था। बढ़ी हुई दाढ़ी, बढ़े बाल! खोई-खोई सूखी आँखें! कमजोर काया। ये कैसा हो गया अनित्य, क्या हो गया इसे? वो कमल की सी खिली रंगत, दिन की उजास सी कांति क्या हुई? दोनों बोल नहीं रहे थे। किन्तु उन्हें ऐसा लगा कि उनका रोम-रोम बोल रहा था, रोम-रोम सुन रहा था। आँखों में बरसात। जाने कितनी देर तक उनका मौन मुखर संवाद चलता रहा!

- ''कौन है बिटिया'' अजिया की आवाज से दोनों को चेत हुआ।

- ''पाहुना आए हैं अजिया'' ज्योति ने अपनी वृद्ध दादी से कहा। फिर तो ज्योति जैसे ज्योति न रही। होंस-फूल इतनी कि गली आँगन न समाए। अनित्य के लिय झटपट चाय बना कर दौड़ी गई गाँव में। कछुवारे से ताजी सब्जियाँ ले आई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अरौल वाली काकी के यहाँ से दही लिया। रुच कर रसोई की। नेहमान से अनित्य को खिलाया, खुद भी उसी के साथ भोजन किया! उसने अनित्य के लिए खटिया पर नया चद्दर बिछाया। नरम तकियाँ रखा। थका हारा अनित्य भोजनोपरांत जो खटिया पर लेटा तो शाम को ही उठा। वे इस संझा बेरिया में अजिया से अनुमति ले पहाड़िया पर स्थित महामाई की मढ़िया की ओर चल पड़े।

पहाड़ी पगडंडी दोनों तरफ से चीड़, देवदारु, अमलतास, सागौन, पलाश आदि वृक्षों से घिरी थी। सूखे पत्तों से सारा रास्ता आच्छादित था। शांत जंगल में कभी कोयल कभी पिड़कुलिया, कठफोडवा की आवाजें रागिनी सी छेड़ रही थीं। बात अनित्य ने शुरु की- ''ज्योति कल तुम्हारा पत्र मिला था। उसका प्रतिउत्तर मैं तुम्हारे सामने। अगर पहल मैंने न की होती तो शायद तुमसे कभी न मिल पाता! मेरी दुर्दशा और बावलापन देखकर माँ ने ही कहा था, बेटा जिसके कारण तू बावला हो रहा है, क्या पता कि उसे तेरी यह हालत मालूम ही न हो! एक बार ही सही, पर औपचारिक पत्र ही डालकर देख ले! शायद उससे तेरा नम्बर खो गया हो, या उसका मोबाइल ही गुम हो गया हो। अपना पता लिख देना, मुझे विश्वास है कि वह जवाब जरूर देगी तुझे।'' तब डरते-डरते मैंने तुम्हें यह चार लाइनों का औपचारिक सा पत्र लिखा था।

ज्योति तुमने तो मेरे पत्र के उत्तर में अपनी एक-एक बात लिख दी! और मैं? कितना बेहाल रहा? तुम्हें जब भी फोन किया, हमेशा स्विच ऑफ तुम्हारा। तुम क्या जानो कि मेरा क्या हाल हो गया। रोज तुम्हारा नम्बर डॉयल करता रहा, निराश होता गया। माँ पूजा का दीपक जलाती, उसकी जोत से तुम्हारी याद आने लगती। विश्वास कर सको तो करो ज्योति, कि उस गाड़ी पर बैठना मैंने छोड़ दिया, जिस पर तुम्हारी ट्रिप लेकर गया था। शुरु में एकाध बार जब उसकी स्टेयरिंग पर बैठा, ऐसा लगा तुम बगल में हो, न चाहते बार-बार देखा, अपनी इस हालत पे जार-जार रोता, यह सोचे बिना कि राहगीर देख रहे होंगे। और तो और न्यूज पेपर में प्रादेशिक खबरों में बरेली पर मेरा ध्यान अटक जाता था। जानता था कि अखबार में तुम कहीं नहीं हो, कहीं भी नहीं, मगर फिर भी। मेरी भूख, प्यास, नींद सब मुझसे रूठ गये। बनने सँवरने से दिलचस्पी चली गई। तुम देख ही रही हो मेरा रूप! ज्योति जो एकांत कभी अच्छा नहीं लगा, वही मेरा साथी बन गया। ऑफिस भी भीड़ भाड़ वाले सीधे रास्ते से न जाकर उस एकांत लम्बे रास्ते से जाता हूँ, जिसके दोनों तरफ जंगल है, जानती हो क्यों, क्योंकि ज्योति उन रास्तों में मुझे आभास होता है कि मैं तुम्हारे साथ ट्रिप पर हूँ। तुम्हे याद होगा ज्योति, एक बार मैं गुनगुना रहा था वह गीत- कैसे बताएँ क्यूँ तुझको चाहें . . . . और तुमने मुस्करा कर कहा था कि ये गीत मुझे बहुत अच्छा लगता है। ये गीत मुझे नहीं आता था। देखो मैंने पूरा सीख लिया है ढूँढ़ खोज कर। बस इसलिए कि मेरी ज्योति को ये अच्छा लगता है। आओ हम कहीं बैठें। मैं तुम्हे गीत सुनाऊँगा, तुम्हारे लिए। वे पास ही पथरीली कंकरीट पर वृक्षों की टेक लगाकर बैठ गए। अनित्य गाने लगा-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''कैसे बताएँ, क्यों चाहें, यारा बता न पाएँ

बातें दिलों की, देखो जो बाकी, आँखे तुम्हें समझाएँ

तू जाने न, तू जाने न . . . .''

गाते-गाते आँखों में आँसू आ गए, भावावेश से अनित्य का कमजोर शरीर थरथरा उठा। ज्योति ने साड़ी के छोर से उसकी आँखें पोंछी। धीमे से हाथ पकड़कर उठाया। वे महामाई की मढ़िया की तरफ चल पड़े। उसी समय पूजा के थाल से सुर्ख गुलाब छिटककर अनित्य के कदमों में जा गिरा। ज्योति को लगा फूल देवता पर चढ़ गया। वे मंदिर पहुँचे। हवा तेज हो गई थी। ज्योति ने महामाई सिंहवाहिनी के उज्ज्वल मस्तक पर रोली, कुमकुम, अक्षत चढ़ाए जासौन का लाल खिला फूल चढ़ाया। पान बतासा अरपन किया। धूप दीप जलाने के लिए माचिस की तीली सुलगाई, हवा तेज थी, अनित्य ने हथेलियों से ओट कर दी और दीपजोप प्रज्ज्वलित हो उठी। मंदिर जगमगा गया। जीवनपथ के सहयात्रियों ने एक साथ माता का आशीर्वाद लिया, और चल पड़े एक दूसरे का हाथ थाम एक नए सफर के लिए।

❑ 128/387, वाई-एन ब्लाक

किदवई नगर, कानपुर (उ.प्र.)

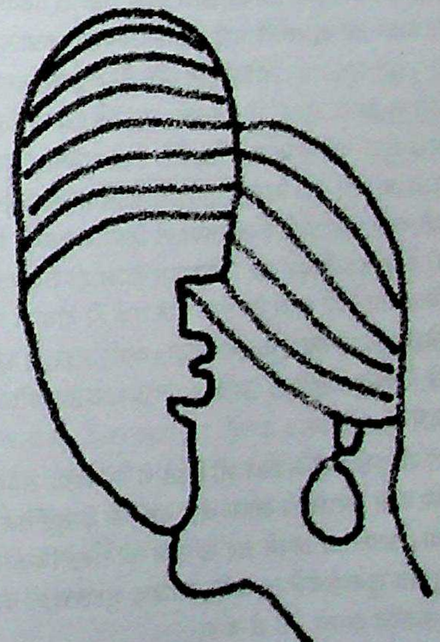

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दूसरा सूरज

शीरीं नियाजी

जमाने भर के आफताब यानी सूरज को न जाने किसकी बुरी नजर खा गई कि दुनिया भर को रोशनी देने वाला अँधेरी कोठरी में सिमट कर रह गया।

अम्माँ - बाबा ने तो उसका नाम आफ़ताब आलम बड़े उत्साह से रखा था कि उनका बेटा बड़ा होकर सूरज की तरह चमकेगा, पर हालात ने इस सूरज से उसकी रोशनी छीन ली। और बारह-तेरह बरस की उम्र में ही उसे एक टार्च बनाने वाली कम्पनी में नौकरी करनी पड़ी। बाबा के वह सपने जो उन्होंने अपने बेटे को लेकर देखे थे, टूट गए। इतने बरस बाद एक बेटा हुआ भी तो उससे जुड़े सारे अरमान ढह गए। क्योंकि बाबा के पैर व हाथ दोनों उनका साथ छोड़ चुके थे। ठेकेदार के कुकर्मों की सजा आफताब के बाबा को भुगतनी पड़ी। और आफताब आलम को एक मजदूर बनना पड़ा। उसकी पढ़ाई छूट गई। लेकिन वह एक बेहद ईमानदार बच्चा था और उसे उम्मीद थी कि कभी न कभी उसके दिन जरूर पलटेंगे। बाबा के अच्छे होते ही वह अपनी पढ़ाई दोबारा शुरु कर सकेगा और वह इसी उम्मीद पर अपना काम बड़ी लगन से करता चला जा रहा था। उसका काम था टार्च के रिफलेकटरों को फैक्ट्री से लेकर पालिश करने वाले कारखाने तक लाना-ले जाना। उसकी फैक्ट्री से कारखाना काफी दूरी पर था। और इतनी दूर का सफर वह पैदल ही तय करता था। वह सुबह सात बजे घर से निकलता और शाम के सात बजे तक ही दोबारा घर पहुँच पाता। उसे एक दिन में कई दिशाओं का सफर करना पड़ता। कभी उत्तर से दक्षिण तो कभी पूरब से पश्चिम। घर से फैक्ट्री, फैक्ट्री से पालिश का कारखाना और कारखाने से फिर फैक्ट्री, उसके बाद घर।

उसके रास्ते में कई ऐसे मकान भी पड़ते थे जो बेहद संवेदनशील मुहल्ले थे। छोटी-छोटी बातों पर दंगा फसाद हो जाना जैसे वहाँ का दस्तूर बन चुका था। उस दिन भी ऐसा ही हुआ था। आफताब अपने घर से रोज की तरह निकलने वाला ही था कि मुहल्ले में हल्ला-गुल्ला सुनाई देने लगा कि आजाद मुहल्ला में दंगा हो गया। अम्माँ का मन डर गया। उन्होंने अपने बेटे से कहा-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''अफ्फू बेटा आज तू बाहर न जा।'' लेकिन आफताब ने अम्मा को मना लिया ये कहकर कि - अगर वह फैक्ट्री न गया तो फैक्ट्री का बड़ा नुकसान हो जाएगा। बहुत दिनों बाद अच्छा आर्डर मिला है और आज शाम तक ही डिलीवरी दे देनी है।

बेटे की ईमानदारी देखकर अम्माँ का मन पुलकित हो उठा। कितना अच्छा है मेरा बच्चा। सौ दुख सह कर भी मालिकों का नुकसान होने देना नहीं चाहता। ऊपर वाला इसकी हिफाजत करे और वह दिन जल्द से जल्द आ जाए जब उसके बाबा ठीक हो जाएँ। और मेरा बच्चा अपनी पढ़ाई फिर से शुरु कर सके।

आफ़ताब अपनी अम्माँ को समझा-बुझा के घर से बाहर तो आ गया था लेकिन बाहर आने पर उसे पता चला कि स्थिति सचमुच काफी गंभीर है। आज़ाद मुहल्ले के एक गुंडे ने अपने पडौसी को छुरा मार दिया था। जिसे लेकर आसपास के तमाम इलाकों में गर्मा-गर्मी थी। आफ़ताब अभी हालात पर विचार कर ही रहा था कि एक तरफ से एक रेला आया और उसे धकेलता हुआ आगे निकल गया। देखते ही देखते कर्फ्यू लग गया। पुलिस कुछ गुंडों को गिरफ्तार करने में कामयाबी हासिल कर सकी। कुछ उसके हाथ से निकल गए।

आफताब एक अजीब से चक्रव्यूह में फँस गया था। वह इस समय जिस इलाके में था, वह इलाका उसकी फैक्ट्री से काफी दूर था। और कर्फ्यू की हालत में उसका वहाँ से निकल कर अपने घर तक पहुँचना भी मुश्किल था। दूर-दूर तक सन्नाटे की चादर तनी हुई थी। परिन्दे भी अपने-अपने घोंसलों में जा चुके थे। हवा खामोश थी। पीपल के पत्तों ने अपना नृत्य बंद कर दिया था। जमीन आसमान, पंछी और पेड़ सब चुप थे।

आफताब सामने वाले घने पीपल के पेड़ के नीचे बने चबूतरे पर बैठ गया। इधर-उधर देखते-देखते उसकी नजर पीपल के खोखे में जाकर उलझ गई जहाँ देवी माँ की सुन्दर सी मूर्ति विराजमान थी। उसके पास सिन्दूर के छीटें बिखरे हुए थे और पेड़ के तने पर गोलाई की शक्ल में मन्नत के धागे बँधे हुए थे। आफताब डर कर खडा हो गया था। उसकी समझ में नही आ रहा था कि वह क्या करे। अभी वह इधर-उधर देखकर अपने लिए पनाहगाह तलाश कर ही रहा था कि उसे लगा कि कोई उसे पुकार रहा है।

चंद ही लम्हों में उसके सामने एक मासूम सा लड़का आकर खड़ा हो गया। उसकी उम्र आफताब से भी कम थी। वह उससे साल दो साल छोटा रहा होगा। उसका रंग गोरा था और माथे पर एक नन्हा सा तिलक चमक रहा था। उसे सामने देख कर आफताब की घबराहट दोगुनी हो गई थी। वह दो कदम और पीछे हट गया। उसे उस तरह पीछे खिसकते देख कर वह बच्चा जरा और आगे बढ़ गया और धीरे से बोला - ''डरो मत भैया। मेरे साथ मेरे घर चलो।''

''लेकिन तुम। तुम तो ... . आफताब की आवाज उसके गले में ही दब कर रह गई।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मैं तुम्हें नहीं जानता। हमारी पहले से कोई जान-पहचान नहीं। इससे क्या होता है। मेरे दादा का नाम जरनैल सिंह है और वह बहुत गुस्से वाले हैं। उससे भी कुछ नहीं होगा। क्योंकि मैं तुम्हे अपने कमरे में छुपा कर रखूँगा। किसी को पता नहीं चलेगा।"

जरनैल सिंह का नाम सुनते ही आफताब सर से पाँव तक काँप गया। क्योंकि जरनैल सिंह का नाम सुनते ही सारा शहर काँप जाता था। पूरे शहर में जरनैल सिंह का दबदबा था। हर बड़े मामले में जरनैल सिंह का नाम सबसे ऊपर हुआ करता था। आफताब को लगा कि वह अपने घर अब कभी नहीं पहुँच पाएगा।

उसी वक्त कहीं दूर से किसी के भारी कदमों की आवाज सुनाई दी। और सामने वाला बच्चा उसे घसीटता हुआ एक मकान के पिछले दरवाजे की तरफ भाग निकला।

पिछले दरवाजे पर कोई नहीं था। इसलिए दोनों बच्चे सीधे एक कमरे में जाकर घुस गए।

ठीक उसी उक्त बाहर से एक भारी आवाज आई-

"अंशू"

"दादा जी आ रहे है। तुम इस पलंग के नीचे छुप जाओ।"

पलंग के नीचे छिपे आफताब के सामने अब एक भारी भरकम वजूद खडा था। लम्बा कद, भारी बदन। घनी और लंबी मूँछें। गले में जनेऊ और माथे पर लंबा सा तिलक।

आफताब के माथे पर पसीना छलक आया था। और वह अपनी साँसे रोक उन्हें नीचे से ही देख रहा था।

"अंशु तुम कहीं गए थे।"

"नहीं तो दादा जी।"

"झूठ बोलते हो। जरनैल सिंह की गरज से पूरा कमरा काँप उठा था।

"दादा जी . . . . . वह वह मैं तो . . ..

"क्यों गए थे बाहर मैंने तुम्हें अपनी आँखों से देखा था बाहर जाते। तुम्हें झूठ बोलते शर्म नहीं आई।"

"गलती हो गई दादा जी। मेरा मन नहीं लग रहा था। मेरे सारे दोस्त अपने अपने घरों में . .. . . ."

"इसलिये एक नया दोस्त ढूँढ लाए।"

"जी . . .. क्या दोस्त, नहीं तो . . . . ."

अंशू भी अब पसीने से नहा गया था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''फिर झूठ बोले तुम''

अंशू रो पड़ा। जरनैल सिंह फिर गरजे - ''चोरी और ऊपर से सीनाजोरी। एक लड़के बाहर निकलो।''

अब आफताब के सामने कोई चारा न रहा। वह पलंग के नीचे से निकल कर उसके सामने सर झुका के खड़ा हो गया। उसके होठ काँपे-

''दादा जी. . . . . . अंशू को कुछ न कहिए। कुसूर मेरा है।''

''हूँ .. . . । वह गुर्राए। कहाँ रहते हो।''

''जी .. .. मैं जामिया नगर. . . . ''

''नाम-''

''आफताब आलम''

''हूँ– उनकी आँखे जैसे आग उगलने लगीं।''

''मुसलमान होकर इस मुहल्ले में आने की हिम्मत कैसे की?''

''मैं जानबूझ कर नहीं आया दादा जी। मैं तो एक रेले की लपेट में .. . .''

''तूने ये बहुत बुरा किया अंशू। इसे अपने घर ले आया। खैर अब तो ये हमारे घर आ ही गया है। इसलिए इसे रात गुजार लेने दे। लेकिन खबरदार जो इसे कुछ खिलाया पिलाया। अगर ऐसा हुआ तो तुझे बहुत मारूँगा।''

जरनैल सिंह गुस्से से पाँव पटकते बाहर निकल गए। अंशू ने आँसू भरी आँखों से आफताब की तरफ देखा। आफताब ने आगे बढ़ कर अपने कुरते के दामन से अंशू के आँसू पोंछ दिए।

लगभग आधी रात बीत गई होगी जब अंशू दबे पाँव अपने कमरे से बाहर गया होगा। जब वह वापस आया तो उसके कुरते के नीचे एक प्लेट छिपी हुई थी। अंदर उसने कमरे का दरवाजा बंद किया। इधर उधर देखा और फिर धीरे से आफताब का कंधा हिलाया। दिन भर का थका और भूखा आफताब जो अभी उनींदा ही था चौंक गया।

''भैया उठो, कुछ खा लो।''

''लेकिन अंशू .. . तुम। तुम ख्वाह-म-ख्वाह अपने को मुसीबत में क्यों डाल रहे हों?'' अगर दादा जी को पता चल गया तो?

''दादा जी सो चुके है। घर भर सो चुका है। तुम भूखे हो, तुमको नींद कैसे आएगी भला।''

''नहीं अंशू। ये खाना वापस ले जाकर वहीं रख दो। आफताब ने कहा।''

''मैं ये खाना वापस नहीं ले जाऊँगा। तुम्हें मेरी कसम तुम ये खाना खा लो। किसी को भी पता नहीं चलेगा।''

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकिन अंशू को पता नहीं था कि दो आँखें दरवाजे की आड़ से उन्हें लगातार घूर रही हैं।

आफताब ने जैसे ही पहला कौर मुँह में रखा, वह आँखे वहाँ से सरक गईं। अब उन आँखों में संतोष का भाव था। आफताब भूखा रह जाता तो शायद वह आँखें भी सो नहीं पातीं।

सुबह सवेरे ही दादा जी ने अंशू को बुला भेजा। अंशू आकर उनके सामने मुजरिमों की तरह खड़ा हो गया।

''अब क्या इरादा है? उन्होंने पूछा तो अंशू के होंठ सिर्फ काँप कर रह गए।''

''देखो जितनी जल्दी हो सके, उसे यहाँ से चलता करो।''

''जी दादा जी।''

''जी दादा जी क्या, उसे बुलाओ यहाँ।''

''वह यहीं बाहर . . . .. ''

''ओह .. . . . वह फिर गुर्राए।'' आफताब आलम .. . . .

आफताब उसके सामने आ गया, तो वह बोले-

''रात गुजर चुकी है। एक घंटे के लिए कर्फ्यू हटा है। जितनी जल्दी हो सके भाग जाओ।''

''जी .. . . . आफताब धीरे से बोला।''

''जी.. . . . . क्या। निकल जाओ हमारे घर से। नहीं तो .. . . . मैं तुम्हें मार डालूँगा।''

''जा रहा हूँ दादा जी। कहते हुए आफताब ने ज्यों ही दरवाजे की तरफ कदम बढ़ाया, उसे एक कड़कदार आवाज सुनाई दी।''

''रूको -''

आफताब ठिठक गया। पीछे पलट कर देखा तो जरनैल सिंह उसे गुस्से भरी निगाहों से घूर रहे थे।

''जाओगे कैसे?''

''पैदल और कैसे।''

''एक घंटे में पैदल चल कर अपने घर पहुँच जाओगे।''

''कोशिश करूँगा तेज चलने की।''

''बड़े तीसमार खाँ बनते हो। अंशू इसे साईकिल दे दो।''

जी . . . . अंशू हक्का-बक्का होकर उनका मुँह ताकने लगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

''तुमने सुना नहीं . . . . मैंने क्या कहा। इसे रवि की साईकिल दे दो।''

''जी अच्छा- अंशू भागत हुआ अंदर चला गया।''

''लो ये साईकिल और चुपचाप भाग निकलो। जरनैल सिंह फिर गुर्राए।''

''लेकिन इसे मैं वापस कैसे . . . . '' आफताब की आवाज उसके गले में ही अटक कर रह गई।

''मैंने जो कहा, वह करो। वह फिर गुर्राए।'' मैंने तुम्हे वापसी के लिये नहीं कहा था।

आफताब की समझ में कुछ नहीं आया। वह साईकिल पर चढ़ा और तेजी से साईकिल दौड़ा दी। उसके अंदर और कुछ कहने की हिम्मत बाकी नहीं रही थी।

अपने दरवाजे पर खड़े जरनैल सिंह ने उसकी तरफ देखा और न जाने क्यों धोती के कौने से अपनी आँखें पोंछने लगे-

अंशू उनका मुँह ताक रहा था। लेकिन उनकी नजरें जाते हुए आफताब पर थीं।

''वह आफताब नहीं मेरा रवि है। मेरा पोता रवि- वह अपने आप बड़बड़ाए।''

''ए भगवन, तू उसकी रक्षा करना। अब इस रवि को कोई फ़साद न निगले। .. . . कहते-कहते वह फूट-फूट कर रो दिए।''

❑ टीचर्स कॉलोनी, रीवर साइड, भुरकुन्डा - 829135
जिला : रामगढ़, झारखण्ड, मोबा. 09234033364

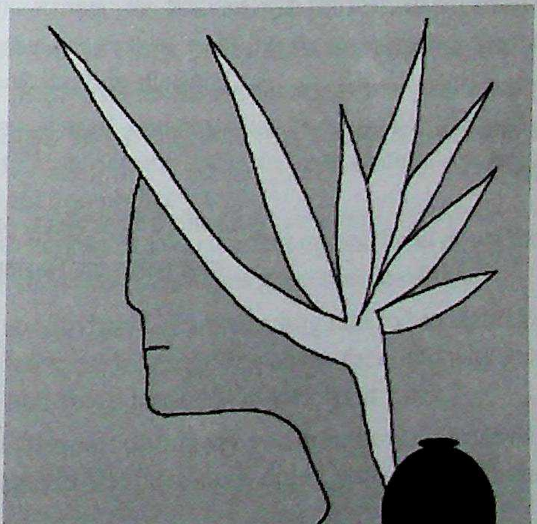

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

‖ लघुकथा ‖

छुट्टना

कृष्ण कुमार यादव 'कनक'

बड़े कष्ट सहे थे, पिछले कुछ दिनों पहले हाथों पर लगाने तक को भी तेल नसीब न था, सब्जी में तो प्रश्न ही नहीं था। तब छुट्टन को एक आवारा घूमती गाय मिली थी। यूँ तो उसको खिलाने के लिए चारा भी न था किन्तु गाय गर्भवती थी, इसीलिए जंगली घास और किसी के खेत से छुपकर कुछ घास की व्यवस्था कर उसे अपने खूँटे पर बाँध लिया था।

गाय ने बछड़ा और दूध दिया तो दिन बदल गये। बड़े बेटे ने पहलवानी में मैदान मारा तो दूसरा फौज में भर्ती हो गया और फिर धन तो मानों बरसने लगा था, छुट्टन को लोग अब, बड़े अदब से छोटे लाल कहने लगे, किन्तु गाय अब बूढ़ी हो चली थी। शरीर जर्जर हो गया था। छोटे लाल को अब वह बोझ लगने लगी थी, और इसी दौरान पड़ौसी अपने मवेशी पेंठ से बेचने जा रहा था, उसी की गाड़ी में गाय को जबरन बिठाकर पेंठ में बेचने आ गया। गाय की आँखें भर आयीं। वह उसे निर्मोही की तरह छोड़कर चलता बना। किन्तु गाय छुट्टन को उस बेटे की तरह देखती रही, जो अपने माता-पिता को अनाथाश्रम में छोड़कर चला आता है और फिर उसकी तरफ मुड़कर भी नहीं देखता।

❑ गाँव व पोस्ट गुँदाऊ ठार, मुरली नगर
थाना लाइन पार फिरोजाबाद - 283203

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

Tormented Petals

(*A Short novel——4th instalment*)

• Prem Krishna Sharma

Vikram bhai, you have been working with labourers for the past sixty years or so. You have been associated with the white collared, blue collared, dirty collared, collarless and every other collar in between. You have worked with them and led their struggles. Having spent all your effort and energy over this extensive period of time, what it is that you have achieved? I am not asking you to account for what you have lost but tell me what have you helped them to achieve? No, I think when the question is framed this way it may sting. Let me put it differently – what have they achieved?"

"Well Shivhari ji, why not ask what I have lost?"

"Because then you are likely to rattle out a long list of what you have lost. In the process of narrating your sacrifice, you may even pat your own back in appreciation."

"That is true. I and my friends have lost much in this life of struggles but if we pat our backs in appreciation – where is the harm and why should you object?"

"Great! You want to do the feet up and head down exercise once again! I think the whole world has gone upsides down!"

"Why so Shivhari ji, I am standing ram rod straight! I don't suffer from vertigo leave aside hair falling on my face, and why just physically - I am stable and sharp mentally as well as at work."

"That is the part of tragedy you aren't even aware of. When you marched along with the have-nots, didn't you dream of achieving your ends?"

"Certainly and it continues to be the chief driving force."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"No, that could not have been the initial impetus. That impetus was born of madness characterised by the phrase 'we have nothing to lose and the whole world to win'. But now it seems as if you have much to lose. Hey, but why am I using 'you', when I should have said 'I'."

"Papa, please eat. There is plenty of time left for you to 'lose'. Vikram Uncle please join in."

"When did you come in dear? Your father's flowing expositions are so spell binding that one tends to forget the surroundings. I will accept your offer today because by being formal I am likely to lose much more."

"Here, this is a humble spread. Today you will have to forgo the elaborate and delicious meal served on your table."

"Don't embarrass me. As far as I am concerned, no fare can match the majesty of this. So Shivhari ji, please elaborate on your thesis."

"I had also set out to conquer the world. But the minute I acquired an inch – the desire to keep it safe rose in my heart. I told myself that I must make every effort to keep it safe first and only then will I set out to win the next inch. I spent all my energy in its safe keeping but it kept sliding out of my hand."

"How does that matter. Even this is a part of the struggle."

"That may be so but instead of being aggressive and pushy, I became defensive. Gradually I started adopting all the means against which I had previously stood. Instead of forging ahead, I lost out a centimetre or two from what I possessed. My misfortune is that I can't even take pride in what I have lost."

"The war is far from over Shivhari ji. Sometimes one has to take a few steps back before one can forge ahead."

"It is not just a question of waging a war, it is a question of finding the raison d'être and direction of the struggle. When I look around I don't find the people with whom and for whom I had set out to wage this war."

"Papa, why did this happen?"

"Perhaps because we don't have your vision. Your generation has a much clearer vision."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"Shivhari ji I feel a little lost. I am afraid I don't quite understand what you are trying to say."

"These youngsters are unafraid to lose. They know that whatever comes their way must be consigned to the flames of battle. If you set out to conquer the world, you should possess nothing that can be lost until you have conquered the entire world and also thereafter."

"Even after we have won the battle?"

"Yes, even after we have won the battle. That is the beauty of it. And unless you do so- you can't retain your victory. I think this is what Vyoma means when she speaks about the social interpretation of the 'Song Celestial' or Gita. This is why I maintain that the new generation has a clearer vision"

"Is it possible for people to retain this wisdom till final victory has been achieved and also thereafter Papa? What will happen if they don't? What is your opinion on this uncle?"

"I would say that some Trotsky will again be declared to be a traitor!"

XXX

"I guess you are aware Rahila that my father had gone to meet your father- Aman Sahib."

"Yes I am and I also know that he had gone to meet him at your prompting. Following which a rather hassled Aman Sahib went over to meet Shivhari ji posthaste!"

"Why? Why did he go to meet Shivhari ji?"

"Because he cares as much for Vyoma as he does for me. Aman Sahib has played a pivotal role in defining the goalpost Vyoma has set for herself. Besides, Aman Sahib is aware of the emotional bond which exists between Vyoma and you."

"But that chapter is now over."

"Only as far as you are concerned. It doesn't stand closed as far as Vyoma is concerned. It is besides the point that she will not object if you stop meeting her or associate with someone else or formalise your new relationship in a marriage. However, Vyoma is clear that she is not prepared to enter into the sort of union you expect. I think you should respect her feelings."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"The truth is, I do respect her a great deal. She is really a complete woman and lacks nothing although I am afraid I don't quite understand her point of view. However, I respect my own life equally and I must have the freedom to lead my life according to my understanding and convenience."

"You decidedly do and no one is denying you that right."

"It may be my misconception but there are times when this thought flashes through my mind and disturbs me – is Vyoma's behaviour dictated by the difference in our religion?"

"What are you saying Firoze! It seems as if you have never really tried to reach her perceptions and ideology. You are caught in a sort of narcissistic and romantic frame of reference."

"I believe that ideology doesn't hamper emotional bonds whereas they may be affected by religious faith. That is the basis of my suspicion."

"I think that it depends on the strength of emotional bonding existing between two people. But let me make this clear that faith or religion are as meaningless to Vyoma as they are to me. Actually it was your view coloured by religion which prompted you to send your father to meet my father Aman Sahib. You would have had to resort to a more complex strategy if Aman Sahib had professed a different faith."

"I think you were squarely responsible for the strategy when you spoke to me about how you can't stop thinking about me."

"What would be your response if I tell you that I responded the way I did just to assess your feelings towards Vyoma?"

"In that case I will hear you out. But I must say I am shocked by the things you've just mentioned although I can't say they have hurt me. It is almost as if I am getting used to your volleys or perhaps I have become immune to virus of you people!"

"Don't become so immune as to lose your sensitivity altogether. But I can't get over the fact that you brought the issue of religion in this discussion."

"Look Rahila, I am not a religious man by any standards but I can't separate the accident of my birth, my upbringing, the family atmosphere from my personality and nor do I think it is necessary to do

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

so. This must be as true for you as it is for me and for Vyoma as well. I don't see anything wrong about it either."

"You see nothing wrong in it? That is indeed contradictory. Why don't you consider it wrong if your religion casts a shadow on your emotional relationships either consciously or unconsciously and affects them negatively? This is the problem Firoze that on the basis of such suspect arguments we try to prove the rationale of our faulty conceptions and lull ourselves into being satisfied. Unknown to us, the virus of social destruction enters within us and settles down comfortably. It is possible that what you say is true and that is why I wonder – can truth be innocent and harmless all the time?"

XXX

"Sophie Madam, there is a notice from the High Court addressed to you and I have been ordered to present you and Lachhma in the court tomorrow."

"I understand that but please show me the notice. I can see that it has been served at the behest of Lachhma's husband."

"He has accused you of keeping Lachhma unlawfully as a bonded labour. I am acquainted with the entire matter so I have forwarded my report but the order has to be followed all the same. I request both of you to be ready by ten in the morning. I will come and pick you up. I am sure Lachhma would be able to face the court and give evidence properly, please don't worry."

"Thank you. I think in a way it is good that Lachhma'c husband lodged a complaint. Lachhma, you will have to speak the truth bravely. I will tell you how to."

"I will tell everything. I am no longer afraid of anyone. But I am sorry you are being dragged to the court because of me."

"Hey, don't let that bother you. Taking help from the courts is part of our job. It is true that thus far this responsibility was shared by all my colleagues but this warrant is in my name therefore I take it as an opportunity to learn. Actually the judgements pronounced by higher courts on cases of human rights violation are quite encouraging here."

XXX

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"You there, why don't you want to go back to your home and your husband? Who has pressurised you to do so?"

"____"

"Hey, why don't you speak? Folding your hands won't help."

"Sir this is the first time she has seen a court. She is terrified-please speak to her gently."

"Does it look as if I am trying to whip her? And who are you?"

"Sir, my name is Sophie and I have also been summoned."

"In that case you should speak only when you are asked. You haven't been invited here to interrupt the proceedings of this court."

"Sir, on behalf of my client I would like to point out that this girl is unable to answer your questions and the way Miss Sophie is answering on her behalf only goes to prove our case. This girl is completely under the influence of Miss Sophie and has been made to leave her house per force."

"Your turn will also come Mr Counsel, but for now let this girl give the evidence."

"My lord – I left of my own will. This Madam here did not pressurise me."

"But why did you leave? You don't leave your husband's home for nothing."

"He hit me every day and on that night he stripped me naked and threw me out of the house. He put electric wires…"

"There must be a reason behind his behaviour. Never mind – I don't think you can speak freely today. You have been with this madam for such a long time so your mind is affected. I am giving a date three days from now. You are an adult so you will be sent to Nari-Niketan – a woman's home. That way you would have all the freedom to speak independently after reflecting and thinking things thorough and clearly."

"Sir, please permit me to say something for just one minute."

"Look Miss Sophie, this court is not poised against you but if you continue to interrupt like this, you will weaken your case. In the next hearing, you may give your account in writing. You will be given the chance to say what you want to say."

CC-0.Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"I am very grateful your honour. I only wanted to request your honour to read the Police report."

"What Police report? There is no report filed by the police. Who told you about the report in any case?"

"The In- charge your honour."

"Oh so you already have contacts with the police! Alright, we will get the Police report on the next hearing but before you leave, do let me tell you something I consider important."

"Certainly your honour."

"You have come to work in a country where people are far less fortunate than in your own. Considering this, they should be grateful to you but you would be well advised to be realistic and keep a few things in mind. There are thousands of girls and women just like this girl here who are both uneducated and guileless. The need for family is basic to them. Without a family they are like a kite which has been cut lose. They fly in the open sky till the winds are favourable and then they are forced to drop on the ground. I am sure you have seen with your own eyes what happens to a kite which lies on roads. It is trampled upon and then trashed. Please don't mislead them into dreaming of a life similar to your own. There is wide disparity between the two and a gaping valley in between. However hard they may try, they can never cover the distance between the two ends. You will have to take the responsibility for its outcome."

"I am afraid I can't agree with you sir. Your assessment is based on where you stand and therefore it is your point of view. If you stand in her position your…"

"This court has no desire to waste its time on such worthless arguments. Please report on the due date."

XXX

"Hey, Sophie, you look very dejected."

"Shivhari ji I am not just dejected I also feel defeated. There is no way I will run away from what I am up against but I do doubt my capability and the chances of my emerging successful."

"It is perhaps because you expect success in areas which are beyond your control."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"If that is the criterion then everything we trust and believe in would become elusive. We live in an era where we can't do things at an individual level. There is bound to be some sort of interdependence."

"That's true and by those standards success should be measured by degrees of interdependence. In any case there is no other criterion we can employ. The judiciary is not dependent on you but you are totally dependent on it. Based on this equation you have zero chances of success. I am certain that you are acquainted with the theory of probability – aren't you?"

"That is strange. Isn't a citizen of this country supposed to trust in his/her basic rights as sanctioned by the constitution? Is the value of an individual's freedom so insignificant that the judiciary which is the custodian of constitution can deny an innocent girl's right to retain her personal freedom?"

"I am afraid that is particularly so when a woman seeks recourse in a law court. She can be made to go to a mental asylum to get a certificate declaring that she is mentally sound and may also end up behind bars on the pretext of being offered protection."

"But, why?"

"Because it is essential for one to be alert and in full control of one's senses before one can testify in the hallowed temple of justice. You have to do so under oath and if a court thinks that your oath is not good enough, he can order you to undergo psychological tests to prove you are mentally stable. There is no harm in that and I won't blame a judge who resorts to such a practice. After all, his intention is to give an impartial and just verdict. Why do you look so irritated?"

"Right now I am irritated by your face which is completely devoid of emotions and expressions. I can't decide whether you are really serious or just being sarcastic or........."

XXX

"Sophie Madam, my name is Gautam and I am the Junior Engineer of the road development scheme of this block."

"And I understand the rest. You have come to find out about Lachhma, right?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"Actually I know that Lachhma has been sent to Nari-Niketan a home for women which is more like a prison. It makes me feel bad. If there is anything I can do to help her, I would be glad to. I can speak to a good lawyer if you like."

"There is no need for that. We have gathered to discuss this matter and two of the best lawyers are here with us. But thanks all the same. Vyoma, do come here please. Have you met this gentleman? He is the JEN and a well wisher of Lachhma. What did you say your name is?"

"Gautam."

"Tell me Gautam ji, don't you think you are largely responsible for landing Lachhma in this situation?"

"That is a possibility so I won't deny it. But it explains why I am here and why I feel guilty."

"Look Vyoma, there are two distinct and separate things at play in this case. Gautam ji is certainly responsible If his action is offensive-however the people who are chiefly responsible for Lachhma's situation are her husband and the sitting judge. The judge has interpreted and defined the law in the most pervert manner."

"But Sophie can we forget that if this gentleman had not shown such unseemly sympathy towards Lachhma, her husband may not have behaved so appallingly."

"I don't agree with this. We must not stretch theory of causation to extreme and gratuitous extent. Otherwise we will end up making a never-ending chain of causes. By that logic Lachhma's working on the roads would be a reason, her being born would also be a reason as would that of her parents and her parents' parents who gave birth to them and so on till we reach the primates and beyond the primates. Trying to find the beginning of a cause is deceptive. The real reason is which is immediate. Regardless of what I can or cannot do, I refuse to exonerate Lachhma's husband or the judge from their responsibilities."

"I accept your contention if not on the basis of your arguments then on the grounds of your passionate belief. So Gautam ji please tell us truthfully -what did you think of Lachhma and why did you pay undue attention to her. Once we are clear on this we can determine your role."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"I will speak the truth. I was attracted to her. Her innocence and the raw beauty of her guileless face were inviting. Her forthright demeanour and her youth drew me like a magnet."

"Please don't try your poetry on us. I know why guys like you are attracted to women like Lachhma. Sophie has probably written dozens of such case studies as part of her thesis. Poor and deprived women are always seen as easy preys. A show of sympathy, enumerating her qualities, using epithets- all these are ploys used by a hunter. It looks as if you are never short of words. My suggestion is- be direct and cut out the fluff."

"Indeed, I am being forthright and direct. I have honestly come here to offer my sympathy and help. Why are you trying to intimidate me and why are my intentions suspect?"

"That is it. Now you have spoken like a true male. I am convinced you are here to help. But tell me, how do you intend to help? We can't take any money from you and in any case right now Lachhma does not need any arrangement for bail and even if she did, you can't be making it. That will establish your connection with Lachhma further and be noticed by all. Just one more thing – are you married?"

"No."

"Apart from Lachhma, is there any other woman in your life?"

"No."

"That sounds nice. Being able to lie smoothly is an essential quality of manliness. Alright, please tell me if you can make a lifelong commitment to Lachhma in the way known as living together relationship?"

"I have no faith in this type of institution. In any case, I want you to know that my feelings towards Lachhma have always been unsullied. I never took advantage of her poverty or exploited her helplessness. My relationship was completely pure and platonic."

"Wow! That sounds great! But please tell me, if we help Lachhma to get a divorce from her rogue of a husband will you marry her? Don't look thunder struck! Relax, reflect and then answer."

"That is just not possible."

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"Is it because of your family and the society at large?"

"My family is unlikely to object and I don't care too much about what the society thinks. However, I can't overlook reality. I understand enough to foresee a future based on the current scenario."

"What sort of future do you foresee?"

"The difference in social and financial standing is bound to create a divide between Lachhma and me. If I marry her I will always feel that I have done her a favour. Once passion has cooled off I may even find her presence burdensome. I am an ordinary person- not an ascetic or saint or for that matter a love struck Romeo. I can also see that Lachhma would be incapable of giving the children born of this union the upbringing we are accustomed to in the middle class milieu. I am a man and would still make my space in the society but what will happen to Lachhma? I say this out of concern for her that such a marriage would be disastrous."

"Well done Gautam Sahib! You are perfectly suited to hold the position of an engineer working on road building schemes here in this country. You know that the roads will soon crumble due to the poor quality of material you have used. It is clear that the material of your selfless and pure love is also similar. However, if you still want to help there is now only one option available. I hope you find it acceptable."

"Most certainly. Just tell me."

"When Lachhma returns to work on the site a few days later, we will gather all the labourers in one place. People from our organisation will also be there. Please join us then, won't you?"

"Sure, I will, but what do you want me to do?"

"You have seen Lachhma's face, her demeanor and her youth. You may also have noticed her feet and the locally made shoes she wears. All you have to do is to permit her to hit you a few times with her shoes. We will coach her on the lines she should speak. In addition we will advise her not to apply oil on her shoes on that day. By doing this she will recover her lost respect to a large extent. Besides, it will prove conclusively that she had no role to play in the disrepute she earned because of you."

XXX

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"Aman Sahib, I need to speak to you on something special."

"Go ahead Shivhari ji, every word of yours is an order as far as I am concerned."

"Hey, you are the one who passes orders since you are a part of the administration. I only make requests. There are times when I wonder whether Rahila is indeed your daughter."

"Why are you saying so? Have I made a grave mistake?"

"Can't you see that Rahila is running a school against great odds? Although she works really hard she has few resources and no time for herself. At this age she should be leading a relatively carefree and easy life – don't you feel responsible as her father?"

"I accept I am to be blamed, but aren't you a father figure as well? Is your responsibility restricted to scolding me and then getting away?"

"No it is not. But what can I do? I don't work for the government whereas you hold an important and senior position in the most vital government department."

"Even you can do much if you so desire. All you have to do is to give a mere nod to the Minister of Education- he will then go out of his way to support the school."

"You know only too well that I can't do that."

"Of course I know Shivhari ji. That is why I want to bow at your feet in adulation. The truth is I don't even want you to. All I want you to know is that I can't go against my nature either. My action is not motivated by great honesty or moral turpitude. I just can't make claims to that. If anything my reticence could well be the result of my cowardice."

"That is perhaps true. We are tormented by the aggression shown by others and the cowardice displayed by ourselves. Don't you think that the fabric of our political and social system is made with the warp and woof of terror and moral spinelessness?"

"Terror is the bedrock of every system. In this respect society follows the laws of nature. Our bodies also function within the structure of a system. When there is something amiss with the system, we feel pain, or discomfort or fall ill. Thanks to this terror, we try to maintain

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

optimum health. Just think, if we suffered no pain when there was some problem with our bodies, would we still be alert to its needs and remain healthy?"

"Your argument sounds interesting at the outset but what is true for the body doesn't inevitably apply to the society. Our bodies are organic and biological whereas the society we live in is created by us. It is true that so far the state and society have both sanctioned and nurtured terror through the ages but I don't subscribe to the view that in the absence of terror a society or a state cannot survive. If we actually seek change which is pro people we will have to believe that it is possible to break all the chains of terror. In the absence of this trust we can neither sustain our belief nor continue our struggle. The recurrence of failures cannot be considered a reliable test and then there is anti-terrorism as well. How would that fit in with your analogy of the body?"

"Who won't appreciate this belief, Shivhari ji? But in the process of making this argument you have sidelined Rahila's school which is why you were here in the first place. Let me make this clear, I can neither arrange any financial support for her venture nor do I have enough money to offer her some. I can say this without pride or embarrassment that whatever other sins I may have committed, hoarding money isn't one of them."

"I wasn't thinking about money. What I meant was sparing more time for her. You can certainly visit her school as a guest speaker and adviser. I am confident that our mere presence will give Rahila enough strength to organise funds on her own steam for the school."

"I think finding time for her should be possible. However, I wonder if my presence will be misconstrued to mean that I am using my position to advance her interests."

"Don't confuse matters. If people are determined on making allegation, they still can. Let us get cracking. I never liked that bit about Lord Ram where he abandons Sita because of a washer man's insinuation."

❑ **49, Vivek Nagar, Station Road, Jaipur**

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पराधीनता मुक्ति का दिन

नंद चतुर्वेदी

यह हमारा दिन है पराधीनता मुक्ति का
वे हमारे देश में खाता बही लेकर आये थे
होठों पर कुटिल हँसी, सलाम करने वाले
हम थोड़े दिन बाद ही दुखों से पीले पड़ गये
हमारे खेतों की अंतड़ियाँ नज़र आने लगीं
हमारे करघों पर सतरंगी चादरें अधबुनी रह गयीं
हम हारे नहीं थे तब भी
तब अपराजित स्वप्न हमारे पास थे
हमारा अपना देश था अपने लोग
अपना मरण पार का जीवन
हमारी आत्मा में भारत रमा था
प्रचंड पुरुषार्थ वाले जनगण
हम सब साथ थे
समुद्र की उत्ताल, विद्रोहिणी तरंगों जैसे
साथ रहकर ही लड़ा था स्वाधीनता का समर
कितने कठिन दिन हैं स्वाधीनता के
कभी धुँधले होते हैं शिखर, कभी अनंत रोशनी से चमकते
कभी मिलते हैं प्रश्नों के उत्तर
कभी जान दे देनी पड़ती है, प्रश्न पूछने वालों को
कभी लगता है समय अपरिचित, अनात्मीय, हिंसक, आततायी
कभी सौम्य, उदार, आत्मीय, मृदुभाषी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कभी सब लगते हैं ताकतवर धक्का-मुक्की करते
सभी जगह फैले पसरे
कभी सब लगते हैं उदास, कंधों पर फटा कम्बल डाले दीन
कभी असीम आशा के दौड़ते रथ पर बैठे
स्वाधीनता कहती है
मुझे परिभाषित करो
यदि मैं तुम्हारा सपना हूँ तो मैं तुम्हारा यथार्थ भी हूँ
तुम्हारा रोज खटखटाती हूँ दरवाजा
तुम्हारा घर आँगन मेरी संसद है
यहीं भटकती रहती हूँ तुम्हारी यातनायें लेकर
मैं तुम्हारी इच्छा शक्ति हूँ
तुम्हारी विजय की अकुंठित कामना।

❑ 30, अहिंसापुरी, उदयपुर (राज.)

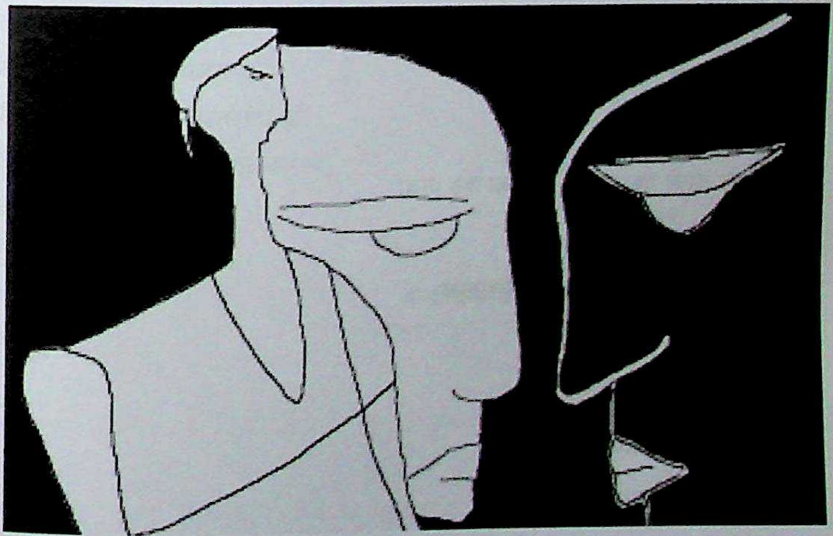

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बड़ा आदमी

राजीव कुमार स्वामी

इन कुछ सालों में
घर में बहुत कुछ आता गया
आराम और देखा-देखी का हर सामान
और देखते-देखते वह बड़ा आदमी बन गया
धीरे-धीरे उसमें से आदमी कम होता गया
और वह केवल बड़ा रह गया
इतना बड़ा कि अब दो चार दिन की छुट्टी
कम पड़ने लगी
यह जानने के लिए
कि माँ के चश्मे का नम्बर कितना बढ़ गया
है
और घर के खाने में नमक इतना कम
क्यों है?
माँ का मोतियाबिंद
और बाबूजी का बीपी
कभी नहीं जान पाया
बड़ा आदमी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सीख

एक छोटे बच्चे को पढ़ाते हुए
यूँ ही ध्यान आया
कि बरसों बाद जब वह लौटेगा
एक काबिल इंसान बनकर
पाँव छूकर मेरा आशीर्वाद लेने
तो मैं उसे क्या सीख दूँगा
मैंने सोचा
मैं कहूँगा
सदा ईमानदार रहना
और जरूरतमंदों की मदद करना
दुनिया में एक चीज है प्यार
बहुत कम लोग जानते हैं
उसे बरतना
और मैं उसे प्यार की अंतिम सीख दूँगा
तभी मैंने महसूस किया
मुझे बनना है ईमानदार
मदद करनी है जरूरतमंदों की
और सीखना है प्यार को बरतना
सीख देने के लिए

❑ स्नातकोत्तर शिक्षक, हिंदी
केन्द्रीय विद्यालय चूरू, (राज.) पिन - 331001

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ज़िद्दी अहंकार

सतीश गुप्ता

कितनी ही लक्ष्मण रेखाओं के
गए होंगे हम तुम पार
जाने कितनी बार
संभवतः छलना के पीछे
या शायद तृष्णा के पीछे
लेकिन पार नहीं कर पाए
सात रंग की एक डगर
जब कि न थे हमारे बीच
सात आसमान या सात दीप
सात लोक या सात सागर
था तो हमारे तुम्हारे बीच
हमारा जिद्दी अहंकार
इन्द्रधनुष के सात रंग भी
देखे गए न उससे
बह न गए हमारे तुम्हारे अहम
कुछ कह भी न पाए थे आपस में हम
आखिर उसने बंद कर दिया
हमारे प्यार को एक खत्म किताब की तरह
जिसमें कैद होकर रह गयी है
महकती भोर, बतियाती दुपहरी
प्रतीक्षारत साँझ
और रात का पीछा करता बेसुध दिन।

❑ के 221 यशोदा नगर
कानपुर 208011 (उ.प्र.)
मोबा. 09793547629

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संडे मार्केट

हरदान हर्ष

इस महानगर में
अटा पड़ा है बाजार
जहाँ हर आदमी का कद
उसके बाजार और ब्रांड से है।
चौंधियाते बाजार का
खुला न्यौता है
अंकित मूल्य पर स्वयंवर का।
मेलों के बाजार का आदमी
रेशमी कालीन पर टाट सा
बंद मुट्ठी निकल जाता है
मायूस पूरे बाजार से।
संडे को दिन के उजास में
फुटपाथ पर नई पुरानी चीजों के
चलते-फिरते साप्ताहिक बाजार में
वह खोजता है अपने घर की
खुशियों का साजो सामान।
बाजार के भाव से वाकिफ
खुशी का मुखौटा ओढ़
वह देखता रहता है-
पत्नी क्या खरीद रही है
एक साड़ी की कीमत में तीन?
प्रफुल्लित बिटिया क्या चाट रही है
दो रुपये के आइसक्रीम भरे कोन में?

❑ ए-306, महेश नगर
जयपुर - 302015

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संवादधर्मिता साक्षात्कार का सौन्दर्य है

डॉ. सुशील सिद्धार्थ

साक्षात्कार अत्यंत लोकप्रिय और उपयोगी विधा है। पाठक यह अनुभव करता है जैसे वह किसी रचनाकार के सामने बैठकर उससे बातें कर रहा है। उपयोगी इसलिए कि इसमें रचनाकार के 'अंतः साक्ष्य' मिलते हैं। इन साक्ष्यों से रचना संसार को समझने में मदद मिलती है। विद्वान् आदि विधा के नाम पर कहानी या कविता का नाम लेते रहते हैं। मुझे लगने लगा है कि संवाद भी साहित्य की आदि विधा है। कोई भी प्राणी सबसे पहले अपने अकेलेपन को समाप्त करना चाहता है। गालिब जब कहते हैं- 'रहिये अब ऐसी जगह चल कर जहाँ कोई न हो, हरसुखन कोई न हो और हमज़बाँ कोई न हो' तो उनकी त्रासदी समझी जा सकती है। यह असामान्य मनोदशा है। सामान्य स्थिति यह है कि मनुष्य किसी की बात सुनना चाहता है, किसी से कुछ कहना चाहता है। संवाद सभ्यता और संस्कृति का बीज रूप है। इस संवाद और साक्षात्कार ने न जाने कितने रूप बदले हैं, जाने कितने नामों से स्वयं को व्यक्त किया है। आधुनिक साहित्य में साक्षात्कार को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। बातचीत, संवाद, आमने-सामने या कुछ और नामों से साक्षात्कार पत्र पत्रिकाओं में छपते हैं. . . . खूब पढ़े जाते हैं।

कुछ पत्रकारों और लेखकों ने साक्षात्कार लेने की कला को एक रचनात्मक हुनर बना लिया है। उन्हें पता है कि किस लेखक से बात करने का सलीका क्या है। संवाद एक सलीका ही तो है। साक्षात्कार का सौन्दर्य है संवादधर्मी होना। . . . ऐसी अनेक विशेषताएँ सुधा ओम ढींगरा द्वारा लिये गये साक्षात्कारों में सहज रूप से उपलब्ध हैं। 'वैश्विक रचनाकारः कुछ मूलभूत जिज्ञासाएँ' में मौजूद साक्षात्कार इस विधा की गरिमा को समृद्ध करते हैं। समर्पित रचनाकार सुधा ओम ढींगरा बातचीत करन में दक्ष हैं। वैसे भी जब वे फोन करती हैं तो अपनी मधुर आवाज से वातावरण सरस बना देती हैं। जीवन्तता साक्षात्कार लेने वाले का सबसे बड़ा गुण है। बातचीत को किसी फाइल की तरह निपटा देने से मामला बनता नहीं। सुधा जी को इस विधा में दिलचस्पी है। उन्होंने अनुभव और अध्ययन से इसे विकसित किया है। वे ऐसी लेखक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं, जिन्हें टेक्नोलॉजी [illegible] के लिए आमने-सामने होने के अतिरिक्त उन्होंने फोन, ऑनलाइन और स्काइप का उपयोग किया है। बल्कि आमना-सामना अत्यल्प है। इससे कई बार औपचारिक या किताबी होने का संकट रहता है जो स्वाभाविक है। .. . . लेकिन यह देखकर प्रसन्नता होती है कि सारे साक्षात्कार जीवन्त और दिलचस्प हैं।

अमेरिका, कैनेड़ा, इंग्लैण्ड, आबूधाबी, शारजाह, डेनमार्क और नार्वे के साहित्यकारों से सुधा जी के प्रश्न सतर्क हैं। साहित्यकारों ने भी सटीक उत्तर दिये हैं। यह पुस्तक पाठकों की ज्ञानवृद्धि के साथ उनकी संवेदना का दायरा भी व्यापक करेगी। वैश्विक रचनाशीलता की मानसिकता को यहाँ लक्षित किया जा सकता है। ऐसी पुस्तकें हिन्दी में बहुत कम हैं। शायद न के बराबर। विश्व के अनेक देशों में सक्रिय हिन्दी रचनाकारों के विचार पाठकों तक पहुँचाने के लिए हमें सुधा ओम ढींगरा को धन्यवाद भी देना चाहिए। हिन्दी में कुछ विशेषज्ञ रहे हैं जो साक्षात्कार को रचना बना देते हैं। सुधा जी को देखकर .. . उनके काम को पढ़कर और इस विधा के विषय में उनके विचार जानकर उनकी विशेषज्ञता की सराहना की जानी चाहिए।

इस पुस्तक के लिए श्रेष्ठ रचनाकार और संवेदनशील संवादिया सुधा ओम ढींगरा को बहुत-बहुत बधाई। शुभकामनाएँ। यह भरोसा है कि वे अपनी इस यात्रा को अनुद्घाटित दिशाओं में ले जाएँगी। 'वैश्विक रचनाकारः कुछ मूलभूत जिज्ञासाएँ' को पढ़कर प्रवासी लेखन कह कर अनेक लेखकों को हाशिए पर ढकेलने की प्रवृत्ति भी कम होगी।

पुस्तक : वैश्विक रचनाकार : कुछ मूलभूत जिज्ञासाएँ (साक्षात्कार)

लेखिका : सुधा ओम ढींगरा, **प्रकाशन** : शिवना प्रकाशना, सीहोर (म.प्र.)

संस्करण : 2013, **मूल्य** : 250 रुपये

❏ बी-2/8बी, केशवपुरम, लारेंस रोड, नई दिल्ली

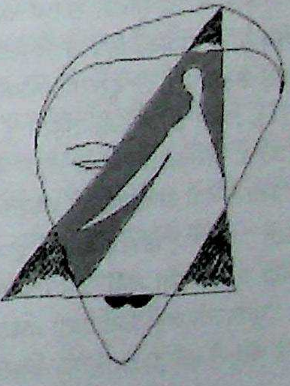

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्त्री समस्याओं की कहानियाँ : समकालीन स्त्री गल्प

नीतू शर्मा

संसार में युद्ध हो या शान्ति हर परिस्थिति में सबसे ज्यादा प्रभावित महिलाएँ व बच्चे ही होते हैं। महिलाओं की ढेरों समस्याएँ हैं जो कि उनके बाहर काम करते समय की हों या घर के भीतर की हों, वे सब ऐसी हैं जिनके दर्द और उत्पीडन को बयान करना व समझना आसान नहीं है। फिर महिलाओं के बारे में पुरुषों ने ही ज्यादा लिखा है। उनका अपना नजरिया है।

''समकालीन स्त्री गल्प'' सोलह महिला कथाकारों द्वारा लिखी गई कहानियों का वैविध्यमयी संग्रह है। इस पुस्तक की कहानियाँ महिलाओं की दृष्टि से महिला समस्याओं को तो व्यक्त करती ही हैं साथ ही वर्तमान प्रशासनिक व राजनीतिक समस्याओं पर भी प्रकाश डालती हैं। शिशुपाल सिंह 'नारसरा' ने इस कहानी संग्रह में महिलाओं द्वारा विविध विषयों पर लिखी गई कहानियों को समाहित किया है।

इन्दिरा दाँगी की कहानी 'मोहल्ले की सड़क' किसी भी आम मोहल्ले के जीवन की झलक देती है। साथ ही वर्तमान लचर प्रशासनिक व्यवस्था का चित्रण भी करती है। मोहल्ले में सड़क खुदी पड़ी है और पानी व कीचड़ से लोग परेशान व बदहाल हैं। लेकिन जिम्मेदार अफसर लोगों की परेशानी का ध्यान न रखते हुए एक दूसरे पर दोष मढ़ते हैं और लोगों को टरकाने का प्रयास करते हैं। जब चौबेजी ने प्रार्थनानुमा लहजे में शिकायत समस्या सुनाई तो अधिकारी साहब खड़े हो गये, बोले ''देखिए, आप लोग गलत जगह आ गये हैं, ये प्रोजेक्ट अब से मैं नहीं दूसरा अधिकारी देखेगा। . . .. अच्छा नमस्कार।'' मैं उसे सहता हूँ .. . . दूसरा अधिकारी कहता है . . . . वो ऐसा है! .. . . . वैसा है! भ्रष्ट है! . . . . कष्ट है। मैं उसे सहता हूँ काम तो आपका वही दुष्ट करेगा। अगर चाहेगा तो! अच्छा नमस्कार। इसी तरह नीलिमा टिक्कू की कहानी 'नियुक्ति' भी राजनीतिक, प्रशासनिक भ्रष्टाचार को व्यक्त करती है।

कहानी ''पुकारती जडें'' कश्मीर विस्थापितों व शरणार्थियों के दर्द को बयान करती है। व्यक्ति अपनी जड़ों को छोड़ना नहीं चाहता। क्योंकि उसका वजूद अपनी जड़ों पर ही निर्भर होता है। ''पुकारती जड़ें'' में पिता कश्मीर में अपना मकान बेचने को तैयार नहीं है और अपने बेटे से कहता है- ''बेटा फिर कभी अपना घर बेचने की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
बात मत करना जब तक घाटी में हमारा घर है तब तक वहाँ पुनः बसने की आस है, एक बार घर बेच दिया तो हमेशा-हमेशा के लिए अपनी जड़ों से उखड़ जायेंगे।''

राजनीतिक प्रशासनिक समस्याओं के साथ ही कुछ कहानियाँ महिला समस्याओं व सामाजिक कुरीतियों को व्यक्त करती हैं। डॉ. अनुसूइया की कहानी ''मनोहर की बेटी'' भ्रूण हत्या जैसे कुरीति व सामाजिक बुराई को तो व्यक्त करती ही है साथ ही महिलाओं की लाचारी, विरोध का साहस नहीं कर पाने को चित्रित करती है। मनोहर की पत्नी पढ़ी लिखी है, नौकरी करती है लेकिन जो एक बेटी नहीं चाहती, उसकी बात का विरोध करने का उसमें साहस नहीं है। यह कहानी एक ऐसे मोड़ पर पहुँचती है जहाँ मनोहर को अपनी गलती का अहसास होता है। किन्तु सवाल उठता है कि इस तरह गलती को स्वीकारने वाले लोग समाज में कितने हैं?

गीतांजली चटर्जी की कहानी (आईना पिघल उठा) ऐसी लड़की ''लाटी'' की कहानी है जिसके गीत मन मोहने वाले हैं लेकिन यह योग्यता उसके विवाह के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि वह सुन्दर नहीं है। अतः बडी उम्र होने पर भी उसका विवाह नहीं हो पा रहा। वो अपनी सहेलियों को शादी के बाद देखती है तो उसका मन भी सुन्दर कपड़े पहनने व सजने-धजने का होता है। यह हमारे समाज की विसंगति है कि शादी के लिए योग्यता आज भी सुन्दरता ही है चाहे लड़की गुणों की खान ही क्यों न हो। अफसोस कि वह सुन्दर नहीं तो उसके गुण भी उसे खुशी नहीं दे पाते। हमारे रीति रिवाजों व सामाजिक नियमों ने हमें कहीं अन्दर तक ऐसे जकड़ रखा है कि उत्पीडन के बावजूद महिलाएँ इस जकड़ को ढ़ीला नहीं करना चाहती हैं। डॉ. लता अग्रवाल की कहानी ''सिन्दूर का सुख'' व डॉ. सुदेश बत्रा की कहानी ''इसके बावजूद'' कुछ इसी भाव को व्यक्त करती हैं।

डॉ. मृदुला झा की कहानी ''झुमकी की उड़ान'' आशावादी कहानी है जिसमें एक गरीब घर व नीची जाति की लड़की कलेक्टर के पद तक पहुँचती है। अपनी माँ की दृढ़इच्छा शक्ति से झुमकी के सपने साकार होते हैं। साथ ही उसकी मेहनत, लोगों की सहायता व सरकारी योजनाओं का भी लाभ उसे मिलता है। यह एक सकारात्मक सोच की कहानी है।

इस तरह कहानी संग्रह की कहानियाँ विविधता लिये हुए हैं। जो वर्तमान परिवेश की समस्याओं, महिलाओं की मन स्थिति, राजनीतिक सामाजिक व प्रशासनिक विसंगतियों को भी व्यक्त करती हैं। ''समकालीन स्त्री गल्प'' केवल कहानियों का संग्रह मात्र नहीं है बहुत सी कहानियाँ ऐसी है जो हमें कुछ सोचने पर मजबूर करती हैं। इन कहानियों में हमें अपने आस-पास के वातावरण की झलक मिलती है और हम इनसे जुड़ते जाते हैं। यही जुड़ाव संपादक के श्रम को सार्थक करता प्रतीत होता है।

पुस्तक : समकालीन स्त्री गल्प (कहानी संग्रह)

संपादक : शिशुपाल सिंह 'नारसरा', **प्रकाशक** : मोनिका प्रकाशन जयपुर

संस्करण : 2012, **मूल्य** : 225 रुपये मात्र

❑ सी-98, हस्तिनापुर कॉलोनी, लालरपुरा, गाँधी पथ (पश्चिम), जयपुर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पत्रकारिता के अछूते प्रसंग

डॉ. रेखा गुप्ता

एक लेखक व्यक्तिगत सुखानुभूति के लिए अथवा सामाजिक प्रतिबद्धता के लिए लिखने को जहाँ पूर्णतः स्वतंत्र होता है वहीं एक पत्रकार केवल स्वान्तःसुखाय लिखकर अपने सामाजिक दायित्व से विमुख नहीं हो सकता। उसे समाज से जुड़ना ही होगा। आत्मपरकता के लिए साहित्य में स्थान हो सकता है, पत्रकारिता में नहीं। पत्रकार के लिए कलम उठाने से पूर्व तमाम स्थितियों की जानकारी और उनकी प्रामाणिकता की जाँच पड़ताल अनिवार्य होती है। एक अच्छा पत्रकार बिना किसी दबाव के तटस्थ होकर पूरी प्रामाणिकता के साथ जन-समस्याओं को सबके सामने लाता है।

इस पुस्तक में पत्रकारिता से जुड़े पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। समाचार पत्र और जन समस्याएँ, आजादी की लड़ाई में पत्रिकाओं की भूमिका, साहित्यिक परिवेश और काशी, खोजी पत्रकारिता और पीत पत्रकारिता में अन्तर, नारी जागरण में पत्र पत्रिकाओं का महत्व आदि विभिन्न विषयों को संकलित किया गया है। साथ ही इसमें 'काशी की हास्य पत्रिकाओं की जानकारी' 'आयुर्वेद से जुड़ी पत्रिकाएँ', कला पत्रिकाओं की असामयिक मौत, नवगीत नई कविता से भारी है, रचना के अँधेरे पक्ष को आलोकित करती है आलोचना, प्रकृति और पर्यावरण पर गुरु शिष्य संवाद जैसे नवीन जानकारी वाले लेख तथा अनेक जाने-अनजाने लेखक पत्रकारों का परिचय एवं उनसे जुड़ी ऐसी जानकारियाँ जिनसे प्रायः आम जनता परिचित नहीं होती है, दी गई है जिनको पढ़कर हम वाकई पत्रकारिता के अछूते प्रसंगों से परिचित होते हैं।

हिन्दी पत्रकारिता की अनमोल धरोहर पुरानी पत्रिकाओं के व्यवस्थित संग्रह की ओर हमारा ध्यान कम हो जाता है। क्योंकि हमारे यहाँ ऐसी कोई परम्परा दिखाई नहीं देती है। प्रायः वे व्यक्तिगत सम्पत्ति बन कर रह जाती हैं और उनका लाभ आमजन को नहीं मिल पाता है। लेकिन लेखक ने बनारस के 'भारत कला भवन' में अनेक पुरानी पत्र-पत्रिकाओं के संग्रह का न केवल स्वयं अवलोकन कर उसकी प्रशंसा की वरन् उसका इस पुस्तक में नामवार उल्लेख कर पाठकों को लाभान्वित होने का अवसर प्रदान किया। आपने बताया कि यहाँ कवि वचन सुधा का पहला अंक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(सं. 1928), ''मित्र'' साप्ताहिक (सन् 1945), काशी से प्रकाशित, ''आज समाचार पत्र (सं. 1977) का काशी से प्रकाशित पहला अंक, ''रणभेरी'' हस्तलिखित (सन् 1930) समाचार पत्र संगृहीत है जो दुर्लभ होने के साथ साथ ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भी है।

आजादी की लड़ाई में जिन पत्र-पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा उनका उल्लेख भी इस पुस्तक में किया गया है। सरस्वती, माधुरी, हंस, ब्रह्मण, प्रदीप, त्यागभूमि, भ्रमर, रणभेरी, चाँद का फाँसी अंक आदि की स्वतंत्रता आँदोलन में विशेष भूमिका रही है। सस्ता साहित्य मण्डल अजमेर की पत्रिका ''त्यागभूमि'' का लक्ष्य ही नारी जागरण था। महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, बालकृष्ण शर्मा नवीन, सुभद्राकुमारी चौहान आदि ने अपने लेखों में राष्ट्रीय चेतना और नारी जीवन के भारतीय स्वरूप को सुरक्षित रखा है।

साहित्यिक गतिविधियों का केन्द्र रही काशी और बरेली से निकलने वाली विभिन्न पत्रिकाओं की जानकारी और वहाँ के लेखकों, साहित्यकारों, पत्रकारों का परिचय निश्चय ही हमारे ज्ञान में अभिवृद्धि करने वाला है। भारतीय चिकित्सा प्रणाली 'आयुर्वेद' के ज्ञान को दर्शाने वाली अनेक पत्रिकाओं तथा हास्य व्यंग्य की पत्रिकाओं का भी उल्लेख किया गया है।

''कला पत्रिकाओं की असामयिक मौत'' शीर्षक लेख में बताया गया है कि किस प्रकार अनेक पत्रिकाएँ निकलीं और बन्द हो गईं। ''रूप शिल्प (इलाहाबाद)'' कला और कलाकार (नई दिल्ली) तूलिकांकन (काशी), कला त्रैमासिक (उत्तर प्रदेश राज्य कला अकादमी लखनऊ) ने कला सृजन और उसकी समीक्षा का दायित्व अपने कंधों पर लिया किन्तु कभी अपेक्षित पूँजी और कभी पर्याप्त साधन सहयोग के अभाव में दम तोड़ दिया।

इस पुस्तक को पढ़ कर जहाँ यह पता चलता है कि पत्रकारिता का क्षेत्र कितना श्रमसाध्य और चुनौती भरा होता है, राष्ट्रनिर्माण में उसकी कितनी महत्वपूर्ण भूमिका होती है, वहीं इसके लेखों में तारतम्यता का अभाव खटकता है। कहीं राष्ट्रीय स्तर के लेखक की बात होती है तो उसके बाद लोकगीत की चर्चा, कहीं शान्ति अग्रवाल (व्यक्तिगत परिचित कवयित्री) की चर्चा है तो उसके बाद राजस्थान शैली में रामचरितमानस की पाण्डुलिपि की। क्रमबद्धता का अभाव वैचारिक एकाग्रता में बाधा डालता है अन्यथा प्रयास सराहनीय है।

पुस्तक : पत्रकारिता के अछूते प्रसंग

लेखक : हरिशंकर शर्मा

प्रकाशक : श्वेता बुक एजेन्सी 83, शिव कॉलोनी, राजगढ़ रोड़, पिलाणी (राज.)

मूल्य : 350/- पृष्ठः 191, **संस्करण** : प्रथम 2014

❑ प्राध्यापक हिन्दी, कानोडिया महिला महाविद्यालय, जयपुर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जीवन की बहुविध रंगतों का कोलाज

सवाईसिंह शेखावत

'लिखना कि जैसे आग' राजस्थान प्रशासनिक सेवा के अधिकारी एवं वरिष्ठ कवि विजय सिंह नाहटा का द्वितीय काव्य-संकलन है। उनका पहला संग्रह 'है यहाँ भी जल' 2007 में प्रकाशित हुआ था। अजीत फाउन्डेशन बीकानेर द्वारा आयोजित छह संभावनाशील कवियों के रूप में उन्होंने अपनी कविता की शुरूआत की। सभी महत्वपूर्ण पत्र पत्रिकाओं में' प्रकाशित कवि विजय सिंह नाहटा की कविताएँ 'कल हमारा है', 'दर्पण', 'सेतु', 'दूर कही' जैसे समवेत संकलनों के अतिरिक्त राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 2011 में प्रकाशित मधुमती पत्रिका के 'कविता से कविता तक' विशेषांक में भी शामिल की गयीं। भारतीय कवियों के 'मृत्यु' विषयक संचयन में उनकी कविताएँ सम्मिलित हुई। कबीर नेरूदा, रिल्के, आक्टोवियो पाज, बिस्साव शिम्बोर्स्का, नामवर सिंह, अज्ञेय, शमशेर के रचनात्मक अवदान को समर्पित यह काव्य-कृति उन्होंने अपने बड़े भाई साहब डॉ. बाबूलाल नाहटा, अनुज कमल नाहटा, प्रदीप नाहटा, जीवन संगिनी अंजू नाहटा एवं बेटे पुलकित और उदित को भी समर्पित की है।

दो सौ सौलह पृष्ठों के भरे-पूरे कलेवर वाले इस संकलन में नाहटा जी ने जीवन के लगभग सभी संदर्भों को छुआ है। जीवन की बहुविध रंगतें यहाँ देखते ही बनती हैं। लेकिन इस संग्रह की सर्वोपरि विशेषता है अनंतरूपा प्रकृति का विरल निरूपण- जो इन दिनों कवियों की दुनिया से लगभग नदारद हो चला है। प्रकृति के जीवन्त चाक्षुष बिम्बों की सघनता के अतिरिक्त इस संग्रह की दूसरी उल्लेखनीय विशेषता है कवियोचित दार्शनिक जिज्ञासाएँ। जो जीवन, जीवन-उत्स, उसके सृजनधर्मी आयाम, उसकी बहुविध रंगतों और अनिवार्य संवेद्य अहसास का उद्घाटन कराने के साथ-साथ जीवन से जुड़े जरूरी अध्यात्म का भी साक्षात कराती हैं। इन कविताओं में जीवन-यथार्थ और उर्वर कल्पना का अद्भुत सामंजस्य है। कवि स्मृति, स्मृति-दृश्य, जीवन-संदर्भ, दार्शनिक प्रश्नाकुलता रहस्यमयी प्रकृति और अपने चिंतन को कविताओं में बड़ी कुशलतापूर्वक गूँथ कर प्रस्तुत करता है। इस संग्रह में रचना-प्रक्रिया बाबत भी एक कविता है और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सृजन को *'उषाः एक गाँठ/जो प्रकाश रश्मियों के तीव्र, सघन/संपुजन से पिघलती है रेशे-रेशे में/दिवसः अज्ञेय स्वर्ण द्वारों से मौन पहचानों/के साथ अदृश्य में होता है प्रविष्ट'* कहा गया है।

लिखने की वजह में जाते हुए कवि अपनी पहली ही कविता में कहता है: *लिखना/अमूर्त-अव्यक्त की अनखुली खिड़की के पट खोल देना/अनंत के विराट आँगन में/जहाँ से भूदृश्य साफ-साफ दिखाई देता है/एक परिक्रमा पथ : तैरती हुई वस्तुएँ/जहाँ एकदम अविचल हैं।* और यह भी कि : *लिखना/जैसे आग/प्रज्वलित हर रक्त में, चैतन्य में/हरेक मानव हृदय की दीवारों में महफूज/समान चरित्र, गुण, धर्म वाली आग।'* कवि आश्वस्त है : *तुम्हारे पास अभी भी शेष है चिंगारी।* नाहटा जी के काव्य-वैभव को अपने समूचे संवेद्य अनुभव में आत्मसात करने के लिए इस संग्रह की *'बन्द घर की आत्मकथा'* शीर्षक कविता को अवश्य पढ़ा जाना चाहिए। जहाँ दीवारों से सट कर डरे-सहमे से अभी भी खड़े हैं मौसमों के जीवाश्म, आधे-अधूरे प्रेम-उपन्यासों के जर्द पन्नों की धूमिल पड़ चुकी इबारत पर तैरती है निर्वासित जीवन की अलस, परछाइयाँ। गर्द ढके रसोईघर में अब भी बचा है किसी प्राचीन सुबह पकाये पकवानों का आस्वाद और ललचाई नजरों से उन पर झपटती हैं/ताजादम मांसपेशियाँ। बन्द घर में बिखरे अज्ञात यायावर परिन्दों के सप्तरंगी पंख-गुमसुम से डूबे हैं किसी की याद में-जिनके सिरहाने, सुब्हो-शाम सुस्ताते हैं अनंत छवियों वाले वासन्ती इन्द्रधनुष। बन्द घर में दबे हैं अतीत की किसी प्राक्-सभ्यता के आदिम चिन्ह। खण्डित होते समय की दरदराती दीवारों पर जाले-सी टँगी घटनाएँ। स्मृति के सींखचों के पीछे गहरे-दर-गहरे कैद हैं अब भी एक चहचहाता खिलखिलाता घर। स्मृति को जीवनानुभव में बदलती और जीवनानुभव के जरिए स्मृति को खोजती यह कविता निश्चय ही अनूठी है और अतिशय मर्मस्पर्शी भी। *'जीवन'* शीर्षक कविता में कवि कहता भी है : *ओ मेरे जीवन/पूरी हार्दिकता से मैं तुम्हारे /उत्कर्ष की अतल गहराइयों में/उतरना चाहता हूँ।*

जीवन यथार्थ की खोज में वे वेगवती नदी के खामोश पुल पर झुकी कमर के साथ सरपट चलते आदमी की पीठ पर लदे पूरे पृथ्वी के भार को महसूस करते हैं और पाते हैं कि सब तरफ भारहीनता के बावजूद गरीबी का अजीब-सा गुरुत्वाकर्षण पेट और पीठ को रसातल की ओर खींचता है- अभाव और दैन्य के अराजक साम्राज्य में। कोलकाता जैसे बड़े शहर की विकरालता के आगे भी वे दुबली जिजीविषा, छोटे-छोटे विश्वास, कातर कामनाएँ, लघुकाय संकल्प, मलिन बस्तियों के चबूतरों पर थरपे हुए कुल देवी-देवता और लघु चींटियों की लयबद्ध पंक्तियों को तरजीह देते हैं। इसीलिए सन्नाटे में बोलते समय की अनुगूँज को सुन कर वे कह पाते हैं कि : *बस... गति है...गति है....गति है........./ हाय यह कैसी अति है/जीवन के उर्वर आँगन में/रचना की कैसी दुर्गति है?* वे उस जीवन के तलबगीर हैं जो लपट की तरह ऊर्ध्वतर उठ क्षण का ऐसा आलोक-पर्व बनता है जिसके आगे युग-मन्वन्तर नत हो जाते हैं। उनकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जिज्ञासा उन्हें वहाँ भी ले जाती है जहाँ ईश्वर धरता होगा अतीत का कबाड़ काल के तहखाने में और उस आगार की ओर भी जहाँ वह गढ़ता होगा कविता सुनहले भविष्य की। अलबत्ता वे यह कहने से भी नहीं चूकते कि *पहले तुम भटक जाते थे राह ईश्वर की अब तुम्हें गढ़ना है अपना ईश्वर।* नोटिस वे इस बात का भी लेते हैं : मार्च की ठहरी-सी दुपहर में/सुनसान बस-स्टॉप की काली लौह कुर्सियों पर/बैठा है एक बूढ़ा आदमी हाथ में थामे समय की अनश्वर छड़ी। यहाँ देह के अनुमोदन के बाद वासना का शिथिल पल है, तो बारिश में खुले अंग नहा रही सयानी लड़की की चिंता करती माँ भी। वे कब्र पर लिखी इबारत से झरते शब्दों को देख पाते हैं तो जेठ में आकुल तड़पते थार को भी, जिसके आतप से कभी तो डोलेगा विधाता का सिंहासन। उनके काव्य-दृश्य में साँभर झील में नीचे नमक बीनती औरतें हैं, रश्मियों से आच्छादित आकाश का घोंसला है, बादलों की अंतहीन दीवार पर सोने की नक्काशी है, थिरकन बनी हवा की अँगड़ाई है, यहाँ-वहाँ हवा में थिर विचार हैं जो पत्तों में हरेपन-सा घुला है। काली-पीली धूल-धूसरित आँधी से त्राहिमाम थार है, तो झरता समय भी जो भर गया आकाश के डैनों में। और यह अफसोस भी कि कोई खबर मानवीय न थी। यहाँ किसी होने में मुझे धारण करो आशय से दृष्टा से की गयी याचना है, अंतहीनता के छोर पर बैठा नश्वरता का सूत कातता बूढ़ा बुनकर है तो पश्चिमी आसमान में डूबता तारा भी। जीवन समर में पैर थाम अंगद-सा अड़ने और काल के समक्ष खड़े होने का हौसला है तो कविता को हवा में तैरते काल का जीवंत प्रस्तर लेख मानने का संकल्प भी।

पत्थर को लपट करती पोर-पोर में फैलती आग है तो रेत के हर कण में पिता की पदचाप चीन्हती सिहरन भरी स्मृति भी। अपनी एक कविता में वे पूछते हैं - *यदि यह एक सुबह है तो/यह किसका अनुवाद है?* और यह भी कि : *फिर यह शाम किसका पुनर्पाठ है?* वे हर बार अपने आपको कविता की किसी पंक्ति में विन्यस्त पाते हैं और अपनी अस्मिता से जूझते हुए प्रश्नाकुल भी? उन्हें इस बात का भी इलहाम है कि *स्थानापन्न जैसा कुछ नहीं होता/एक प्रेम नहीं कर सकता दूसरे प्रेम की जगह/एक क्षण की गाथाएँ नहीं पिरोई जा सकती/किसी दूसरे क्षण में/शिशिर में वहीं बर्फ नहीं गिरती हर बार।* जर्मन कवि हंस माग्नुस एन्तसेन्सबेर्गेर के काव्य-संग्रह 'भविष्य संगीत' से गुजरते हुए उन्हें लगता है कि *बहुत मूल्यवान चीजें/अक्सर उस वक्त/भुला दी जाती है/जब उनका कोई मूल्य/मुकर्रर नहीं किया जा सकता।* अंत के समय वे समग्र अस्तित्व को पुकारा कर कहते हैं कि *'मेरे साथ रहो।'* और यह गहरी प्रश्नाकुलता भी कि : *अंत के समय/किस अदृश्य आगार में विलीन होता अंत/किस अनाम जनपद से/लौट-लौट आता जीवन।*

नाहटा जी की कविता में दमकती रोशनी है तो स्याह अँधेरा भी। नम पौधे हैं तो सुलगती चिंगारी भी। भव्य अट्टालिकाएँ हैं तो निस्तेज मलिन बस्तियाँ भी। धरती का हरियाला आँचल है तो धधकता थार भी। अनंत आकाश है तो रसातल और कन्दराएँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भी। अमरत के सिद्धान्त हैं तो मृत्यु के जनपद भी। समय की शव-यात्रा है तो बचे रहने का आश्वासन भी। सुख-दुख, हर्ष-विषाद, आसक्ति-वैराग्य, आत्म-अनात्म, अनादि-अनंत सभी कुछ जिससे जीवन-दृश्य बनता है। उनकी तत्सम बहुला भाषा में अभिजात प्रबोधन है जो कहीं अज्ञेय तो कहीं शमशेर की याद दिलाता है। लेकिन अपने ही विरल स्मृति सौंधेपन के साथ। लगभग सभी कविताओं में नाहटा जी ने स्मृति का सधा और सलीके भरा इस्तेमाल किया है। देश-विदेश के ख्यातनामा कवियों के पाठ को याद करते हुए भी उन्होंने अच्छी और मौलिक कविताएँ सिरजी हैं। पुस्तक की छपाई, बाइन्डिंग गेट-अप बोधि प्रकाशन की गरिमा के अनुरूप है। आवरण चित्र का सृजन स्वयं नाहटा जी का है जो उनके कला-कर्म के एक और आयाम का उद्घाट्न है।

पुस्तक : लिखना कि जैसे आग कविता-संग्रह

कवि : विजय सिंह नाहटा

प्रकाशन : बोधि प्रकाशन, बाईस गोदाम, जयपुर

संस्करण : 2013

❑ 7/86, विद्याधर नगर जयपुर-302023

मोबाईल 09636298846

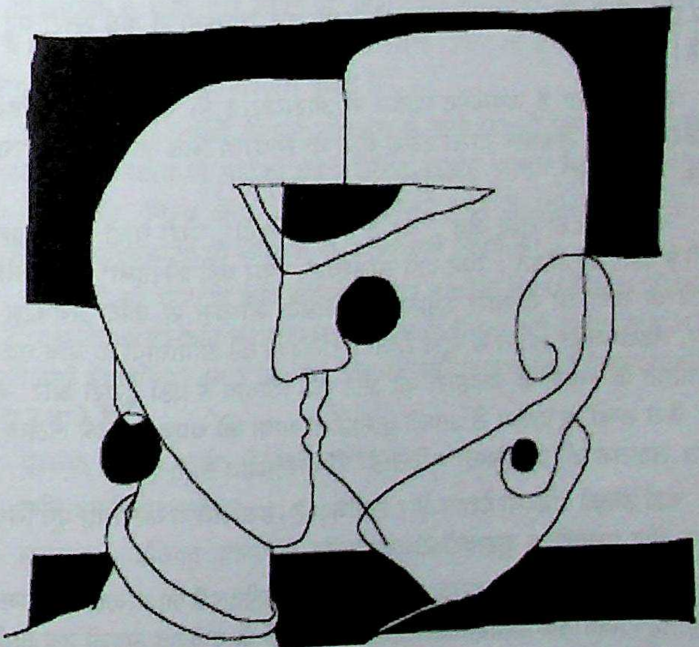

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पहाड़ी लोक संवेदना की कविताएँ

डॉ. एकता गोस्वामी

कपिलेश भोज की कविताएँ पाठक वर्ग में अपनी जगह बनाती जा रही हैं। कपिलेश उस धारा के कवि हैं जिसमें कवि अपने लोक के जीवन, लोक संस्कृति और भाषा व अन्य उपादानों को भी कविता में जीने की कोशिश करता है। 'यह जो वक्त है' के बाद 'ताकि बसंत में खिल सकें फूल' की कविताएँ इसी का उदाहरण हैं। उत्तरा खण्ड का लोक जीवन, उसकी भाषा और संस्कृति वहाँ के बर्फीले गर्वीले उन्नत शिखर, छल छलाती नदियाँ और सरसराते पेड़, जंगल इस संग्रह की कविताओं में सजीव हो उठे हैं।

वस्तुओं, लोगों और संवेदनाओं के झंझावातों के बीच अपने अतीत के प्रति निरंतर एक खोज और उसका वर्तमान से जुड़ाव इन रचनाओं में कई स्तरों पर व्यक्त होता है।

'जब पहुँचता हूँ गवर्नमेंट गार्डन में/और/करता हूँ/ वहाँ की पगडंडियों पर चहलकदमी/अपने मेजबान दोस्त रमेश बोरा के साथ/तो मिट जाता है/ 42 साल का फासला/ मिनटों में .. . . . . (चौबटिया के पथ पर)।

'कहो, कैसे हो रानी खेत', 'यह है बौरा रौ घाटी', 'मेरी यादों का लखनाडी', 'कहती है पहाड़ की औरतें', 'फिर वही सोमेश्वर', 'फिर वही कौसानी' आदि कविताओं में कवि के यादों की वे सारी स्मृतियाँ हैं जिनके माध्यम से कवि अनवरत अपने बचपन, लड़कपन के अतीत से जुड़ा रहता है। जिंदगी की आपाधापी के बीच एक तरफ जहाँ अतीत के उन लोक व्यवहारों की ओर एक खिंचाव है वहीं दूसरी ओर 'नराई', 'इजा' जैसे शब्दों के प्रयोग से अपनी कुमाऊँनी भाषा को थपथपाने की ललक भी है। जो इस संकलन की प्रारम्भिक कविताओं में परिलक्षित होती है।

यहाँ उनकी संवेदना देशज और स्थानिक है। इसलिये ये कविताएँ पूर्व निर्धारित, प्रचलित और प्रामाणिक मुहावरों से अलग हैं।

परन्तु पहाड़ के दूसरी तरफ, कवि का वर्तमान जीवन है जो तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक व्यवस्थाओं से निरंतर जूझने के बावजूद अपनी उन अतीत की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मृतियों को धुँधला नहीं होने देता। और इस तरह चलता रहता है उनके जीवन जीने का सिलसिला। अपने पहाड़ी जीवन के अनुभवों से उन्होंने 'सीखा है बंजर पड़ती धरती को हरियाली से भरने का मुश्किल हुनर'।

इसी उल्लास को कवि बचाए रखता है। 'मण्डी हाऊस से लौटते हुये', श्रीराम सेंटर के बाहर खड़े-खड़े, इस महानगर की अंजान दुनिया के रास्तों के बीच-बीच में जिन्हें वह उदासी का समंदर मानता है। उसे इसी धैर्य, जीवटता से पार करने का पक्का इंतजाम भी रखता है। इन बीहड़ पथों पर चलते हुए कवि आशा रूपी बीज बोता जाता है ताकि बसंत में फूल खिल सकें।

पहाड़ों के दोनों तरफ की इस जीवन यात्रा में संवेदनाओं की उत्तरोत्तर सीढ़ियों पर वह पाठकों को अपना सहचर बनाता चलता है। इन गुजरे हुए रास्तों के सहयात्रियों में जिनमें उसके गुरुजन, मित्र, सहचर, माँ, बहन और खो गये बेटे का वर्णन है, बरबस ही पढ़ने वाले की आँखों में आँसू ले आता है।

एक संवदेनशील व्यक्ति जितना व्यक्त होता है, उससे कहीं अधिक अव्यक्त रहता है। अव्यक्तता के इन्हीं भावों के साथ कवि पाठकों को अपने साथ बहा ले जाता है।

इसी बीच कवि 'कविता के प्रति अपने दायित्वों से भी पूरा सरोकार रखता है।' 'कविता का साथ', 'समीक्षक का कमाल', 'जो सिर्फ कविता में जलाते हैं मशाल' जैसी कविताओं में कवि इसे व्यक्त भी करता है। कविताओं की भाषा रोजमर्रा की भाषा है। आप हर शब्द का अर्थ प्राप्त कर सकते हैं। फिर भी इन्हें संपूर्णता में समझने के लिए आपको सोचने की जरूरत पड़ती है।

छोटी बड़ी कविताओं के इस संलकन में कवि अपनी निरन्तर परिपक्व और प्रौढ़ होती काव्य यात्रा से पाठकों को परिचित कराता चलता है। इन कविताओं में अनेक रंग, भाव, बिम्ब और अनुभूति हैं जिन्हें कवि ने अपने जीवन के विविध अनुभवों और कल्पनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

जन कवि की धारा के कवि कपिलेश भोज शब्दों के शिल्प के पीछे जो व्यक्तित्व गढ़ते हैं, वह रोचक है। कवि की संवेदना पर समकालीनता और उसके साथ अनायास आ जाने वाले विषयों का दबाव जो अर्थ और स्वरूप ग्रहण करते हैं वे इस संकलन को पठनीय बनाते हैं।

पुस्तक : ताकि वसंत में खिल सकें फूल

कवि : कपिलेश भोज

प्रकाशन : अंतिका प्रकाशन, **मूल्य** : 230 रुपये

❑ प्राध्यापक

राज. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चिमनपुरा (जयपुर)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पत्र-संवाद

अन्तरीप का अंक मिला। मेरी दृष्टि में पत्रिका का वैचारिक पक्ष अभी कमजोर है। वैचारिक-पक्ष शोध-सामग्री के उत्तेजना रहित दबाव में है। दोनों वामपंथी संगठनों ने हाथ खड़े कर दिये हैं। अधिकांश अकादमियाँ श्री-हीन हो गयी हैं या साहित्य की उर्वरा-भूमि की तलाश करने की जगह लालच की चरागाहें बन गयी हैं।

लघु पत्रिकायें अपनी आर्थिक हिफ़ाजत करती हैं, लेकिन अपने लेखकों को पारिश्रमिक देने की चिंता तो दूर रही चर्चा तक नहीं की जाती।

अभी हुए जयपुर में लघु पत्रिका सम्मेलन की 'रपट' पढ़कर मुझे बहुत निराशा हुई। वह सम्मेलन किसी वैचारिक दृष्टि के अभाव में कोई ऐसा प्रस्ताव तक पारित नहीं कर सका जिससे राजनीतिक या सांस्कृतिक या कि अकादमिक इलाकों में हलचल हो सके। यह ध्यान में रहे कि जब तक जयपुर नहीं गरमाता दूसरे इलाके भी ताप रहित रहते हैं।

नंद चतुर्वेदी
30, अहिंसापुरी, उदयपुर (राज.)

❖ ❖ ❖

'एक और अंतरीप' अंक 8 प्राप्त हुआ। बहुत-बहुत आभार। 'एक और अंतरीप' का संपादकीय- 'लघुपत्रिका आंदोलन की जरूरत' लघुपत्रिका के प्रकाशन, प्रबंधन और संपादन से जुड़ी तमाम तथ्यपरक स्थितियों से अवगत कराता है। लघुपत्रिकाएँ और कुछ कर सकें या न कर सकें, लेखकीय जिवीविषा को अकाल मरने नहीं देतीं। लघुपत्रिकाओं की प्रासंगिकता, चिन्ता, संघर्ष इन सबसे अलग-अलग उनकी नियमितता और दीर्घजीवन अनिवार्यतः अभीष्ट है। यहीं पर आकर लघुपत्रिका का संयोजन दम तोड़ देता है। इसके लिए लघुपत्रिका को एक आंदोलन की दृष्टि रखनी होगी। सम्भवतः आप मेरी इस बात से सहमत होंगे।

'अनन्तिम' के प्रवेशांक प्रकाशन के समय और उसके बाद हमारे साहित्यिक शहर कानपुर में बहुत उहापोह थी। पत्रिका चलेगी, नहीं चलेगी, दो चार अंकों के बाद दम तोड़ देगी आदि-आदि। जब तमाम बड़ी पत्रिकाएँ काल कवलित हो चुकी हों तो यह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पतली सी पत्रिका कब तक चल सकेगी। लेकिन अब परिस्थितियाँ एकदम उलट हैं। 'अनन्तिम' अपने 18वें अंक की तैयारी में है। 'घायल की गति घायल जाने और न जाने कोय' आपसे और अपनी स्थिति कहाँ तक बयान करूँ। 'एक और अंतरीप' की साहित्यक सजधज, प्रस्तुति सादगी पूर्ण खूबसूरती का अहसास कराती है। यह खूबसूरती बढ़ती जाए सौन्दर्य की तरह, बस इसी शुभकामना के साथ।

सतीश गुप्ता

के-221, यशोदा नगर, कानपुर-20811 (उ.प्र.)

❖ ❖ ❖

आपके द्वारा सम्पादित की जा रही (मानव मुक्ति को समर्पित त्रैमा.) एक और अन्तरीप पत्रिका के सम्बन्ध में जानकारी हुयी हृदय अत्यन्त प्रसन्न हुआ। आप समर्पित भाव से हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु कार्य कर रहे हैं। यह आपका सराहनीय प्रयास है। हिन्दी को ऐसे ही समर्पित साहित्यकारों की आवश्यकता है जो अपने प्रयासों द्वारा उसे ऊँचाइयों तक पहुँचाये। अर्थ के इस युग में हिन्दी के प्रति आपका समर्पण भाव निश्चित ही हिन्दी को नयी दिशा प्रदान करेगा। आपका यह प्रयास सभी साहित्यकारों के लिये प्रेरणास्रोत बनेगा। ऐसा मेरा विश्वास है। मेरी शुभकामनाएँ आपके साथ हैं।

डॉ. पवन शंखधार (कवि)

मो. नेकपुर सि.ला., बदायूँ-243601 (उ.प्र.)

❖ ❖ ❖

अत्र कुशलम् तत्रास्तु के पश्चात् वृतान्त यह है कि मैंने आपकी गरिमामयी व प्रतिष्ठित पत्रिका 'एक और अंतरीप' के विषय में 'समय-सुरभि-अनंत' पत्रिका में पढ़ा। अपार हर्ष एवं गौरव का अनुभव हुआ। मैं आपकी पत्रिका का नियमित सदस्य/पाठक बनना चाहता हूँ कृपया मार्गदर्शन करें। धन्यवाद।

जगदीश चन्द्र वर्मा 'अनंत'

सैनिक स्कूल घोड़ाखाल, पो.आ. घोड़ाखाल (नैनीताल-उत्तराखण्ड)-263156

❖ ❖ ❖

पत्रिका का अंक मिला। हृदय से आभार। कहानी प्रकाशित हुई अनुगृहीत हुआ।

पत्रिका आपके कुशल संपादन का पारदर्शी आइना है। इसमें सन्देह नहीं। कवर पेज पर केदारनाथ की विभीषिका का सजीव अंकन ध्यानाकर्षण करने वाला है। साथ ही विधि विग्रह की पंक्तियाँ प्रकृति के यथार्थरूप को सामने रखती हैं। उनकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कविता हृदय को छूती हुई सोचने को विवश करती है। माधव नागदा की कहानियों पर आपका अनुसंधान परक विश्लेषण संवेदनाओं के धरातल की पड़ताल करता है, साथ ही नागदा जी के प्रदेय को रेखांकित करता है। "आत्मवत सर्वभूतेषु" कहानी के आधार पर मैं आश्वस्त हूँ कि उनकी कहानियाँ इस मूल्यांकन की अधिकारी हैं। भारत यायावर का आलेख भी द्विवेदीजी के व्यक्तित्व के उदात्त पक्ष पर प्रकाश डालता है।

पत्रिका की सभी कविताएँ एक सुखद एहसास कराती हैं। हृदयस्थ भावों की सुन्दर अभिव्यंजना, इन कविताओं में विद्यमान है। सभी कहानियाँ संवेदनाओं को जगाती है।

एक अच्छी पत्रिका के कुशल संपादन के लिए आपको बधाई। आशा है भविष्य में भी अच्छे-अच्छे अंक पढ़ने को मिलेंगे। आशा और विश्वास के साथ।

माधव अग्रवाल

प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, आर.डी.पी.डी. कॉलेज, जहाँगीराबाद, बुलन्दशहर

❖ ❖ ❖

अबके सावन जब हमने देखी 'एक और अंतरीप'
विधि विग्रह के काव्य से जले अंतर्मन के दीप

भौतिकता के शिखर पर जब मानव करे बिछौना
नियति ने बतला दिया तू है तुच्छ और बौना

कुदरत का यह कहर क्यों इतना हुआ घिनौना
जैसे बालक रूठकर तोड़े अपना ही खिलौना

विधि विग्रह ने प्रलय पर मारे शाब्दिक तीर।
सहसा मन को यूँ लगा जी उठे दास कबीर।

और आगामी अंक में, छा गये आसाराम।
कलयुग के इस संत ने, की मर्यादा नीलाम।

बगुले के मानिंद यह, करता काले काम।
आडम्बर जीवन भर रचकर, अंत में डूबा नाम।

पिता-पुत्र ने राष्ट्र में, छेड़ा कुत्सित संग्राम।
हे हरि ऐसे निर्लज्ज़ों को, दे दो पूर्ण विराम।

जितेन्द्र झीबा

ग्राम-लाम्बा हरिसिंह, जिला टोंक (राज.)

❖ ❖ ❖

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'एक और अंतरीप' का अप्रेल-जून-13 अंक, इस अंक हेतु धन्यवाद। पिछले अंक से मैं वंचित रह गया। उसमें हसन जमाल पर लेख था। अकादमी से हसन जमाल का मोनोग्राफ मैंने लिखा है। आवरणों पर कुँवर नारायण की कविता पढ़कर उन पर विजेन्द्रजी के विचारों की सहमति की इच्छा होती है। लघु पत्रिकाओं पर प्रेमकृष्ण शर्मा का प्रधान संपादकीय और साहित्यसमाचारों में श्री कृष्ण शर्मा की रपट मिलकर एक कथ्य बनते हैं। श्री कृष्ण शर्मा की रपट में डॉ. हेतु भारद्वाज को सात पैरेग्राफ दिये हैं। यह अति नहीं है। उनका कथ्य सब पर भारी है। डॉ. अजय अनुरागी के माधव नागदा पर लिखे मूल्यांकन परक लेख में नागदा की कहानियों का वैविध्य तो आया है, वैशिष्टय नहीं इसी तुलना में श्रीराम बड़कोदिया का लेख दुर्बल है वे हेतु भारद्वाज की कहानियों के साथ न्याय नहीं कर पाये हैं। माधव नागदा अच्छे कहानीकार हैं, उनकी पॉजिटिव कहानी देनी थी। डॉ. रजनीश भारद्वाज की कुमार शिव से बातचीत सघन व सार्थक तो है ही, रचनात्मक आनन्द देने वाली है क्योंकि इसमें कुमार शिव के उत्कृष्ट उत्तर व उनकी कविता के बीज शब्द आये हैं। यह साक्षात्कार पढ़कर हमें राजस्थान के गीताकारों पर गर्व होता है। पिछला अंक हसन जमाल की कहानी व उन पर लिखे (अजय अनुरागी के?) लेख से समृद्ध हुआ था। यह अंक उनकी आलोचनात्मक प्रतिभा प्रमाणित करता है। वे आलोचना में भी उतने ही दो टूक हैं। भारत यायावर से यह सीखा जा सकता है कि किसी बड़े लेखक पर कैसे लिखा जाता है। उन्होंने रवीन्द्र और महावीर प्रसाद द्विवेदी की पारस्परिकता को भली भांति सिद्ध किया है। डॉ. नरेन्द्र इष्टवाल भारतेंदु पर लिखते हुए उस ऊँचाई पर नहीं पहुँचे हैं। इष्टवाल से ज्यादा न्याय डॉ. सुमन कँवर ने सुरेन्द्र वर्मा के आकलन में किया है। डॉ. सुमन कँवर समकालीन पर लिखती हैं, भारत क्लासिकल में जाते हैं तो डॉ. रजनी चतुर्वेदी का पड़ाव मानस है, (यद्यपि गहराई नहीं है), जब भी मैं हिन्दीतर कहानी पढ़ता हूँ जैसे इसमें गुजराती कहानी है वह हिन्दी पर भारी पड़ती है। तस्नीम की ''जनशताब्दी एक्सप्रेस'' यात्रा वृतान्त है। डॉ. आशु की कहानी ''कामरेड की मौत'' का अंत (शीर्षक को सिद्धाने वाला) भला है और नया है, शेष इसमें नया क्या है? 'यातना' तो कहानी है ही नहीं, एक चिंतनमात्र है। कविताओं पर कुछ नया उपज नहीं रहा है और समीक्षाओं की समीक्षा इसलिए नहीं कर रहा हूँ कि अजय तो मुझे आलोचना की भी आलोचना करने वाला मानते ही हैं।

हितेश व्यास

1-मारुति कॉलोनी, नयापुरा, कोटा-324001 (राज.)

❖ ❖ ❖

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'एक और अंतरीप' को तन्मयता पूर्वक आद्योपान्त पढ़ा। अत्यधिक सारगर्भित, पठनीय एवं संग्रहणीय सामग्री का चयन आपने किया। एक साथ आलेख, यात्रा संस्मरण, कहानियाँ, लघु कथाएँ, कविता, समीक्षा, वार्तालाप आदि विभिन्न विधात्मक पाठ्य सामग्री को प्रस्तुत करना निश्चित ही तारीफ-ए-काबिल है। समस्त पाठ्य सामग्री अच्छी लगी। आपके सम्पादकत्व में पत्रिका साहित्यिक जगत में अपनी विशिष्ट पहचान बनायेगी, इसमें कोई संदेह नहीं।

डॉ. आदित्य कुमार गुप्त

कुश कुटीर, तिरुपति नगर, भैंसादो मण्डी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)

❖ ❖ ❖

जुलाई-सितम्बर-13 अंक सहेजा। बातचीत में वार्ताकारों ने कविता के छंद-पक्ष पर कम चर्चा की। केवल ऋतुराज जी, विजेंद्र जी और नंदबाबू के आस-पास अधिक घूमे। आलोचक एक-एक कवि को पकड़े बैठे हैं, ऐसे में 'ईमान' मुसल्लम रह पाएगा, कैसे कहें? श्रम का गुणगान करने वाले, न कवि, न आलोचक श्रम की प्रायोगिकता से दो चार हैं।

डॉ. हेतु भारद्वाज की पुस्तक की समीक्षा, उनका स्वयं को महिमाता यात्रा-वर्णन और उनको ताऊ से सम्बोधती 'कुलदीप शर्मा' की कथा किंचित् एकाधिकार की अतिक्रमता से सुविन्यस्त लगी। 'दो गायों का कत्ल' कहानी 44 पंक्तियों तक ताऊ का अप्रासंगिक गुणानुवाद करती है, वास्तविक कथा 45वीं पंक्ति 'पिछले दिनों पं. चंद्रप्रकाश......... से शुरू होती है, कहानी सचमुच सच्ची है, अच्छी है, दलितों की दूरदर्शी बुद्धि का परिचय देती है।'

डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल का यात्रा-ब्यौरा, श्री अंबिकादत्त, प्रीता भार्गव की कविताएँ, लघुकथाएँ और विधि-विग्रह का लीलापद अत्यंत पठनीय हैं। राम के देवों, आशा के रामों पर ही 'बाबा' नामक गजल में ये सब ब्यौरा एक वर्ष पूर्व ही मैंने 'सीमा-संदेश' के रविवारीय अंक में लिखा था।

बहुत ही कसा हुआ और उत्कृष्ट अंक है। हाँ लीलापद में 'स्वाँगी तथा माँगी' की तुक स्थाई तुक से भिन्न होने के कारण खारिज है।

सलीम खाँ फ़रीद

हसामपुर-332718 (सीकर-राज.)

❖ ❖ ❖

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ठीक हो जाएगा सब

किसी को कुछ पता ही नहीं चलेगा
तब काहे का बलात्कार?
कैसा बलात्कार??
कब, किसके साथ बलात्कार???
धीरे-धीरे सब ठीक हो जाएगा
देह से मिट जाएँगे
खरोंचों के निशान
आँखों से लगातार ओझल
होता जाएगा वह कामांध चेहरा

घर चाहता है वह अपना घाव
किसी को नहीं दिखाए
पौंछ ले अपनी आँखें
अच्छी तरह धोले योनि
कुछ दिन नहीं निकले घर से
रही बलात्कारी की बात
उसे दण्ड देने के लिए ईश्वर है न?

पवन करण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पंजीयन संख्या 36/ए.एल./92-टी.सी.

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आवरण एवं रेखाचित्र : जहाँगीर कुरैशी

लीला पद

साधो! ऐसी भूख हमारी।
चरत रहत दिन रात निरंतर खावत भरि-भरि थारी।।

लोहा पचि जाय, पत्थर पचि जाय, पचि जाय खान दुधारी।
सीमेंट के कट्टे पचि जावें, तऊ न तृष्णा हारी।।

पचि जाय बाँध-नहर का पानी याकी माया न्यारी।
बिजली को पुड़िया में बाँधें, खा जायें बिना बिचारी।।

बजरी-रेत हैं कत्था-चूना, रोड़ी बनी सुपारी।
सड़क पान की तरह चबाई, तऊ न भूख डकारी।।

चारा चरि-चरि तोंद बढ़ाई, करि पशुअन की ख्वारी।
चरागाह मंदिर माफी की भूमि दबाई सारी।।

कूआ खाये, बोरिंग खाये, खाये बाघ शिकारी।
तोप, तमंचा, टैंक खा गये, फाइल खायीं भारी।।

स्पैक्ट्रम खा राजा बन गये, गाहक बने भिखारी।
औरत खायीं, बच्चे खाये, खायी किरकिट सारी।

कह विधि विग्रह बना पंजीरी, खायी हरियल क्यारी।
फिर भी भूखे हाय-हाय कर उमर बितायी खारी।।

विधि विग्रह

प्रकाशक-मुद्रक प्रेमकृष्ण शर्मा के लिए
श्री पद्म कम्प्यूटर सेन्टर, 2212, किशनपोल बाजार, जयपुर द्वारा मुद्रित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सम्पादक : डॉ. अजय अनुरागी, डॉ. रजनीश भारद्वाज, प्रधान सम्पादक : प्रेमकृष्ण शर्मा